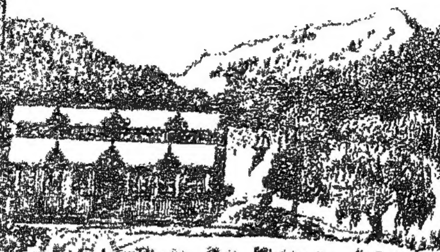




शैतानकी आँख

राहुल सांकृत्यायन

किताब महल
इलाहाबाद

R17

द्वितीय संस्करण—१९४५
तृतीय संस्करण—१९४६

प्रकाशक—किताब महल, ५६-ए, जीरो रोड, इलाहाबाद
मुद्रक—मगनकृष्ण दीक्षित, दीक्षित प्रेस, इलाहाबाद

सूची

This book
not
but
Na

एक भूल सूचना पेज ९५ पर देखिये

शैतानकी आँख

प्रथम अध्याय

समुद्रका उपद्रव

मधुच्छत्र-द्वीपके दिखाई पड़नेकी पहिली रात, कप्तान प्रभुनाथ सूर्यास्तसे किरण फूटने तक प्रायः बराबर अपनी जगहपर उपस्थित रहे। उन्होंने सिर्फ एक घंटेके लिये, तीन और चार बजेके बीच विश्राम किया था। इसी समय एक अद्भुत घटना घटी। चौकीदारोंमेंसे मनोहरने, [illegible]राबोर्डमें प्रकाश[illegible] देते हुए झूठी पगली घण्टी कर दी। और कि[illegible]ने भी उस प्रकाशको नहीं देखा। मनोहरने भी जिरहमें स्वीकार किया कि शायद मुझसे भूल हुई हो। अतः कप्तानको उठानेकी [illegible] आई, और बात मजाकमें उड़ गई।

"कु[illegible] आदमी दो घण्टे बराबर अँधेरेमें ढूँढ़ता रहे, तो यह बिल्कुल [illegible] कि उसे तारे दिखलाई दें"—हरिकृष्ण ठाकुरने मुझसे दूसरे दिन [illegible], जब कि मैं उनके साथ 'नकशाघर'में था। मनोहरने कहा था कि उसने आकाशमें एक प्रकारकी लौ देखी। उसका चमकना और बुझना दोनों ही आधा सेकण्ड या उससे कम हीमें हुआ होगा; [illegible]तः उसके नोट करनेके लिये काफी समय नहीं था।

"शायद, वह बड़ा शक्की है"—मैंने कहा।

"हाँ! मैं भी उसपर एकदम विश्वास करने नहीं जा रहा हूँ"—[illegible]तीय अफसरने मुस्कुराते हुए कहा।

इ[illegible] इस समय "इन्द्रायुध" द्वीपके पूर्वी ओर, दक्षिणी किनारेपर शरण [illegible]नेके लिये जल्दी-जल्दी सरक रहा था। मधुच्छत्रके टीलोंकी ऊँचाइयाँ

कुहरोंसे छिपी हुई थीं। यद्यपि भूमिको देखकर हम लोग खुश थे, किन्तु यह प्राणि-शून्य प्रदेश ऐसा सुनसान मालूम होता था कि जिससे हृदय सिहरने लगता था। ऊपर, हजार हाथ ऊँचे ऊभड़-खाभड़ चट्टानोंकी पंक्तियोंपर एक भारी कुहरा और बादलोंकी चादर, नीचे, चञ्चल समुद्र जहाजके लोह-गातपर फेन और लहरोंके थपेड़े मार रहा था।

हरिकृष्णने कहा—"कितने क्रूर हैं यह थपेड़े, किन्तु तूफानके समय यही दशा सभी बन्दरोंकी होती है। पीताम्बर कहते हैं, कि किसी शान्त स्थानमें बारह घंटे लंगर डाल मिलनेपर, इंजिन सुधार दिया जा सकता है। देखो तो माधव! 'नाविक' क्या बतलाया है।"

"अटलाण्टिक नाविक" मेजपर वैसा ही खुला पड़ा था, जैसा कि कप्तान प्रभुनाथने उसे छोड़ा था। वहाँ एक पैरापर पेन्सिलसे निशान किया हुआ था, मैं उसीको ऊँचे स्वरसे पढ़ने लगा—

"मधुच्छत्र—(अक्षांश ३५°—देशान्तर दे. २५°-४, पश्चिम) इसलिये नाम पड़ा, क्योंकि इसके टीलों और उनके बीचके गड्ढोंसे इसका आकार मधुके छत्तेकी भाँति जान पड़ता है। किनारा सब जगह १०००-२००० फिट ऊँचा है। उतरने लायक एक ही दक्षिण-पश्चिम घाट है, जहाँ सुरक्षित जल है, तथा पास ही गड्ढोंमें मीठा पानी है। इस द्वीपकी लम्बाई पाँच मील और चौड़ाई चार मील है। पहाड़ियाँ प्रायः मेघाच्छादित रहती हैं। कहीं न वनस्पति है, न प्राणियोंका पता, यहाँ तक कि समुद्री चिड़ियाँ भी इस स्थानपर नहीं जातीं। भारतीय सैनिक जहाज 'बाज' १६००में यहाँ टकरा गया और सभी व्यक्ति नष्ट हो गये।"

"नहीं, सचमुच भयंकर है। उस वर्णनसे भी अधिक। लेकिन तो भी उपयोगी होगा"—हरिकृष्ण बोले।

उनके मुख-मंडलपर भी वही आतंक-रेखायें अङ्कित थीं, जो कप्तान

से लेकर लड़कों तकके मुखोंपर दीख पड़ती थीं। यह आश्चर्यकी बात भी न थी। अपनी यात्राके चौदहवें महीनेमें 'इन्द्रायुध' मोन्ते-वाइदोसे टेबुल-खाड़ीकी ओर जब जा रहा था, तो उस अक्षांशके लिये उस ऋतुमें भयानक वायव्य ट्रेडविंड उग्र हो उठी। विस्तीर्ण अगाध नील समुद्रने वायु और वृष्टिके सम्पर्कसे, एक विकट युद्ध-क्षेत्रका रूप धारण कर लिया, जिसमें पर्वताकार लहरें बराबर हमारा पीछा करने लगीं। दूसरे दिन जहाँ धूप बिल्कुल नहीं थी, वहाँ बूँदकी झड़ी और गुर्राती हवाने भयंकरताको और अधिक बढ़ा दी। तीसरे दिन यह लक्षण और भी भयंकर अन्धकारपूर्ण तथा निराशामय हो गया। किन्तु इस सभी समय बूढ़ा "इन्द्रायुध" अपने मार्गपर उसी मिहनत और बहादुरीसे, यद्यपि लुढ़कते और डगमगाते किन्तु अपनी प्रतिपक्षी लहरोंको चीरते हुए, अग्रसर हो रहा था। पुराने और कुरूप होनेपर भी, यह 'इन्द्रायुध'की मजबूती और दृढ़ता थी, जिसके कारण पोता-रोही भय नहीं करते थे। उस समय मोमजामे बिना कोई आदमी पोत-तलपर नहीं आ सकता था, और न कोई वहाँ आकर, बिना सिहरे, बिना नस-नस ढीला हुये तथा बौछार खाये लौट पाता था। यह सब कुछ था, किन्तु नाविकोंके लिये; तब तक कोई चिन्ता न थी, जब तक इन्द्रायुधकी जीवन-अग्नि बनी थी। कप्तान प्रभुनाथ बड़े हिम्मतवाले आदमी थे। उनके ऐसे दृढ़ नाविक सप्तसिन्धुओंमें बहुत कम मिलेंगे।

यह तीसरा दिन था, जब कि वज्रपात हुआ—महान् समुद्रका धक्का, जिससे अपनी रक्षाके लिये पुराने पोतका महान् प्रयास, रगड़ खाते [illegible]होंका चीत्कार, पुनः नाड़ीका गत्यवरोध एवं इंजनकी सिसकाहटका [illegible]। पतवारोंके जकड़ जाते ही आगकी शक्ति निरुपयुक्त हो गई। कुछ [illegible] 'इंद्रायुध' भीषण तरंगमालाओंपर, निस्सहाय लुढ़कता रहा, किन्तु अन्तमें उसे युद्ध-पराङ्मुख हो सीधा तूफानके पीछे चलना पड़ा। यह भग-[illegible] दो दिन दो रात रही, किन्तु सौभाग्यसे कोई व्यक्ति नष्ट नहीं हुआ [illegible] तूफान अब चला गया। सूर्य अपने पीले और लज्जितसे मुखको

बादलोंके पीछेसे दिखला रहा था। इस सारे ही समय इंजिनियर चुपचाप नहीं बैठे थे। वह बराबर इंजनको ठीक करनेमें लगे थे। उन्होंने कुछ भाग बल्कि सुधार भी लिया था। इंजन अब धीरे-धीरे चलने लगा। पतवार फिर पानी हटाने लगे। यद्यपि पहली जैसी शक्ति नहीं थी, किन्तु एक बार फिर वृद्ध "इन्द्रायुध"ने पुनरुज्जीवित हो अपने मुखको पूर्व ओर फेरा। माँगेसे पूँछ तककी सारी शक्ति लगाकर, अब वह घंटेमें चार मील चलने योग्य हो सका था। उस समय आफिसरोंने कर्त्तव्य-निर्णय किया। समीपतम आबाद स्थल त्रिस्तन्-द-अकुन् था। किन्तु, प्रथम तो ढाई सौ मीलकी यात्रा, यदि "इन्द्रायुध"ने इसे किसी प्रकार झेल भी ली, तो भी वहाँ कोई बन्दर नहीं था। मधुच्छत्र यद्यपि आबाद नहीं था एवं मार्गसे हटकर भी था, किन्तु वह सौ मील समीप था, तथा वहाँ एक सुरक्षित बन्दर था। अतः जहाज दक्षिण ओर चलाया गया। अब हम अपने अस्थायी मंजिलके पास पहुँच रहे थे।

धीरे-धीरे खिसकते हुए, हमने दक्षिणीय किनारेको देखा। चारों ओर नंगे चट्टानोंकी विशाल दीवार और फेनिल अरार था, किन्तु जब हम अग्निकोणकी ओर हुए, तो चट्टानोंकी छायामें अपेक्षाकृत शान्ति-पूर्ण पथपर थे। अभी दूर ही 'इन्द्रायुध' ठहर गया।

एक नाव डाली गई, और प्रथम अफसर छै आदमियोंके साथ पता लगानेको रवाना हुए। यद्यपि तट साफ था किन्तु कप्तान प्रभुनाथ वह आदमी नहीं थे कि बिना जाने अनावश्यक जोखिम सिरपर लेनेके लिये तैयार होते। जहाँ इतना समय व्यय हुआ, वहाँ एक घंटा और सही, स्थानका ठीक-ठीक पता तो लग जायगा।

ऊपरीकी छतसे हमलोग नावके अग्रसर होनेको देख रहे थे। मेरा सहाध्यायी उम्मीदवार विक्रम अपनी सम्मति वहीं खड़ा-खड़ा जाहिर कर रहा था—"कैसा बुखार लानेवाला दृश्य है। कभी ऐसा माधव! तुमने और देखा? मर्जी है, इसे मधुच्छत्र कहो! किन्तु है कहीं यहाँ मिठास? वाह! मेरी रायमें इसे एक नया नाम देना चाहिए। तुम

क्या कहते हो ? 'सर्वनाश द्वीप'' या ''भूतोंका द्वीप'' का ''प्रेत-द्वीप'' ? इसके पता लगानेकी आवश्यकता नहीं कि यहाँ भूत प्रेत हैं कि नहीं, हमें तो ऐसे निठुर स्थानके लिए कोई उपयुक्त नाम देना है।''

''तो, हमें तीनों ही प्रयुक्त करना चाहिये। किन्तु चाहे कुछ भी हो मुझे तो एक बार किनारे उतरना है।''—मैंने कहा।

''हाँ! जरूर!! मैंने आते समय हीसे यह आशा नहीं की है कि मुझे समुद्र बाहर जाने देगा।''—विक्रमने नापसन्द करते हुए तानाके साथ कहा।

''कुछ नहीं, एक बार वहाँ जाकर लौट आनेसे ही हमें फिर समुद्र आनन्दमय लगने लगेगा।''—मैंने अनुत्साह-पूर्ण उत्तर दिया।

''कुछ नहीं, मुझे मरुद्वीपकी चाह थी, सो मिल गया ; देखो कैसा है।''—उसने कहा।

''नहीं, आप तो मूँगाका द्वीप चाहते थे और जहाँ सुनहला बालू, हरी घास, चारों ओर सुन्दर मधुर वन्य फल हों। क्यों ? और यह भी कि जहाँ सदा ही नीला आकाश और सूर्य का प्रकाश हो।''

''हाँ! और कुछ भोले-भाले जंगली जो मुझे अपना राजा बना लें''—विक्रमने रूखे स्वरसे कहा।

इसपर मेरी हँसी न रुक सकी, जिसे तिरछे देखते विक्रम कहने लगा—

''हमारी किस्मतमें ऐसा ही तो किनारा बदा है। कैसा भद्दा और भयानक! यदि यहाँ तकदीर खुलनेकी बात भी हुई, तो उनकी, जिनके कप्तान सम्बन्धी हैं, और जो तृतीय अफसरके बड़े भाई बनते हैं—इत्यादि। यदि यहाँ भाग्य खुलनेकी भी कोई बात हुई; तो अपने लोग पहले देखे जायेंगे, दूसरोंके पल्ले पड़नेकी कहाँ आशा है ?''

विक्रमसे पाँच मिनट भी बिना उसके डाह-भावके प्रकाशित हुए, बात करना असम्भव था, किन्तु मैंने उससे झगड़ना छोड़ दिया था।

एक दिन विक्रमने मुझे क्रोधित किया था। फिर क्या था दोनोंकी गुत्थम-गुत्था हुई। यद्यपि मैंने उसे खूब पटकी मारी और जमीनपर रगड़ा। सबके देखने तथा विक्रमके ख्यालमें भी मैंने अच्छी प्रकार ठीक कर दिया था; किन्तु जब मुझे आप बीती याद आई। किस प्रकार मेरी नाक, हाथ, पैर, चमड़े छिल गये थे। अंग-अंग दर्द कर रहा था। तो मन ही मन मैंने फिर ऐसा करनेसे तोबा की। यही वजह थी कि मैं अब विक्रमकी बातोंका अधिक ख्याल नहीं करता था।

अब मैं वहाँसे दूसरी जगह हटकर नावको देखने लगा। नाव अब चट्टानोंकी आड़से ही किनारेके पास चली गई थी। मेरा ख्याल अब विक्रमकी ओर गया। मैं भी सचमुच उसीकी भाँति पहले स्वप्न देखा करता था। किस प्रकार अनेक द्वीप-द्वीपान्तरोंकी सैर होगी। किस प्रकार वहाँके कष्टों और बलाओंको पारकर एक सुखका साम्राज्य विजय करेंगे। जिसमें सोना, चाँदी, अन्न, धन सभी चीजें अप्रयास हाथमें आयेंगी; कोई चीजकी कमी नहीं रहेगी—इत्यादि। किन्तु अब यथार्थ बात मालूम होती है। समुद्रमें कहीं लक्ष्मी फेंकी हुई नहीं है। वहाँ भी वैसी ही मिहनतकी जरूरत है, जितनी और जगह। मुझे यह सच्चाई तब मालूम न थी। इसीलिये मैं बहिन कमलाको निःसहाय अपने भाग्यपर छोड़ आया। मेरे लिये यह योग्य न था। जिसने कष्ट और प्रेमसे, माता-पिताके अभावको विस्मरण करा मुझे बड़ा किया; जिसने अनेक कष्ट सह मेरी उन्नति और भलाईका मार्ग साफ किया; अवश्य मेरे लिए यह कापुरुषता थी, कि उसकी सहायता करनेके समय मैं इधर भाग आया। किन्तु क्या करूँ? यही स्वप्न तो इसके कारण हुए।

मेरा विचार-सूत्र यहीं भंग हो गया, क्योंकि इसी समय औरोंने प्रथम आफिसरके वहाँसे लौटनेकी बात कही। मैंने भी देखा, किनारेपर पहुँच उन्होंने उतरनेकी आवश्यकता शायद नहीं समझी। सब बात तो खुली थी, वहाँ विश्राम-घर और उतरनेके घाट तो बने नहीं थे। आफिसरने देखकर नाव मोड़ी। वह धीरे-धीरे जहाजकी ओर आ रही

थी। हाथमें हिलती हुई सफेद रूमाल हमें सूचना दे रही थी कि सब ठीक है। कप्तान और अन्य अफसर पुलपरसे भी उधर ही देख रहे थे।

यह जीवनका सन्देश था। थोड़ी देरमें "इन्द्रायुध" फिर धीरे-धीरे अग्रसर हुआ। वह शनैः-शनैः सरकने लगा जब तक कि नाव भी पास आ गई। प्रथम आफिसर अब सीढ़ीपर दौड़े। जब वह पोततलपर पहुँचे तो कप्तानने पूछा—

"सब ठीक तो है, महाशय समरसिंह ?"

"हाँ जनाब। बिल्कुल ठीक है। पूरा अवकाश, और साफ रास्ता, और तिसपर भी पर्याप्त तैराऊ जल। सचमुच इससे अच्छा स्थान नहीं मिल सकता। इतना ही नहीं—"

"वाह !" कप्तानने प्रश्नके तौरपर कहा, जिसपर समरसिंह मुस्कुराये—

"नहीं जनाब ! हमीं अकेले नहीं हैं। वहाँ खाड़ीमें एक और भी पोत खड़ा है।'

सभी कानों और हृदयोंने बड़े ध्यान और आश्चर्यके साथ इसे सुना। सैकड़ों मील रास्तेसे हटकर, दूसरा भी स्टीमर ! इसपर कितने ही सेकण्ड बीत गये जब कप्तानका मुँह खुला—

"कैसा स्टीमर है, कैसे यहाँ पहुँचा ?"

"यह एक छोटा-सा अमेरिकन स्टीमर है, महाशय ! न्यु-आर्लियनका। "मौड मूलर" उसका नाम है। स्टुअर्ट जेक्सन उसके कप्तान हैं। उसके मिल जानेसे इतनी देर लौटनेमें हुई। ज़रा एक मिनट ठहरें, मैं सब कहे देता हूँ।"

वह अपने नौकारोहियोंको आवश्यक हिदायत दे, फिर सीढ़ीसे चढ़ पुलपर कप्तानके पास चले गये। इसके बाद कितने मिनट तक सब अफ़सर आपसमें बातचीत करनेमें लग पड़े। उनकी बात धीरे-धीरे होती थी, इसलिये हमलोगोंकी जिज्ञासा और बढ़ गई।

द्वितीय अध्याय

रेतीली खाड़ीमें दो स्टीमर

"रेतीली खाड़ीमें तंग प्रवेश-मार्गकी दाहिनी ओर, तटसे प्रायः तीस गज़की दूरीपर "इन्द्रायुध" अब विश्राम कर रहा था। उस छोटी खाड़ीमें जिसकी लम्बाई कुल तीन सौ गज़की होगी वह बड़ा-सा मालूम होता था। किन्तु हज़ार फ़ीट ऊँचे टीलोंकी छायामें वह यथार्थमें बहुत छोटा-सा था। उसकी दाहिनी ओर "मौड मूलर" खड़ा था।

वह एक अत्यन्त सुन्दर अगिनबोट था। आकार "इन्द्रायुध"से बहुत छोटा। उसकी स्वच्छता और सुन्दरता किसको नहीं दो घंटा सामुद्रिक सैरके लिए प्रलोभित करेगी। हमारे लंगर गिरानेके आध घंटेके बाद ही उसके कप्तान अपने एक मित्रके साथ मिलनेके लिये आये। उनकी मुलाक़ातके समय मैं भी अपने कप्तानके पास ही था, इसलिये मैं उन्हें भली प्रकार देख-भाल सका। कप्तान जेक्सन बड़े दुबले-पतले आदमी थे। उनके चेहरे और दृष्टिसे उनका स्वभाव बहुत नर्म मालूम होता था। किन्तु यह खूब मालूम होता था, कि उनकी स्वच्छ नील आँखें सन्मुखागत प्रत्येक वस्तुको भली प्रकार भाँप लेने-वाली हैं; जिनके कितने ही अंश दूसरे लोगोंसे छूट जा सकते हैं। उनके साथी बड़े डीलडौलके आदमी थे। किन्तु यह देखने मात्रसे कहा जा सकता था, कि वह नाविक नहीं हैं। वह एक वृद्ध पुरुष हैं, करीब ६० वर्षके। वह मामूली सूट और ऊपरसे एक मोटी काली ओवरकोट पहने थे। मूँछ-दाढ़ी एकदम मुँड़ी हुई, और बाल सफ़ेद थे। चेहरा भरा हुआ, सुनहली कमानीके चश्मेके अन्दर तीक्ष्ण नेत्र विशेष चित्ताकर्षक थे। यद्यपि देखनेमें वह बहुत सीधे-सादे मालूम होते थे, किन्तु देखने मात्र हीसे मुझे उस व्यक्तिमें साहस मालूम होता था।

कप्तान शिष्टाचारसे पूर्ण अभिज्ञ थे। उन्होंने आते ही हमारे कप्तानसे कहाः—

"महाशय! ऐसी अवस्थामें, मैं यह तो निश्चित तौरपर नहीं कह सकता, कि मैं आपका दर्शनकर बहुत प्रसन्न हुआ। किन्तु मैं अवश्य कहूँगा कि आपकी सेवा और सहायताके लिये मैं बिल्कुल तैयार हूँ।"

दोनों कप्तानोंने हाथ मिलाये, तब कप्तान प्रभुनाथने कहा—"मैं नहीं समझता हूँ कि हमें सहायताकी आवश्यकता होगी। हमारे पास सभी आवश्यक वस्तुएँ हैं, और मेरे प्रधान इंजिनियर कहते हैं कि बारह घंटेमें हमारा जहाज़ बिल्कुल ठीक हो जायगा। किन्तु मैं आपसे, कप्तान जेक्सन! निवेदन किये बिना न रहूँगा, यदि मुझे कोई आवश्यकता होगी। सचमुच ऐसे वीरान स्थानमें सुहृदोंका मिलना बड़े सौभाग्यकी बात है। मेरे प्रथम अफ़सरने मुझसे कहा है कि आप यहाँ कुछ समय-से ठहरे हुए हैं।"

कप्तान जेक्सन—"क़रीब एक माससे, और आशा है, एक मास और। हाँ, यहाँ 'रायो' विश्व-विद्यालयके प्रोफ़ेसर डेलिंगसे मैं आपका परिचय कराना चाहता हूँ। यह हमारी पार्टीके मुखिया हैं।"

प्रोफ़ेसर डेलिंगने झुककर हाथ मिलाया। वास्तवमें वह कम बोलने-वाले आदमियोंमेंसे हैं। कप्तान जेक्सनने अपनी बातको जारी रखते हुए कहा—

"हमलोग एक भूगर्भीय नापमें निकले हैं। विश्व-विद्यालयने प्रोफ़ेसर महाशयको छै मासका अवसर दिया है; कि वह दक्षिणीय अटलांटिकके कुछ टापुओंको भूगर्भ-शास्त्रीय अन्वेषणकी दृष्टिसे देखें, और "मौड मूलर" एवं मुझे भी साथमें कर दिया है। साथ ही ब्राज़ील एवं अर्जेण्टाइन प्रजातंत्रोंसे इस खोजका आज्ञा-पत्र भी ले दिया है। कप्तान प्रभुनाथ! आप जानते हैं कुछ भूगर्भ-शास्त्रके विषयमें?"

हमारे कप्तानने मुस्कुराते हुए सिर हिलाया—

"कप्तान जेक्सन ! मैं भी वैसा ही कोरा हूँ, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि विषय बड़ा रोचक है अवसर हो तो प्रोफेसरसे बात करेंगे।"

"और मैं महाशय ! इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं समझता, कि न्युआर्लियनवासी स्टुअर्ट जेक्सन, विज्ञानके पवित्र कार्यमें नियोजित करके कृतार्थ कर दिया गया है। मैं उम्मीद करता हूँ कि थोड़े ही दिनोंमें इन टापुओंके विषयमें हमें एक बड़ा ग्रन्थ प्राप्त होगा, जिसमें मैं और मेरा पोत भी होगा। है न प्रोफ़ेसर साहब ?"

यह प्रथमवार था, प्रोफ़ेसरके मुख खुलनेको। वह सूखी मुस्कुराहट के साथ बोले—

"मैंने इसके लिये कप्तान जेक्सन ! वचन दिया है, उसका पालन अवश्य होगा। मुझसे जहाँ तक हो सकेगा, आपको अमर करनेका प्रयत्न करूँगा। सचमुच आप ऐसे पुरस्कारके भाजन हैं !"

तब सब लोग हँसने लगे, जिसमें कप्तान जेक्सनकी हँसी खुलकर थी। तब सीधे वह लोग हमारे कप्तानके वासामें गये। वहाँ इस मुलाक़ातके उपलक्ष्यमें जलपान तैयार रखा गया था। दश मिनटके बाद विदा होते समय कप्तान जेक्सनने कहा—

"मैं आपके सुधारनेके काममें बाधक नहीं होना चाहता, कप्तान प्रभुनाथ ! तथापि मैं अपनेको बड़ा सन्मानित समझूँगा, यदि आप या आपके अफ़सरोंमेंसे कोई, विदा होनेसे पूर्व 'मौड मूलर'पर तशरीफ़ लायें।"

इस निमंत्रणके साथ जिसको हमारे कप्तानने भी बड़े उत्साहपूर्वक स्वीकार किया, दोनों सज्जन सीढ़ीसे नीचे उतर डेंगीपर सवार हुये, और अपने जहाज़को लौटे।

सचमुच दोनों पुरुषोंने बड़ी समवेदना और शुभेच्छा प्रकाशित की जो ऐसे अवसरके लिये अत्यन्त उपयुक्त थी। यह वास्तविक मनुष्यता अथवा मानव-बन्धुताका असाधारण आकर्षण था। जिसने अपने आपद्ग्रस्त भाईकी दिलजोईपर एक-दूसरेको बाध्य किया। उस समय

मुझे यह उम्मीद न हुई कि, उससे भिन्न रूपमें मैं फिर भी उन दोनों महानुभावोंको देख पाऊँगा।

उनके विदा होनेसे पूर्व ही, मरम्मतका काम आरम्भ हो गया था। इंजिनियर महाशयने १२ घंटेकी ही देरी बतलायी थी, किन्तु इंजनके अतिरिक्त वहाँ और भी कई बातें सुधारनी थीं। बहुत जल्द सारा जहाज़ आरों और हथोड़ोंकी आवाज़से गूँज उठा। जब इधर यह काम हो रहा था, उसी समय जलकी अपेक्षा समझ कप्तानने मुझे और विक्रमको तृतीय आफ़िसरके साथ पानीके जोगाड़ करनेमें लगा दिया। "नाविक"-में लिखे अनुसार ही जलकुंड टीलेके सामने नीचे था। उस तंग तट-प्रान्तका बालू साधारण समुद्रतटके बालुओंके सदृश न था। उसमें सूक्ष्म धूलि थी, जिसमें काले-काले प्रस्थरखंड मिले हुये थे। पीछे पहाड़ी एकदम सीधी ५० फ़ीट ऊँची दीवार-सी खड़ी थी, जिसके ऊपर भी ज़रा पीछे हटकर दूसरी दीवार। इसी क्रमसे १००० फ़ीट ऊँची। वह पहाड़ी मानो एक महाकाय आरेकी भाँति खड़ी थी। जिसपर ऐसी नीरवता छाई थी, जिसमें किसी सामुद्रिक पक्षीकी भी धीमी चहचहाहट नहीं सुन पड़ती थी।

हरिकृष्णने कहा—"इस भागके दूसरे सारे ही टापू सामुद्रिक-पक्षियोंसे पूर्ण हैं, किन्तु यहाँ, देखो, एक भी परका पता नहीं। कैसा जीवनशून्य श्मशान-सदृश यह स्थान है?"

"यहाँ उन्हें कुछ खानेको नहीं मिल सकता, इसीलिये तो" विक्रम-ने मुँह बनाकर कहा।

"हाँ! सचमुच देखो न, लेकिन पानी बहुत अच्छा है।"—तृतीय अफ़सरने कहा—

जल बहुत स्वादिष्ट और स्वच्छ था। हमलोगोंका काम दोपहरसे पूर्व ही समाप्त हो गया था। हमारे कामके समाप्त होते ही विक्रमने एक प्रस्ताव पेश किया :—

"क्यों माधव ! एक बार जरा किनारेकी सैर कैसी रहेगी ? इस पहाड़ीपर चढ़कर ज़रा आस-पास देखना चाहिये। जहाज़में एक जगह पड़े-पड़े दिल ऊब गया है। चलो न ज़रा टहल आयें।"

मैं—"हाँ, ठीक तो है। मेरी भी तबियत यही करती है। जाओ न फिर समरसिंहसे कहो।"

विक्रम दाँत पीसने लगा। उसके लिये प्रथम अफ़सर ज़हर-सा था। उसने बात मारके कहा :—

"तुम जाओ, बड़े भाईसे कहो। कहोगे तो मैं तुम्हें एक चीज़ दूँगा कभी।"

मैंने "एक चीज़" वहीं विक्रमको भुगता दी, लेकिन हरिकृष्णासे जाकर इसके लिये कहा। उनकी इच्छा भी ज़रा घूमने की थी।

उन्होंने कहा—"मैं भी टहलना पसन्द करता हूँ, मैं देखता हूँ, कि इसके लिये हमें अवकाश है। लेकिन तुम दोनों बदमाशोंको एक साथ जाने देनेके लिये मैं तय्यार नहीं हूँ।"

कप्तानने भी इसका कोई विरोध नहीं किया, किन्तु यह सचेत कर दिया—

"खबरदार, मधुच्छत्र इसका नाम व्यर्थ नहीं है, गड्हे-खड्डोंको बचाकर चलना। यह भी ख्याल रखना, कि हमलोग बहुत समय बर्बाद कर चुके हैं; यदि तुमलोग रास्ता भूल गये, तो हम इसके लिये प्रतीक्षा नहीं करेंगे, सूर्य्योदय होते ही लंगर यहाँसे उठा दिया जायगा यदि सभी भाँति कुशल रहा।"

हमलोगोंने रसोई-घरमें जाकर कुछ खाना-दाना किया, और वहाँसे निकल पड़े। जब मैं तटपर पहुँचा तो, मुझे यह विद्यालयके आधे दिनकी छुट्टीकी भाँति आनन्ददायक मालूम होती थी। मुझे इस समय अपना सहाध्यायी दोस्त मोहनस्वरूप याद आने लगा। मानो नालन्दा विद्यालयसे आधे दिनकी छुट्टी हो जानेसे आज राजगृह पर्वतकी सैर तय पाई है। मुझे अब वहींका दृश्य सम्मुखीन होता मालूम होने लगा। आगे-

आगे मैं चल रहा हूँ। पीछे मित्र मोहन आ रहा है। मैं इस ध्यानमें इतना मग्न हो गया, कि एक बार मैंने पीछे फिरकर देखा, किन्तु वहाँ मोहन न था। विक्रमने पूछा :—

"क्यों, क्या बात है ? क्या खयाल पड़ा ?"

मैं—"कुछ खयाल कर रहा था ?"

विक्रम—"वह क्या ?"

मैं—"एक पुराना सहाध्यायी मित्र याद पड़ा।"

वि०—"हाँ, तुम मेरे बदले उसको यहाँ चाहते थे !"

मैं "क्यों नहीं ?"

वि०—"तो क्या करियेगा, यहाँ तो मैं ही हूँ वह तो है नहीं।"

हरिकृष्णकी इच्छा एक-एक रौंदा करके ऊपर चोटीपर चढ़नेकी थी, कि वहाँसे फिर चारों ओरका दृश्य देखा जाय। किन्तु थोड़ी दूर चलनेपर हमें एक रास्ता-सा मालूम हुआ। उससे हम खाड़ीकी पश्चिमकी ओरपर पहिले रौंदेके ऊपर पहुँच गये। वहाँसे फिर उसी तरह दूसरी पैंडीपर पहुँचनेका निशान बना हुआ था। इस तरह चुप-चाप चलते हुए हम ६ सौ फ़ीटपर पहुँच गये। यहाँ कुछ विश्राम लेनेकी राय हुई। नीचे छोटीसी बावलीमें "इन्द्रायुध" और "मौड मूलर" डोंगीकी भाँति दीख पड़ते थे। उनके बौने आदमी इधर-उधर अपने-अपने काममें व्यस्त थे। हथोड़ोंकी 'ठुक-ठाक' बराबर सुनाई देती थी। हमारे ऊपर अब भी ऊँची दीवार थी। दीवार बहुत सख्त और लोहेकी भाँति काली थी। मैंने खयाल करके देखा तो जान पड़ा हमारी पग-डंडीपरके टुकड़े न पत्थर थे न बालू ही।

मैंने कहा—"क्यों इतना सुनसान है ! यहाँ कभी सहस्रों सामुद्रिक पक्षी रहे होंगे, किन्तु अब एक भी नहीं।"

विक्रम—"क्यों उन्हें यह बुखारकी तरह लगने लगा, जैसे हमें ? यह देखो, नया रास्ता फूटा है। क्या इसपर चलें ?"

अब हमलोग आठ सौ फ़ीट ऊपर थे। यहाँसे अटलांटिककी अनन्त

जलराशि आकाशसे मिली मालूम पड़ती थी। यहाँ पहिले-पहिल दीवारका सिलसिला टूटा हुआ मालूम पड़ा। यह एक प्रवेशमार्गकी भाँति मालूम होता था जो नीचेसे बिल्कुल ही दिखलाई नहीं पड़ता था। जितना ही यह अन्दरकी ओर जाता था, उतना ही विस्तार भी इसका अधिक होता जाता था।

हरिकृष्णने कहा—"यह रास्ता-सा मालूम होता है। यद्यपि यह खड़ा-सा नहीं है, किन्तु ज़रूर यह कहीं शिखरपर जा निकला होगा। देखें क्या है। कितना अच्छा हुआ होता, यदि चलनेसे पूर्व प्रोफ़ेसर महाशयसे यहाँके बारेमें पूछपाछ कर लिये होते। वह जरूर इधर घूमे होंगे। अच्छा हम अपने नोट भी चलकर उनसे मिलावेंगे। देखेंगे हमने उनसे कोई नई चीज़ देखी।"

हमलोग क्रमशः आगे बढ़ने लगे। उस रास्तेको छोड़कर दूसरा कोई रास्ता आगे चढ़नेका नहीं दिखाई पड़ता था। दीवारें सीधी खड़ी थीं। रास्ता यद्यपि घूमता हुआ जा रहा था; किन्तु उसका मुँह ऊपरकी ओर ही था। सामने प्रायः मील भरपर हमें एक ऊँची चोटी-सी दिखाई पड़ती थी। मालूम होता था, उससे ऊँची और कोई चोटी न होगी। हमने अटकल लगा लिया जब वहाँ पहुँच जायँगे, तो लौटने भरके ही लिये हमारे पास समय रह जायगा।

यह वही रास्ता था जिसमें आफ़त सिरपर पड़ी। हमलोगोंने कप्तानके आदेशके अनुसार गड़हों और खड्डोंकी ओर पूरा ध्यान रक्खा था। अब हमारी दाहिनी ओर एकबएक उतराई आ गई थी। हम लोगोंने उसकी परीक्षा करना आरम्भ किया। वास्तवमें अब हम एक बड़े गड़हेके मुँहपर खड़े थे। यह गड़हा गोल न होकर अंडेकी शकलमें था। ऊपर इसके कहीं कुछ छोटी-छोटी झाड़ियाँ ढाँके हुए थीं। जिस वक्त हमने इसे आँख भर देखा हमारे होश गुम हो गये। यह था एक ऊँची पहाड़ीके पेटमें भयानक गार, जिसके मुँहपर मृत्युकी नीरवता छाई हुई थी। क्या कभी कोई किस्मतका मारा इसमें गिरा होगा?

3 | अब आप पेज 50 को देखिये

"अरे राम !" विक्रमने फुसफुसाते हुये कहा—"मैंने अपनी ज़िन्दगी भरमें ऐसा भयानक गड़हा नहीं देखा। मालूम होता है, यह सीधा पृथ्वीके मध्य तक चला गया है।

मैं—"हाँ! जहाँ पृथ्वीकी जठरानल अहर्निश धधा-धधा करती रहती है।"

विक्रम—'ऐसा! नहीं मैं समझता हूँ, यहाँ नीचे पानी है। देखो, पता लग जाता है।"

उसने एक बड़े पत्थरको उठाकर नीचे फेंका। हमलोग स्वाँस रोक-कर थोड़ी देर खड़े रहे। अन्तमें एक धीमी-सी आवाज़ सुनाई दी, जिसमें पानीमें उछलनेकी-सी ध्वनि थी।

विक्रम—"यही पानी है, जिसने आगको बुझा दिया है। ओह !" वह यह कहकर मेरी ओर घूरने लगा। मैंने उससे जान बचानेके लिये और नज़दीक वारीपरसे झुककर नीचे देखना चाहा। इसके बाद क्या हुआ, मुझे पूरा याद नहीं। और जो आदमी है उसका भी ख्याल करते ही हृदय काँपने लगेगा।

मालूम होता है, मैंने अपने क़दम बढ़ाते वक्त फ़ासिलेका ठीक अन्दाज़ नहीं किया। मैंने समझा था, गढ़ा कड़े पत्थरमें खुदा हुआ है। लेकिन मुझे यह नहीं मालूम था, कि इसकी वारीपर झाँई है। मेरे पैर रखते एक सेकण्ड भी अभी नहीं हुआ था। अभी मैं अपने खतरेका अनुभव भी न कर सका था, कि मेरे पैरके नीचेकी मिट्टी खिसक पड़ी। एक चीत्कारके साथ मेरे हाथ गिर गये और मैं नीचेकी ओर चल पड़ा। मेरी यह अवस्था देख, हरिकृष्ण मुझे पकड़ने दौड़े, किन्तु वह अपने आपको सँभाल न सके। मैंने अपनी बग़लमें उन्हें भी नीचेकी ओर चलते देखा। विक्रमके विषयमें इससे अधिक नहीं जानता, कि हमारे गिरते ही उसकी आँखें चढ़ गईं। वह चिल्लाकर पीछेकी ओर भागा; और हमारे सामनेसे ओझल हो गया।

तृतीय अध्याय

महागर्तका तल

उस दिनके बाद भी मैं अनेक आपत्तियोंमें फँसा, किन्तु उस दिन जिस प्रकारका आतङ्क मेरे हृदयपर छाया था, वैसा कभी नहीं देखनेमें आया। आज भी जब कभी स्वप्नमें भी मुझे वैसा दृश्य सन्मुख आता है तो जागकर भागनेकी चेष्टा करने लगता हूँ। मेरी नसें थर्राने लगती हैं, और शरीर पसीने-पसीने हो जाता है। मुझे वह महागर्त भयंकर स्वप्न-सा प्रतीत होता है।

मैं नीचेको गिर रहा था। मेरे कानोंमें अब भी विक्रमकी चिल्लाहट गूँज रही थी। मेरे पैरोंके नीचे अब भी वह टुकड़ा था। एक बार उस भयंकर गर्त और अपने परिणामका स्मरण आते ही मेरी आँखें अंधी हो गईं। गात्र शून्य हो गये। मन निश्चेष्ट हो गया। मैं उसी संज्ञाहीन दशामें गिरता-गिरता जा रहा था। मुझे स्वप्नकी क्षीण स्मृतिकी भाँति मालूम होता है कि कोई घास-सी मेरे हाथ पड़ी थी। मैंने उसे पकड़ लिया। कुछ क्षणके लिये उसने भी मुझे रोक रक्खा। किन्तु अन्तमें उसे भी मेरे साथ ही रसातलकी ओर चलना पड़ा। इस प्रकार एक, दो, तीन स्थानपर वैसी ही घासें मिलीं। मुझे अब याद आता है कि, यह वही घासें ही थीं, जिन्होंने मार्ग हीमें मेरी आत्माको शरीरसे पृथक् न होने दिया। यद्यपि सैकड़ों हाथ हम नीचे गिरे किन्तु एकबारगी नहीं। बीचमें तीन-चार बार थम-थम कर। मेरी ही तरह हरिकृष्ण भी रुकते हुए नीचे पहुँचे। प्रकाशका अभाव तो बीच हीसे आरंभ हो गया था, किन्तु हम जितना ही नीचे जाते थे, इतनी ही उसकी घनता भी बढ़ती जाती थी। उस अतल जलने एक बार तो मुझे अपने उदरमें छिपा लिया; किन्तु जब ऊपर आया तो देखता हूँ बिल्कुल

अँधेरा। हाथ-पाँव मारकर जब मैंने एक ओरसे दूसरी ओर अपना मुँह फेरा, तो मुझे एक छेदसे प्रकाश दिखाई देने लगा, यह छेद अण्डाकार था। उसी समय पीछेसे एक आवाज़ सुनाई दी—

"माधव! ठीक हो न?"

आह! वह आनन्द-स्वार्थपूर्ण आनन्द, तथापि आनन्द, जिसने मेरे सन्तापको बहुत कुछ कम कर दिया। मैं उसके उत्तरमें चिल्ला उठा, और थोड़ी देरमें हरिकृष्ण, यद्यपि स्तब्ध, किन्तु वास्तवमें मुस्तैद मेरी बग़लमें थे।

हरि—"चोट तो नहीं लगी?"

मैं—"न-नहीं"! आपको?"

हरि—"बहुत नहीं—"

अब हमने एक बार स्वतंत्रतासे स्वाँस ली। हमलोग थोड़ी देर चुप रहे। किन्तु हरिकृष्ण कुछ सोच रहे थे। मैंने उनपर सोचना छोड़ दिया, क्योंकि मैं समझता था, कि वह दोनोंके लिये सोच रहे हैं। मुझे उस समय उनकी विचार-शक्तिपर विश्वास हो गया। और मुझे आनन्द है कि पिछले अनुभवोंने उसे और दृढ़ बना दिया। यद्यपि अवस्थामें हरि २३ वर्षके अर्थात् मुझसे ६ वर्ष ही अधिक थे, किन्तु इतने दिनोंमें उन्होंने बहुत ऊँचा-नीचा देखा था। तजर्बोंने उन्हें कितनी ही लाभ-दायक शिक्षायें दे दीं थी, जिनके लिये मेरी बारी अब शुरू हुई।

अन्तमें उन्होंने कहा—"हमें किनारे लगना चाहिये। मैं आगे-आगे चलता हूँ, किन्तु तुम पास लगे रहना। यह अच्छा है, जो पानी बहुत ठण्ढा नहीं है। किन्तु, तो भी यह अधिक देर ठहरनेके योग्य नहीं है। नहीं तो इसकी ठण्ढक हमारे शरीरको शून्य बना देगी, और फिर हमारे हाथ-पैर हमारे क़ाबूमें न रहेंगे। माधव! आओ चलें!"

हमारे उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही वह चल पड़े। हम लोग नाविक थे, अतः हमारे लिये तैरना तो कोई बड़ी बात न थी। किन्तु चित्त उस समय फिर चकित और उदास होने लगा जब पचास हाथ

मारनेपर हमें गर्तका दूसरा छोर न मिला और वह प्रकाश-छिद्र भी आँखसे ओझल हो गया। हमें यह आशा न थी, कि ऊपरकी अपेक्षा वह गड्ढा इतना भारी होगा।

यदि हमारे साथ हरिकृष्ण न होते तो मुझे नहीं उम्मेद है, कि मैं कुछ कर सकता। किन्तु वह उस अन्धकारमें बराबर आगे ही बढ़ते जाते थे। चूँकि मुझे उनके पास लगा रहना था, मैं भी उस सिहरा देनेवाले जल, उस भयानक अन्धकारमें बराबर आगे ही चलनेका प्रयत्न कर रहा था। आतंक इतना था, कि मैंने उसपर न विचारकर अपने मस्तिष्कको रिक्त रखना ही उचित समझा। कितनी देर तक वह अवस्था रही? यद्यपि हरिकृष्णने १० ही मिनट बतलाया, किन्तु मेरे लिये तो वह हज़ारों मिनटकी भाँति मालूम हुई। एक बार मेरे देहसे कोई चीज़ छू गई—जो शायद मेरे ही द्वारा उखाड़ी घास होगी—तो मेरा होश जाता रहा। मैं फिर संज्ञाहीन-सा होने लगा। इतने हीमें मेरे कानोंमें आवाज़ आई—

"पीछे-पीछे चले आओ माधव! हमलोग ठीक रास्तेपर हैं।" उसी समय मेरे मुखपर शीतल वायु-तरंगका हल्का स्पर्श अनुभव हुआ। यह वही हवा थी, जो उसी छिद्रसे उस अन्धतामिस्र जल-तलपर आ रही थी। उसने मुझे बड़ा उत्साह दिया। मुझे विश्वास होने लगा, कि ज़रूर इधर कोई मार्ग है, स्थल प्रकाश और जीवनका।

हरि—"बराबर सीधे। मेरा हाथ भूमिमें लगा।"

एक ही क्षणके बाद मैंने भी भू स्पर्श किया। थोड़ी ही देरमें जलसे बाहर हो हम सूखी भूमिपर चले आये। हरिकृष्णने मेरे हाथ, मुख और हृदयको स्पर्श किया। वह भी मेरी ही भाँति हाँफ रहे थे। उन्होंने कहा—"कोटिशः धन्यवाद।"

इसके बाद थोड़ी देर तक हम वहाँ बैठ गये। अपने कपड़े और बालोंसे पानीको पोंछा। तब हरिकृष्णने कुछ देर सोचनेके बाद कहा—

"यह वायुवीची हमारे लिये मार्गप्रदर्शक थी। यदि यह रुक गई, तो समझ लेना हमारा भी अन्त है। माधव! अब चलें न?"

मैं—"मैं आपके पीछे हूँ। खड़े-खड़े या रेंगते?"

हरि—"रेंगते ही, अभी देखना है कि मार्ग कैसा सुरक्षित है। मेरे पीछे ही लगे रहना।"

अब हमें कुछ पता लगने लगा कि, हम एक प्रकारकी गुफ़ाके अन्दर हैं। दाहिने और बायें पथरीली दीवार है। ऊपर ऊभड़-खाभड़ छत। अब इस अंधकारपूर्ण बन्दीखानेसे मुक्त होनेके लिये हम वायुका अनुसरण करने लगे। हमलोग बड़ी सावधानीसे चल रहे थे; ऐसा न हो कि कहीं दूसरा पाताल-कुण्ड मिल पड़े। लेकिन मिलता भी तो उस समय हम क्या कर सकते; जब कि त्वचा, इन्द्रिय और वायु-स्पर्शके अतिरिक्त हमारा कोई पथ-प्रदर्शक नहीं था। अब आगे भूमि भी कुछ ऊँची आ गई थी, जितना ही हम आगे बढ़ते थे वायुकी गति भी अधिक मालूम होती जाती थी। अवश्य आगे कोई प्रवेशमार्ग होगा। मार्ग विषम था। मालूम होता है, वर्षाके दिनोंमें उधर ही किसी रास्तेसे गर्तका अधिक जल समुद्रकी ओर जाता होगा। अच्छा है, जो वर्षाका मास नहीं, अन्यथा उस एक वायु-छिद्रके भी मुँद जानेसे हमारे लिये सर्वथा निराशा थी। कुछ भी हो, हमें अब समुद्रकी आकांक्षा थी। हमारे साथी अब भी समुद्रमें होंगे। 'इन्द्रायुध' तय्यार हो गया होगा। अभी भी शायद हम जल्द किनारेपर तथा 'इन्द्रायुध'पर पहुँच सकते हैं। शायद विक्रमसे पूर्व।

हमारी भूमि धीरे-धीरे ऊँची होती जाती थी। अब वह रोमांचकारी गर्त का वह ठंढा जल भी नहीं था। हम अब, पहिलेसे कुछ शीघ्रताके साथ, ५० गज़ आ गये। यहाँ गुफ़ाका कोना था। यह समकोण या सरलकोण नहीं था, किन्तु चापकोण, जहाँ इस गुफ़ाका ऐसी ही दूसरी गुफ़ासे संयोग होता था। इस कोनेको पार करते ही हरिकृष्णने जिस आनन्दमय दृश्य-को देखा, उससे मुझे भी भाग्यशाली बनानेके लिये, उन्होंने मेरे कन्धेमें

अपनी बायीं बाँह डालकर उधर दिखाया। आह! वह कैसा स्वर्गीय दृश्य मुझे मालूम होता था। प्रकाश! अहा प्रकाश!! उसके महात्म्य-को, उसके मूल्यको मेरे ही जैसा आदमी जान सकता था, जो वैसे अन्धतामिस्र नर्कसे निकलकर आया हो। जिसको वहाँकी स्मृति बिल्कुल ताज़ी हो।

अब यहाँसे वह छिद्र चौथाई मीलकी दूरीपर मालूम होता था। रास्तेमें बड़े-छोटे रोड़े और चट्टान थी, किन्तु अब प्रकाश था, इसलिये यह मार्ग वैसा कठिन नहीं प्रतीत होता था। हमें मोक्षद्वार सामने दिखाई पड़ता था। यह गुफ़ा एक लम्बी नलीकी भाँति मालूम होती थी, जिसके दूसरे छोरपर वह प्रकाश-छिद्र था। अब थोड़ी देर और सुस्तानेके लिये हम दोनों वहाँ बैठ गये।

ओह! उस प्रकाश-प्राप्तिकी आकांक्षाको क्या कहूँ, रास्ता ऊभड़-खाभड़ था, लेकिन मैं बेतहाशा उधर ही आगे बढ़ रहा था। कितनी ही बेर पैरके नीचेका पत्थर खिसक गया, कितनी ही बार मैं भूमिपर गिर पड़ा, केहुनी और घुटने छिल गये, अँगुली और ठुड्ढी फूट गईं, कपड़े फट गये, उन पैने पत्थरोंने बीसों जगहों मेरे शरीरमेंसे खून निकाल दिया, किन्तु मुझे इन सबकी कुछ भी परवा न थी। मुझे किसीकी सुधबुध न थी। मुझे तो वही प्रकाश-छिद्र दिखाई पड़ता था, और उसके जल्दीसे जल्दी पानेकी तीव्र इच्छा। हरिकृष्ण भी अब अगुआके बदले पिछुआ हो गये। वह बराबर मुझसे लगे ही हुए चल रहे थे। बीच-बीचमें कभी-कभी एकाध बात बोलते भी रहते थे।

अन्तपर पहुँचनेसे पहले ही मैं बिल्कुल थक गया था, किन्तु मेरी हिम्मत कम न हुई थी। यद्यपि कपड़े भींगे थे, वहाँ गर्मी भी न थी, किन्तु बार-बार मुझे सिरसे पसीना पोछनेकी नौबत आई। मेरी और प्रकाश-छिद्रके मध्यमें किसी वस्तुके अवरोधक होनेपर मुझे गुस्सा आने लगता था। जितना ही हम आगे बढ़ते जाते थे वह प्रकाश-मार्ग भी विस्तृत होता जाता था। अन्तमें उसके द्वारा हमें पहाड़ी दिखाई देने

लगी। यह भी वैसी ही थी, जैसी कि द्वीपके और भागोंकी। मुझे विस्तृत अटलांटिकके देखनेकी इच्छा थी। मुझे उन रूखी दीवारोंसे कोई वास्ता नहीं था। आखिर मैंने अपने आपको द्वारपर पाया।

मैंने एक बार अपने आँखोंको मला, देखा तो मालूम हुआ कि हम एक ऊँची पहाड़ीके नीचे खड़े हैं। यहाँसे नीचेकी ओर खाड़ी है। रास्ता पुरानी जल-प्रणाली है। पहिली ही नज़रमें मुझे सामने खाड़ीमें खड़ा 'इन्द्रायुध' भी दिखलाई पड़ा। मैंने अविश्वास करते हुए एकबार फिर आँख मली, देखनेपर वृद्ध 'इन्द्रायुध' ही मालूम पड़ा। किन्तु था कुछ भेद ! खाड़ी कुछ अधिक विस्तृत थी, शायद पहिलेसे दूनी, और आश्चर्यकी बात यह थी, कि 'इन्द्रायुध'का आकार बहुत छोटा तथा सूरतमें भारी परिवर्तन।

मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। क्या कोई स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ। कहाँ यह मनोरम स्वच्छ संगमरमर सदृश पोत ! क्या किसीने जादू तो नहीं कर दिया; नहीं तो यह कायापलट कब सम्भव थी। मैंने एक बार फिर आँख मली, अब मुझे दिखाई पड़ा, कि यह 'इन्द्रायुध' नहीं हो सकता, न यह वह खाड़ी ही है। मेरे नीचेकी ओर थोड़ी दूर हटकर एक घर है। यद्यपि छोटा है किन्तु है घर, जिसकी छत टीनकी है, दीवार आदि सब लकड़ीके। देखनेमें बहुत सुन्दर स्वच्छ। दर्वाजे, खिड़कियाँ सब बाक़ायदा।

मुझे इन प्रत्यक्ष वस्तुओंपर अविश्वास होने लगा। खाड़ी, स्टीमर, बंगला सभी स्वप्नसे मालूम होने लगे। मुझे इनकी वास्तविकतापर यहाँ तक सन्देह होने लगा कि, मैंने पीछे फिर हरिकृष्णकी ओर मुँह फेरा। तब मैंने कहा, यह स्वप्न नहीं है। किन्तु तो भी मेरा आश्चर्य उतना ही रहा। मैंने कहा—

"देखिये। क्या यह सचमुच है।"

हरिकृष्ण भी मेरी ओर हक्का-बक्का हो देखने लगे। मैंने दुबारा जहाज़की ओर नजर दौड़ाई। अब मेरा शिर शून्य होने लगा। सच-

मुच यह सम्भव है, या मैं स्वप्ना रहा हूँ। क्या यह मेरे मनकी करामात तो नहीं है, जिसने एक अद्‌भुत खाड़ी, एक मनोहर जहाज़, एक सुन्दर बँगला मुझे मोहनके लिये निर्माण कर दिया है। आः! इस इन्द्रजालसे पार कैसे पाऊँ! कैसे अपने मस्तिष्कको, अपनी बुद्धिको स्वस्थ कर पाऊँ। क्या है। मैं कहाँ हूँ।

इस प्रकार कल्पना करते-करते मैं शून्यताकी सीमामें प्रवेश करना ही चाहता था कि उस बँगलेका द्वार खुला। उसमेंसे एक आदमी बाहर आया।



चतुर्थ अध्याय

बँगलेवाला आदमी

हाँ ! सचमुच आदमी । वह मकानसे बाहर आ, द्वारके पास ही खड़ा था । कुछ देर तक हम उसके मुखको न देख सके । वह हमसे परिचित न था । वह खाड़ी और जहाजकी ओर देख रहा था । वह एक नाविक मालूम होता था । शायद ऊँचे पदका । उसका कोट एक छोटे नाविक अफ़सरका था । किन्तु टोपी गोल मामूली माँझियोंकी-सी । उसको देखकर हमारा आश्चर्य अधिक नहीं बढ़ा; क्योंकि, जहाज और घरके पास मनुष्यका रहना स्वाभाविक था । किन्तु अभी भी गुत्थी सुलझी न थी । उसपर भी इस आदमीकी नीरवता, पुतलीकी भाँति गतिविधि । मेरी कल्पना-शक्ति फिर शिथिल होने लगी, मैं कुछ न सोच बोल चुप रहने हीमें विश्राम अनुभव करने लगा । इसी समय हरिकृष्णने मेरा मनोरथ भंग करते हुए कहा—

"आओ ! वन्दे मातरम् करें ।"

मेरे पास उसके लिये कंठ न था, अतः उन्होंने अकेले ही इस कामको किया । घोष भी बहुत धीमा-सा था । उसके कानमें पहुँचते ही उस व्यक्तिने शब्दके आनेकी दिशाकी ओर एक बार आँख उठाकर देखा । किन्तु फिर वही बेपरवाही, वही उपेक्षा, वही इच्छा-रहित गतिविधि । कोई जल्दी और आश्चर्यका वहाँ लक्षण न था । हम-लोगोंको देख लेनेपर भी वह चुपचाप खड़ा हमारी ओर ताकता रहा । मेरे मनमें अब फिर बेचैनीके लक्षण दिखलाई देने लगे । इसी समय यकायक हरिकृष्णकी आवाज आई—

"चलो नीचे चलें ।"—

सचमुच मुझे यह ऐसा निरर्थक, सूखा व्यापार मालूम होता था, कि मैं हँस पड़ा। तब हमलोग नीचेकी ओर दौड़ पड़े, और तब तक न रुके, जब तक कि शर्करिला एवं बालुकामय भूमिसे होकर उसके आगे न पहुँच गये। जब हम समीप आये, तो मालूम हुआ कि वह एक वृद्ध आदमी है, साठसे ऊपरका। दाढ़ी-मूँछ सभी श्वेत। बाल सन जैसे, चेहरेपर क्लान्तिकी रेखायें। किन्तु खास बात थी, उसकी दृष्टि हमारे वहाँ अकस्मात् जानेपर—हज़ारों कोश दूर, अनन्त जल-राशिके बीच, इस छोटेसे किन्तु रहस्यपूर्ण द्वीपके अत्यन्त रहस्यमय कोनेमें अपने देशके दो आदमियोंको इस प्रकार देखकर भी—उसमें आश्चर्य या जिज्ञासाका कहीं पता न था। नेत्र देखते थे, पलकें भी समय-समयपर उठती-पड़ती थीं, किन्तु मालूम होता था कि उनका सम्बन्ध मस्तिष्कसे नहीं था। इस व्यवहारको देखकर हरिकृष्ण भी एक बार चिन्तातुर हो उठे। उन्होंने साहस करके एक बार फिर कहा—

'बाबा!'

वृद्धने एक बार उन्हें शिरसे पैर तक नजर उठाकर देखा। किन्तु मुझे मालूम पड़ रहा था, कि उसकी नजरमें शंका, सन्देह तथा विरक्ति झलक रही है। उसने जब जबान भी खोली, तो भी उसकी आवाजसे वही रहस्यमयता जाहिर हो रही थी, जो उसकी प्रत्येक चेष्टासे।

उसने कहा—"कैसे आप-आप आये?"

हरिकृष्णने आगे बढ़कर कहा—"हम पहाड़ी परसे एक गड्ढेमें गिर गये थे, उसमें नीचे पानी था, उससे तैरकर निकलनेपर वर्षा-जलके रास्तेने हमें यहाँ पहुँचाया!"

वृद्धने एक बार आँखोंको हमारी ओरसे हटाकर उस तरफ डाला, जिधरसे हम आये थे। मालूम होता था, वह कुछ इसपर विचार कर रहा है। तब धीरेसे बोला—

"हाँ, मैं जानता हूँ उस पानीको। वह उस सुरंगके अन्तपर है। मैं कई बार वहाँ गया हूँ, किन्तु वहाँ तो कोई गर्त नहीं मालूम होता था।"

हरि—"हमें तो तैरकर निकलना पड़ा, करीब दस मिनट।"

वृद्ध—"कुछ भी हो, आप भीगे हैं। कपड़ोंके बदलनेकी आवश्यकता है। मेरे भी बहुत साथी रहे हैं, किन्तु वह कभी उस सुरंगसे नहीं आये। मुझे यह बिल्कुल नहीं मालूम, कि वहाँ कोई रास्ता है।"

उसकी बातचीत उसकी चेष्टाओंकी भाँति ही हमें हैरानमें डाल रही थी। हरिकृष्णने लाचार हो उकताकर कहा—

"हमारा जहाज बम्बईका 'इन्द्रायुध' है। वह रेतीली खाड़ीमें मरम्मत करनेके लिये खड़ा है। आपके जहाजका क्या नाम है।"

वृद्धने आस्ते और सीधे-साधे तौरसे कहा—"इसे 'पुष्पक' कहते हैं।" आपको इसका नाम इसके माँगेपर दिखाई देगा।"

हमने वहाँसे एकबार फिर जहाजकी ओर देखा। सारी ही वस्तुयें रहस्यमय और हैरानमें डालनेवाली थीं। इसपर मृत्युकी वह स्तब्धता। बीचमें एक बड़ी झील जिसके चारों ओर ऊँची पहाड़ियोंकी दीवार। सभी जादू-सा मालूम होता था।

हरिकृष्णने अन्यमनस्क हो कहा—"अच्छा, आपके साथ यहाँ कोई और नहीं है? क्या आप हमें कुछ सूखे वस्त्र और खाद्य-पदार्थ उधार दे सकते हैं?"

मालूम हुआ, वृद्धको इस समय कुछ अपने कर्त्तव्यका स्मरण आया, उसने कहा—"वहाँ जहाजपर कपड़ोंका ढेर है। आप तो हमारे चीफ-इंजिनियरके कदके हैं, और यह महाशय, बिलकुल हमारे द्वितीय इंजिनियरके बराबर। उनका वासा निचले तलपर है, दसवाँ और ग्यारहवाँ कमरा। आप जाइये, वहाँ जो आपके लायक हो उसे पहिन आइये।"

हरि—"यह तो ठीक है, किन्तु वहाँ लोग देखेंगे, तो क्या कहेंगे? क्या, वहाँ वह लोग नहीं हैं?"

वृद्धने अपना शिर थामकर कहा—"नहीं, वहाँ कोई नहीं है। वह लोग द्वीपकी पड़ताल करनेके लिये गये हुए हैं। सभी लोग चले

गये हैं, तभी तो आप यहाँ इतना सुनसान देख रहे हैं। यहाँका भार हमें सौंपा गया है। लेकिन जो कुछ मैंने कहा है, वह वही है, जो कि मालिक अगर होते तो कहते। इसलिये कोई चिन्ता नहीं जाइये।"

अब हमें कुछ भाव खुलता मालूम होने लगा। किन्तु, इतनी देर तक बूढ़ेने उसे क्यों छिपा रखा था? पहिले ही क्यों नहीं बता दिया। हरिकृष्णने मेरी ओर ताका, और मैंने भी उनकी ओर देखकर मुस्कुरा दिया। मालूम हो गया। बूढ़ा होनेसे इसे यहाँ छोड़ दिया गया है। और सारे लोग पड़तालमें गये हैं।"

हरि—"आप निश्चित हैं न, कि वह कुछ न बोलेंगे।"

"बिल्कुल" बूढ़ेने सीधेसे कहा। तब उसने हमें हाथसे लकड़ीके तख्तोंका बँधा एक घाट दिखाया, और कहा—"वह छोटी डोंगी है। शायद आप मेरे चलनेकी आवश्यकता न समझते होंगे! मैं ज़रा आज थका भी हूँ, और मेरी ज़रूरत भी नहीं है। आप डोंगी लेकर जायँ। वह बिल्कुल मज़बूत है, आप परवा न करेंगे, जो चीज़ आवश्यक हो निस्संकोच ले लेंगे। मैं उसके लिये उत्तरदायी हूँ।"

अब अधिक कुछ पूछनेकी आवश्यकता न थी। हमलोग डोंगीपर जा बैठे। तब हरिकृष्णने पतवार ले जहाज़की ओर खेना शुरू किया, जो कि वहाँसे प्रायः ४० हाथकी दूरीपर होगा। हमारे डोंगीपर बैठते ही वृद्ध वहाँसे बँगलेकी ओर चल पड़ा। उसने एक बार भी पीछे फिरकर हमारी ओर नहीं देखा। उसने दरवाज़ा खोला, और भीतर जा किवाड़ों-को बन्द कर लिया। सबसे बढ़कर तो हमें तब आश्चर्य हुआ, जब हमने वायु-प्रगति-शून्य उस शान्त स्थानमें भीतरसे ताला बन्द करनेकी खटक सुनी। हरिकृष्ण इसे सुनकर मुस्कुरा दिये, और बोले—

"निस्सन्देह, वह बड़ा अद्भुत आदमी है।" इसके बाद हम बूढ़ेको एकदम भूल गये।

जहाज़की बग़लमें तीन हाथ लम्बी, कालीनसे खूब सुसज्जित चढ़ने-की सीढ़ी थी। यह श्रीगणेश था, जिसने जहाज़के आन्तरिक स्वरूपका

पूरा परिचय करा दिया। वृद्ध पुरुषकी अनुमतिका ध्यान करके, हमने ऊपर जाकर 'पुष्पक'के सभी भागोंको देखना आरम्भ किया। यद्यपि हमने बन्द कमरोंको न खोला। खुले कमरोंमें भी बिना किसी वस्तुको हाथ लगाये ही देखा। सीढ़ीसे ही पता लग गया, कि 'पुष्पक' भाड़ेवाला जहाज़ नहीं है। यह बहुत ही सुन्दर और सुदृढ़ क़रीब दो हज़ार टनका जहाज़ है। आराम और आवश्यकताकी सभी वस्तुयें मौजूद हैं। सारे ही कमरे बिजलीके पंखों और लम्पोंसे सुसज्जित हैं। स्नानागार और क्रीड़ागारके अतिरिक्त क्रीड़ाक्षेत्र, पुस्तकालय आदि सभीका खासा प्रबन्ध है। इसके अंग-अंगसे सुन्दरता और सुदृढ़ता टपकती है। नयासे नया भी उपयोगी आविष्कार काममें लाये बिना नहीं रखा गया है।

एक बड़े कमरेको, जो किसी सम्पन्न पुरुषका बैठका और पुस्तकालय मालूम होता था, देखकर हरिकृष्णने कहा—"यह, और भी कौतुकोत्पादक मालूम होता है। देखो, यहाँ हज़ारसे ऊपर पुस्तकें हैं। इन्हें एक बार देखना अच्छा होगा।"

मैंने दो-चार जिल्दें उलटकर देखीं, किन्तु मुझे उनमें कोई मनोरंजक बात न मालूम हुई। सभी पुस्तकोंकी जिल्द एक प्रकारकी थीं, तथा उनपर लिखा था "भूगर्भशास्त्रीय समितिका कार्यविवरण"। हरिकृष्णने कई जिल्दें "प्रश्न और सूचनाओं"की उठाई। फिर कहा—

"बहुत पुरानी हैं। मैं समझता हूँ, इनका स्वामी कोई विज्ञानका प्रेमी है। लेकिन, यहाँ कुछ मासिक-पत्र भी हैं।"

मासिक-पत्रोंमेंसे उन्होंने दो-तीनको लेकर देखा। वह तब दो-तीन मिनट तक चुप रहे, किन्तु मैं पुस्तकालय देखनेमें लगा ही रहा। वह कुछ कहना ही चाहते थे, किन्तु न जाने क्यों रुक गये। और पत्रको वहीं रखकर दूसरे कमरेकी ओर उठ खड़े हुए।

यह कप्तानका कमरा मालूम होता था, और बहुत सुसज्जित था। हरिकृष्णने चारों ओर देखा। फिर एक बड़े मेज़के पास गये, जिसके पीछे तीन छोटी-छोटी पुस्तकोंकी आलमारियाँ थीं। मेज़ हीसे उन्होंने

कुछ पुस्तकोंके शीर्षक पढ़े। उन्होंने चुपचाप कई एकोंको लेकर देखा। फिर सबसे निचली तहसे चमड़ेसे आच्छादित काली फुलस्केप साइज़की एक पुस्तक उठाई। जिसके ऊपर सुनहरे अक्षरोंमें 'लॉग' (Log) लिखा हुआ था। मुझे ऐसे भी यह सारा व्यवहार मनोरंजक नहीं मालूम होता था, किन्तु हरिकृष्णका यह व्यवहार तो बिल्कुल नापसन्द था। यद्यपि वर्त्तमान परिस्थितिमें ऐसी जिज्ञासा होनी स्वाभाविक है। किन्तु कप्तानकी 'लॉग' बुक उसकी प्राइवेट लेख-संचिका है। मैं हैरान था कि आज हरिकृष्णको क्या हो गया है ! उनका ऐसा व्यवहार तो मैंने कभी नहीं देखा था। वह क्यों किसीकी प्राइवेट लेख-संचिका देखने जा रहे हैं।

हरिकृष्णने कुछ देखकर कहा—

"माधव', यह देखो।"

मैंने देखा। यह लिखे हुए पृष्ठोंमें अन्तिम था। मैं सबको न देख सकता था, किन्तु जो अंश वह देखनेके लिये कह रहे थे, वह यह था—

"पुष्पक" (कलकत्ता)की लॉग बुक।

स्वामी : महाराजा वीरेन्द्रकुमार, जगदीशपुर।

कप्तान : अर्जुनसिंह, रा. नौ.।

प्रथम अफ़सर : महेन्द्रनाथ सिंह।

यात्रा : "

आगेकी पंक्तियाँ हरिकृष्णके हाथके नीचे थीं। तुरन्त उन्होंने इसके बाद पुस्तकको बन्दकर उसके स्थानपर रख दिया और कहा—

"अब हमें कुछ पता लगा। 'पुष्पक' वैज्ञानिक खोजमें निकला था। जगदीशपुरके महाराज इसके और पुस्तकालयके, जिसको हमने पहिले देखा है, मालिक हैं। बाक़ी हम उस वृद्धसे जानेंगे। माधव ! हम लोग अपने यहाँ आनेका प्रयोजन ही भूल गये। अच्छा तो, पहिले निचले तल्लेके दसवें और ग्यारहवें कमरेमें चलना चाहिये। फिर

उन चीनीके स्नानीय चहबच्चोंमें एक साङ्गोपाङ्ग स्नान। तुम तो महाराजके स्नान-घरमें जाओ, और मैं कप्तानके। है न ?"

मैं—"हाँ! मेरी तबियत भी यही करती रही है।"

हमलोग, अब इंजीनियरके कमरेमें गये। सब चीज़ें बूढ़ेके कहनेके अनुसार ही मिलीं। मैं, वहाँसे एक ऊनी कमीज़ और एक जोड़ा ऊनी मोज़ा, एक सर्जका कोट और पतलून, एक टोपी और गुलूबन्द लेकर स्नानागारकी ओर गया। वहाँ साबुन, कंघी, शीशा, तेल, अस्तुरा, तौलिया सब तय्यार पाया। खूब मल-मलकर, दिल खोलकर स्नान हुआ। मेरा स्नान हरिकृष्णसे पहिले समाप्त हो गया था, अतः मैं बरांडेमें आ उनके इन्तिज़ारमें बैठ गया। थोड़ी देरमें वह भी आ गये। मैंने अपने आपको एक नया आदमी पाया। हरिकृष्णकी मुखाकृति गम्भीर देखकर मैंने पूछा—

"क्यों, क्या है ?"

हरिकृष्णने मुस्कुराकर कहा—"कुछ नहीं, अब हमें चलना चाहिये। बहुत बातें दर्याफ्त करनी हैं। यह अपने गीले कपड़े भी लेते चलने चाहियें, वहाँ सुखा लेंगे।"

इस समय पहाड़ियोंके ऊपर फिर गर्द या वही कुहरा एकत्रित हो चला था। वायुमंडल इतना स्तब्ध और नीरव था, कि धीमा-सा भी शब्द बहुत ज़ोरका मालूम होता था। हम लोग जहाज़, सीढ़ी और कमरोंकी बात करते हुए अपनी नावपर आ बैठे। बात करते हुए भी मैंने देखा कि हरिकृष्णका मन किसी गम्भीर विचारमें मग्न है, जिससे कि वह बात करते समय भी अलग नहीं होते थे। वह बोले—

"यह बड़ी ऊँची पहाड़ी है। वह बीचका धनुषाकार खोला, दो मील दूरसे देखनेपर बिल्कुल नहीं मालूम हो सकेगा। मालूम होता है, जब महाराजा पड़तालके लिये निकले थे, तो उन्हें यही रास्ता दीख पड़ा। और इसीसे वह सदल-बल 'पुष्पक'को यहाँ लाये। अब इस समय तो लौटकर 'इन्द्रायुध'के पास चलना असम्भव है। रात सिरपर

है। लेकिन कल हमें देर न करनी होगी। जितना जल्दी हो सके उतना, यहाँसे रवाना हो जाना होगा। मैं समझता हूँ, ऐसा करनेपर हम अपने साथियोंको ठीक उत्सुकताके समय ही पा लेंगे। हाँ! अभी बूढ़ेसे भी बहुत-सी बात जिज्ञास्य हैं।"

अब हमारी डोंगी चलने लगी थी। मैंने कहा—

"हाँ! मैंने उस दिन आपसे नहीं कहा था, कि अब समुद्रोंके वह आश्चर्यजनक सफ़र नहीं हैं। न वह यकबयक तकदीरका खुलना ही, जो सन्दबादके वक्तमें था। अब तो चारों ओर कड़ीसे कड़ी मिहनतकी आवश्यकता है। लेकिन तो भी हमारी यह यात्रा तो चिरस्मरणीय रहेगी।"

हरि—"चिरस्मरणीय ही नहीं अद्भुत भी। तुम्हें याद है, माधव, वह जिल्द-बँधी पुस्तक, महाराजाके पुस्तकालयमें?"

मैं—"हाँ! वह भूगर्भशास्त्रीय मासिक पत्र न?"

हरि—"हाँ! वही। मुझे मालूम होता है, महाराजा अच्छे विद्वान्, तथा भूगर्भशास्त्रके बड़े प्रेमी रहे हैं। लेकिन अमेरिकन जहाज भी तो इस द्वीपमें भूगर्भशास्त्रीय अन्वेषणके ही लिये 'रेतीली खाड़ी'में ठहरा हुआ है, और वह प्रोफ़ेसर भी एक प्रसिद्ध भूगर्भशास्त्री है।"

मैं—"यह तो ठीक है, लेकिन इससे क्या?"

हरि—"अभी हमें प्रतीक्षा करनी चाहिये, मैं कुछ भी निश्चित नहीं कह सकता। देखें क्या बात है।"

पञ्चम अध्याय

भगेलूकी राम-कहानी

वह छोटा बँगला सारा लकड़ी हीका बना हुआ था। पीछे पता लगा, कि जब महाराजने यहाँ आकर देखा, कि यहाँ कई महीने मुकाम करनेकी आवश्यकता होगी, तो उन्हें मकान बनानेकी सभी सामग्री लानेके लिये "मौन्ते-वायदो" (उरुगाय, दक्षिण अमेरिका)की यात्रा करनी पड़ी। वहाँ से सारा ही सामान यहाँ लाये। और उससे उन्होंने वह सुन्दर छोटा-सा लकड़ीका बँगला बनवाया।

हमलोगोंने दर्वाजेपर जा थपकी दी। किन्तु भीतरसे कोई आवाज़ न आई। इसपर फिर दूसरी थपकी दी, उसका परिणाम वही रहा। तब हरिकृष्णने कुंडा जोरसे खटखटाकर धक्का दिया। अबकी द्वारके तालेके खुलनेकी खटक सुनाई पड़ी।

दर्वाजा खुला। वृद्धकी दृष्टि वैसी ही शून्य थी। अबके उसके शिरपर टोपी न थी। सनकेसे बाल सिरपर बिखरे हुए थे। उसके चेहरेपर इस समय बुढ़ापेका निशान अधिकतासे दिखाई पड़ा। हरिकृष्ण प्रथम हीसे उसके साथ बड़ी सहानुभूति दिखाते थे। उन्होंने कृतज्ञता प्रदर्शित करते हुए कहा—

"लो, हमलोग लौट आये। हमने आपसे बहुत-सी चीज़ें उधार ली हैं, और आपके जहाजको भी देख लिया है। 'पुष्पक' सचमुच पुष्पक ही है।"

वृद्धने हमारे भीतर आनेके लिये रास्ता छोड़ दिया, फिर दर्वाजेको भेड़ दिया। तब उसी तरह चुपचाप, हमें लेते हुए एक कमरेमेंसे

गया। यह १४ वर्गफ़ीटका होगा। इसमें एक जँगला था, जिससे जहाज़ और खाड़ी दिखाई देती थी। इसमें एक अच्छा आरामदेह पलंग, एक छोटी-सी मेज़, कई एक कुर्सियाँ और गर्म रखनेके लिये एक सुन्दर कोयलेवाला चूल्हा था, जिसका धुँआकश बाहरकी ओर था। हमारे भीतर आनेपर उसने मेज़पर लम्प जलाकर रख दिया। लम्प बहुत सुन्दर तथा अच्छा प्रकाश दे रहा था। अब हमें भूख ख़ूब लगी हुई थी, किन्तु हमने देखा कि, उसने एक आदमी हीके लायक भोजन तय्यार किया है।

हरिकृष्णने पूछा—"मैं समझता हूँ, आपको हमलोगोंका स्मरण नहीं रहा।"

वृद्ध—"नहीं, ऐसा नहीं। किन्तु मुझे निश्चय नहीं था, कि आप वास्तविक थे। मेरे पास न जाने कितने मुलाकाती आते हैं, किन्तु कोई उनमेंसे वास्तविक नहीं होता। वही बात मैंने आपलोगोंके बारेमें भी समझी।"

हरि—"कैसे आप समझते हैं, कि वह वास्तविक नहीं होते?"

हरिकृष्णने बिना किसी प्रकारका आश्चर्य प्रकट करते हुए यह पूछा था। किन्तु उसके बादका दृश्य बड़ा ही करुणाजनक था। वृद्धने पहिले तो कई मिनट आँख उठाकर हमारे मुखोंकी ओर देखा। फिर समीप आकर, अपने हाथको मेरे कन्धेपर रखा, मेरी आँखोंकी ओर ख़ूब ध्यानसे देखा, और मेरे ललाटको उठाकर देखा। अब मैंने उसके दिलमें विश्वास आते समझा। उसने हमलोगोंसे कहा—

"अच्छा, तब तक इसे आप लोग खायें, मैं अभी आध घण्टेमें भोजन तय्यार कर देता हूँ।"

इसपर हमलोगोंने कहा, कोई हर्ज नहीं। एक ही साथ खायेंगे। अब वृद्ध रसोईघरमें गया, जो बँगलेके एक कोनेमें था। हमलोगोंने भी चुपचाप बैठनेकी अपेक्षा बूढ़ेके काममें सहायता देना अच्छा समझा। हमारे वैसा करनेपर वृद्धने कोई आपत्ति न की। वहाँ मिट्टीके तेलवाले

कई चूल्हे तथा 'कूकर' थे। तवा, कढ़ाई, करछी, चम्मच सभी मँजा मँजाया रक्खा था। वृद्धने आलमारीसे कई टीन बाहर किये, किसीमें गोभी, किसीमें शल्गम, किसीमें बैगन आदिका शुष्का (भूरी) था। नमक, मसाला, तेल, सुरक्षित मक्खन—सभी डिब्बोंमें मौजूद था। उसने एक थैलीसे चावल निकाले। सभी चीज़ें बर्त्तनोंमें नीचे-ऊपर रखकर 'कूकर'में बैठा दी गईं। आग बड़ी तेज़ थी, रसोई तय्यार होनेमें मैं समझता हूँ, शायद २० ही मिनट लगे होंगे। अब भगेलूने तीन थालियों और कई कटोरियोंमें दाल, भात, तरकारी सभी चीज़ें परोसीं। एक जमा हुआ दूधका टीन खोलकर, थोड़ा गर्मागर्म दूध भी तय्यारकर रख दिया। शीशोंमेंसे दो-तीन तरहके अँचार भी निकाल-कर सामने रखे।

वृद्धने कहा—"मालिकिनने चलते वक्त घर हीसे बहुत-सा अँचार, मुरब्बा, अमावट सूखी तरकारियाँ रख दी थीं। आप सब खूब खायें, कोई हर्ज़ नहीं। सब चीज़ोंसे भंडार भरपूर है।

तीनों आदमी आसनपर बैठ गये। उस भोजन और उसके आनन्द-का क्या पूछना है। जिह्वामें उसके वर्णन और कलममें उसके लिखनेकी शक्ति नहीं है। हर एक वस्तुमें अमृतका स्वाद आ रहा था। धीरे-धीरे भोजन समाप्त हुआ। अब हमलोग थाली-वाली धो-धा अपने कमरेमें आये। हरिकृष्ण वृद्धकी हर एक बातको बड़े ध्यानसे देख-सुन रहे थे। उन्होंने बड़ी नर्मीसे कहा—

"कैसे मुलाक़ाती आपके पास आते हैं? ज्ञात होता है वह प्रायः आया ही करते हैं।"

वृद्ध—"हाँ। रोज-रोज। पुराने मित्र, जहाजके साथी, जितने भी हमारी सभी यात्राओंमें मिले थे, सभी आते हैं; किन्तु उनमेंसे कोई सचमुचका नहीं। सब भ्रमात्मक, अवास्तविक। प्रायः नित्य ही मालिक घाटपर आते हैं, जहाँसे कि वह गये थे। उनकी बगलमें कप्तान, इंजीनियर सभी जहाजी साथी भी रहते हैं। एक दिन तो मुझे वह

यहाँ तक वास्तविक मालूम पड़े, कि, मैं घाटपर दौड़ गया। लेकिन जब मैं हाथ छूने लगा, तो देखा कि वहाँ कोई नहीं।'

लैम्पके प्रकाशमें मैंने देखा, कि उस समय उन शून्य-दृष्टियोंमें कुछ आश्चर्य और करुणाकी झलक थी। उसकी करुणापूर्ण दृष्टि जो मेरे चेहरेपर उस समय थी, मेरे हृदयको डाँवाडोल कर रही थी। उसने अपनी बात जारी रक्खी—

"एक दिन 'माया' भी तैरती हुई ठीक सूर्यास्तके समय, जब थोड़ा-थोड़ा अँधेरा होने लगा था, ठीक घाटके सामने आ लगी। आप जानते हैं, पहिले उसीपर मैं और कप्तान महेन्द्रनाथ रहते थे। एक बार हम लोग दक्षिणी अफ्रीकाके 'दर्बन' शहरमें मुसाफ़िरोंको लेकर भारत लौटनेके लिये तैयार थे, उसी समय वहाँ नई सोनेकी खानकी खबर उड़ी। थोड़ी ही देरमें सारे मुसाफिर जहाज खालीकर उधर दौड़ गये। हमें ६ महीने खाड़ीमें चुपचाप पड़ा रहना पड़ा। 'माया' बिल्कुल 'पुष्पक'के पास ही खड़ी हुई। उसकी छतपर कप्तान महेन्द्र थे, वैसे ही लम्बे-चौड़े, और मूँछें भी वैसी ही बड़ी। उन्होंने पुकारकर कहा—"भगेलू। तुम यहाँ हो? हम तुम्हें लेने आये हैं। देखो, बड़े तड़के ही तुम चले आना, हम तुम्हें घर ले चलेंगे'। मैंने कहा—"नहीं, कप्तान महेन्द्रनाथ! मैं नहीं आऊँगा। देखते नहीं हो, मालिक मेरे ऊपर सब छोड़कर सैर करने गये हैं। बिना उनके आये मैं यहाँसे कैसे टल सकता हूँ। यह तुम्हारे लिये ठीक नहीं, कि तुम मुझे उन्हें छोड़कर भाग चलनेकी सलाह दो।" तब मैंने कप्तान महेन्द्रको ठठाकर हँसते सुना। उन्होंने कहा—'अरे! यह वही बूढ़ा भगेलू है। यह मालिकके पीछे सत्ती होगा। यह कभी नहीं टससे मस होगा।' फिर जब मैंने सबेरे उठकर देखा, तो 'माया' वहाँ नहीं थी। लेकिन बाबू! क्या 'माया' सचमुच आई थी। नहीं, वह सिर्फ़ धोखा था।"

इसके बाद थोड़ी देर तक बिल्कुल सन्नाटा रहा। तब हरिकृष्णने

कहा—"अच्छा, तो कृपा करके हमसे अपने मालिककी बात कहो। वह कितने दिनोंसे बाहर गये हुए हैं?"

भगेलूका, मालूम होता था, ख्याल कहीं दूसरी जगह था। उसने थोड़ी देरमें धीरेसे कहा—

"एक महीना हुआ होगा, या शायद कुछ दिन अधिक। जानते हैं, मालिक, पहिले प्रथम अफसर, चीफ़ इंजीनियर और दस आदमियों-को लेकर गये। वह एक सप्ताह बाहर ही रहे, और जब लौटकर नहीं आये, तो कप्तान अर्जुन उत्सुक होने लगे। उन्होंने फिर दूसरी टोली भेजी कि देखें क्या हुआ। लेकिन वह भी न लौटी। तब आठ-दस दिन बाद, कप्तान स्वयं दूसरी टोलीके साथ गये। वह रामकुमार, रामप्रसाद और मुझको यहाँ छोड़ गये।"

हरि—"और वह दोनों कहाँ हैं?"

इसपर बूढ़ेकी शून्य-दृष्टिमें एक बार क्रोधकी आभा दिखलाई पड़ी, उसने काँपते स्वरसे कहा—"जिसके वह योग्य थे, वैसा ही हुआ। थोड़े ही दिनोंके बाद वह उकताने लगे। वह यहाँसे भाग जानेकी सलाह करने लगे। मुझे भी कहा। मैंने कहा 'भगेलू जब तक मालिक न आवेंगे तब तक क्या यहाँसे टकसेंगे? मालिकका नून खाकर हराम करना है थोड़ा? मेरी सात पुश्त मालिक हीकी पाली-पोसी है। नहीं मानते हो, तो जाओ, इसकी सिद्धि देखोगे।' इसपर वह दोनों बड़ी डोंगी और बहुत-सा खाने-पीनेका सामान लेकर, उसी रास्तेसे गये, जिससे हमलोग यहाँ आये थे। लेकिन दूसरे दिन नावका एक टुकड़ा, राम-प्रसादको यहाँ लाया, और साथ ही ज्वारने रामकुमारको भी यहीं पहुँचा दिया। मेरे पास इतनी लकड़ी कहाँ थी, कि उन्हें जलाता। कई दिन तक दोनों यहीं तैरते रहे। फिर एक बार भाटा उन्हें यहाँसे घसीट ले गया। मैंने कहा यही दिखानेके लिये आये थे, कि भगेलू! देखो जो नमककी शरियत नहीं देता, उसकी क्या दशा होती है?"

हरि—"तबसे, फिर तुम अकेले ही हो?"

भगेलू—"हाँ। लेकिन जहाज़में सब चीज़ है, आपने तो देखा है। उस सबकी देख-भाल मेरे ही ऊपर है। जहाज और, इस बँगला दोनोंका भार मेरे ऊपर है। मुझे सब चीजोंको ठीक और स्वच्छ रखना है। जानते हैं, जो मालिक आ गये तो गंदा देखकर मुझे क्या कहेंगे। मालिक तो बड़े अच्छे हैं, मुँहसे कुछ नहीं बोलेंगे, किन्तु मनमें तो उनके होगा न, कि भगेलू मुँहपर 'हूँ' 'हूँ' करता है। चार दिन भी हमें बाहर गये नहीं हुआ कि वह अपना काम ही भूल गया। इसीलिये चुपचाप बैठनेके लिये मुझे फुर्सत नहीं है। सबको झाड़-पोंछ तैयार रखना होता है।"

हमलोगोंने जहाज देखा था। सभी चीजें कितनी साफ़ थीं। सचमुच यह एक आदमीके करनेसे अधिक काम था। बिचारा बूढ़ा मालूम होता है, सबेरेसे शाम तक बराबर इन्हीं कामोंमें लगा रहता है।

हरि—"तुमने कहा कि हमलोग उधर उस पहाड़की ओरसे इस खाड़ीमें आये। क्या और भी किसी दूसरे रास्तेका पता मिला है? किस रास्तेसे महाराजा यहाँसे गये? तुमने उनकी टोलीका तबसे कुछ पता लगाया है?"

भगेलू—"हाँ, बाबू! महाराजा द्वीपको पार करना चाहते थे। वह समझते थे कि, उत्तर ओरसे कोई आगे जानेका मार्ग होगा। यह रास्ता बड़ा कठिन है। बल्कि कोई रास्ता नहीं है। ऐसे ही ऊभड़-खाभड़ चट्टानें हैं। उनपरसे जाना बड़ा कठिन है। मैं दो दिन खोजमें गया। पिछले ही सप्ताह तो। और अन्तमें उत्तरी पहाड़ीकी जड़में पहुँच गया। फिर उसके बाद आगे जाना बन्द था। सिर्फ वहाँपर एक गुफा थी। किन्तु मेरे पास पर्याप्त मोमबत्ती नहीं थी कि उसके भीतर जाकर देखता, इसलिये लौट आया। मैं थोड़ी और प्रतीक्षा करके फिर जानेका विचार रखता हूँ। लेकिन यह टापू ऐसी गुफाओं और खड्डोंसे भरा पड़ा है।"

हरि—"हाँ ऐसा ही है।"

भगेलू—"हाँ बाबू ! ठीक कहते हैं। और मुझे खुली जगह, खुली हवा, खुला समुद्र अच्छा लगता है।"

थोड़ी देर लोग चुप रहे। उस समय हमारे मानस चक्षुओंके सन्मुख तो था वह भयानक महागर्त, और भगेलूकी वह अँधेरी गुफा। किन्तु अभी हमें और दर्याफ्त करना था। हरिकृष्णने पूछा—

"काहे महाराजा इस ऊजड़ टापूमें आये ? इतनी बड़ी कठिनाई उठाकर इतने दूर आनेका उनका अभिप्राय क्या था ?"

भगेलू—"कंकड़, पत्थर, देखनेके लिये, इसे न जाने वह क्या कहते बाबू ! नाम ही नहीं याद आता।"

हरि—"भूगर्भशास्त्र"।

भगेलू—"हाँ ! यही-यही। इसी खिलवाड़के वास्ते महाराज पृथ्वी भर मारे-मारे फिरते रहे। घर-बार, लड़का-बाला, सब सुख छोड़, इसीका तो मालिकको न जाने क्या नशा हो गया था। इसीके लिये हम सबको लेकर देखो न, दक्खिणी अमेरिकाके पास, पृथ्वीके छोरपर चले आये। आओ न देखो, यह दूसरे कमरेमें।"

भगेलू हाथमें लैम्प लेकर आगे-आगे चल पड़ा। यह कमरा भी उतना ही लम्बा-चौड़ा था। बीचमें एक चारपाई, एक मेज और कई कुर्सियाँ उसी भाँति इसमें भी थीं। किन्तु विशेषता थी यह, कि यहाँ दीवारके पास एक आलमारी-सी खड़ी थी, जिसमें बहुतसे ड्रायर (खाने) लगे हुये थे। भगेलूने लैम्प मेजपर रख दी और एक ड्रायरको खींच-कर कहा—"देखिये न, कितने छोटे-छोटे पत्थर यहाँ हमने जमा किये हैं। सैकड़ों तो यहाँ मौजूद हैं, और निस्सन्देह अबकी मालिक लौटेंगे, तो और बहुत-सा लावेंगे। मालिक सब चीज़ोंको बड़े कायदेसे रखा जाना पसन्द करते हैं। यह नहीं कि, जहाँ चाहो वहाँ उनका ढेर कर दो।" पीछे फिरकर चारपाईकी ओर संकेत करके "और यह मेरा बिछौना है। सब नमूनोंके पास मालिकने मुझे सोनेको कहा है। वह दूसरी पलंग उस कमरेवाली महाराजकी है। आप लोग उसपर सोवें।

कोई चिन्ता न करें, मुझे निश्चय है, कि वह इसे बुरा न मानेंगे। मैं जिम्मेवार हूँ।"

इसके बाद उसने लैम्प उठा ली। और हमलोग साथ-साथ दूसरे कमरेमें आये। बूढ़ेने फिर कहा—

"मैं भी जगदीशपुर हीका रहनेवाला हूँ। हमारा खान्दान बहुत दिनोंसे, महाराजके पुरुखोंके समय हीसे, सेवा करता चला आ रहा है। मेरे पिता बड़े सरकारके खास खवास थे। मैं भी महाराजके साथ बराबर उनकी सेवामें रहा हूँ। एक बार जवानीमें मुझे सनक सवार हो गई थी। तबमैं घरसे बिना पूछे-पाछे ही भाग गया। मैं कलकत्तामें जा जहाजपर नाविकका काम करने लगा। उसके बाद कई वर्षों तक मैंने आस्ट्रेलिया, यूरोप, चीन, जापान, अमेरिका, अफ्रीकाके भिन्न भिन्न भागोंमें कई बार यात्रा की। पीछे जबमैं एक बार घर गया तो पिताने महाराजसे मेरी चर्चा की। महाराज, हाँ यही हमारे महाराज, तब महाराज हो गये थे। इन्होंने बुलाकर कहा—'भगेलू! तुम हमको छोड़कर बाहर ही बाहर कब तक रहोगे? देखो, तुम्हारे पुरुषोंका हमारा आजका सम्बन्ध नहीं है। अब तक जो हुआ सो हुआ। अब तुम हमारे पास रहो। बल्कि तुमने एक प्रकारसे इतने दिनों तक बाहर रहकर अच्छा ही किया। तुम अब एक अच्छे नाविक हो गये। हमें भी बहुत समुद्र-यात्रा करनी है।' बस तभीसे मैं बराबर मालिक हीके साथ हूँ। आप समझ सकते हैं, कि क्यों मैं रामकुमार और रामप्रसादके कहनेमें नहीं आया।"

जिस समय भगेलू यह बातें कर रहा था, मैंने हरिकृष्णके चेहरेपर देखा, कि उसमें कितनी, वृद्धके अज्ञात शोकप्रवाहके साथ समवेदना है? वह छोटेसे कमरे और उसके लकड़ीके असबाबको कितनी हसरत भरी निगाहसे देख रहे थे? वृद्धने अन्तमें इस प्रकार अपनी कहानीका उपसंहार किया।

"मैं बराबर ज़रा देरसे सोता हूँ। दिन भर तो मैं अपने मालिकके काममें रहता हूँ। रातके समय भोजनके बाद थोड़ा रामायण बाँचता हूँ। मैं समझता हूँ आपलोगोंको सोनेमें देर होती होगी।"

हरि—"नहीं, अभी कोई जल्दी नहीं। लाओ हम भी रामायण सुनेंगे।"

तब वृद्धने रामायणकी पोथी सामने रखकर कहा—"देखिये, यह हमारी मालिकिनके हाथकी पोथी है। जब हमने पिछली बार यह यात्रा की, तभी महारानीने मेरे लिये यह पुस्तक मँगवा कर दी। मैंने कहा था—मालकिन, मैं रोज इसका पाठ करूँगा।"

वृद्धने बड़े करुणा भरे स्वरसे, भोजपुरी लयमें तीन दोहोंका पाठ किया। उस निस्तब्ध स्थान, उस महानिशाकी नीरवतामें वह मुझे कैसा मालूम होता था, यह मेरा मस्तिष्क अब भी उत्तर देने योग्य नहीं हुआ है। पाठ समाप्त होनेपर वृद्धने कहा—

"आपके पास लैम्प है, किन्तु, इसे व्यर्थ न जलने दीजियेगा। जब काम हो जाय उसी वक्त इसे बुझा दीजियेगा। यहाँ तैल, मोमबत्ती कम नहीं है। किन्तु काहेको उनका व्यर्थ व्यय किया जाय।"

इसके बाद भगेलू अपने कमरेमें चला गया। तब हरिकृष्णने धीमे स्वरसे मुझसे कहा—"क्या तुमने कुछ समझा माधव?"

मैं—"मैंने तो गाड़ीका गाड़ी समझा है, किन्तु उसको यहाँ कहनेकी क्या आवश्यकता है? जो कुछ भी हो बुड्ढा बड़ा भला आदमी है।"

हरि—"इसमें क्या शक है? और इससे भी बढ़कर अच्छी बात यह है, कि इसने सभी बातें भुला रक्खी हैं।"

मैं—"क्या? भुला रक्खी हैं?"

हरि—"हाँ। इस वक्त वह हम लोगोंको भी भूल गया होगा। उसे सबेरे यह स्मृति भी नहीं रहेगा कि, हमलोग वास्तवमें रातको

यहाँ रहे थे। याद करो रामकुमार और रामप्रसादकी बात। क्या तुम समझते हो कि, एक-दो सप्ताहके बाद उकताकर वह यहाँसे भागने लगे, जैसा कि बूढ़ा कहता है? हर्गिज़ नहीं। वह कई हफ्ते कई मास नहीं किन्तु सम्भवतः कई वर्ष यहाँ प्रतीक्षा करते रहे। जब वह सब तरहसे निराश हो गये। जब उनकी भी सोचनेकी शक्ति क्षीण होने लगी; तब उन्होंने इस भूल-भुलैयाँसे बचनेका प्रयत्न किया। इसका जो परिणाम हुआ वह तुमने सुना ही। कभी मत आशा करो कि महाराजाके नौकर, जो सम्भवतः अत्यन्त विश्वासपात्र थे, हज़ारों कोस दूर समुद्रके अन्दर एक भयानक खाड़ीसे एक डोंगेके सहारे, अकेले दो आदमी, इतने बड़े साहसके लिये सिर्फ़ दो सप्ताहके इस निर्जन-प्रवाससे ही तैयार हुये होंगे। भगेलू समझता है यह सभी बातें हफ्ते दो हफ्तेकी हैं। उसमें अब समयकी गतिका ज्ञान ही नहीं है। वह जानता है, दिन आया, अब रात आई, अब फिर·····। किन्तु कितने दिन कितनी रात इसका उसे कुछ हिसाब नहीं। वह जीता है, क्यों जीता है, इसका भी उसे पता नहीं। वह घटनाओंको जानता है, किन्तु उनके घटनेके समयका उसे पता नहीं। उसके लिये सारी घटनायें आसन्न भूत,—बल्कि कल हीकी मालूम पड़ती हैं। समझे?"

इसे सुनते ही मेरे बदनमें बिजलीसी दौड़ गई। मेरे दिमागपर मालूम हुआ, मानो यकबयक बज्र गिर पड़ा। मैं अभी आजकी इन घटनाओंको तलपरसे देखता था। मैंने उनकी गहराई, उनके अन्तर-रहस्यका कुछ भी न पता पाया था, न उसके लिये कोई प्रयत्न ही किया था। हरिकृष्णके शब्द साफ़ थे। मैं यह भी जानता था, कि वह बड़े परिश्रमके परिणाम हैं। उन्होंने अपने अभिप्रायको और भी व्यक्त करते हुए कहा—

"मैंने जहाजपर यह बात इसलिये नहीं कही कि, इसका जरा और पता लगा लें। लेकिन अब जो मैंने कहा उसे तुम शुद्ध सत्य समझो।

तुमने देखा नहीं, वह पुस्तकें, वह पत्रिकायें कितनी पुरानी थीं! मैंने कप्तानके लॉगबुककी अन्तिम लेख-तिथि तुमको नहीं दिखलाई थी। जानते हो, वह थी ५ कर्क सम्वत् १९६१। और आज यह है ४ कर्क १९८१। इसलिये, समझमें आया, भगेलू इस निर्जन निष्ठुर द्वीपमें, इन रूखी पहाड़ियोंकी चहारदीवारीके अन्दर इस घर इस जहाज और अनगिनत भूत-प्रेतोंके साथ २० वर्षके ऊपरसे रह रहा है।



षष्ठ अध्याय

जेलका भीतरी

हरि—"माधव ! जागे हो ?"

मैं—"हाँ" ।

हरि—"तो हमलोग कुछ बातचीत करें । बहुत सोचना, मैं समझता हूँ, लाभदायक न हो, हानिकारक हो सकता है ।"

मैं सूर्योदयसे एक घंटा या उससे अधिक ही पहिलेसे जाग गया था । दिमाग़ मेरा विचार-तरंगोंमें ऊब-डूब हो रहा था । वही दशा हरिकृष्णकी भी थी, किन्तु मैं उनकी निद्रा भंग होनेके डरसे बोलना उचित नहीं समझता था । हमलोग युवक थे । एक बार गहरी नींद आ जाने हीसे सारी थकावट दूर हो जानेवाली है ! हरिकृष्णने आस्ते-आस्ते बात करना आरम्भ किया जिसमें कि, बूढ़ेकी निद्रामें विघ्न न हो । उन्होंने कहा—"यह कैसा वीभत्स स्वप्न-सा प्रतीत होता है । मैं जितना ही सोचता हूँ, उतनी ही तबियत घबराने और दिल सिहरने लगता है । २० वर्ष इस प्रकारके स्थानमें ! अवश्य, ऐसी अवस्थामें काल-ज्ञानका न होना ही अहोभाग्य है ।"

मैं—"हाँ ! वह वाञ्छनीय है ।"

हरि—"ठीक ऐसा ही । एक ओर यह काल-ज्ञानका अभाव, और दूसरी ओर कर्त्तव्य, विश्वास और भक्ति । शायद यह काल-ज्ञानके विस्मरण होनेसे पहिले ही आ गये थे । या यों कहो इसीमें उसने और सब कुछ भुला दिया । उसने इसी मार्गपर चलते-चलते मितव्ययिता भी सीख ली । यद्यपि जहाजमें सामान भरा है, तो भी एक आदमी इतने दिनोंमें बहुत अधिक खा सकता है । २० वर्ष बहुत होता है ।

मुझे हरिकी बातोंकी सत्यता बहुत जल्द मालूम होने लगी। कोयला, तेल आदि सभी पदार्थ यद्यपि अब भी जहाजपर थे, किन्तु अन्दाज़ करनेपर हमें मालूम हुआ, कि वह सब हमारे तीनों आदमियोंके लिये तो ६ मासके लिये ही पर्याप्त हो सकेंगे। भगेलूने सर्वथा तपस्वीका जीवन व्यतीत किया है। यदि वह ही अकेला रहता, तो इसमें शक नहीं कि इस हिसाबसे अधिक दिन तक चला ले जाता। आखिर कितना करुणापूर्ण, कितना दिलको हिला देनेवाला दृश्य! दिन प्रति दिन उस परिमित भाण्डारका व्यय होते-होते क्षीण होता जाना!

हरि—"किन्तु, इतना ही नहीं। रात सोनेके वक्त सोचा था कि जल्दी जहाँ तक हो सके, हम 'इन्द्रायुध'को पकड़ें। किन्तु अब वह बात मुझे बहुत दूरकी मालूम होती है। अब मालूम होता है, हमारे और इन्द्रायुधके बीचका फ़ासिला न जाने कितने वर्षोंका है। बात अब सरल नहीं है।"

मैं—"नहीं है, हाँ।"

हरि—"तो क्या करना चाहिये? जिस मार्गसे हम यहाँ पहुँचे उससे तो लौटा जाया नहीं जा सकता है। अब बाक़ी एक ही मार्ग है, जिससे 'पुष्पक' यहाँ आया है। किन्तु यहाँ एक ही छोटी-सी डोंगी है—सो भी हमारी नहीं है। यह बूढ़े भगेलूकी है, जिससे वह जहाज और बँगलेके बीच यातायात करता है। उसे हम ले जा नहीं सकते। ले जानेपर भी वह प्रयत्न, मैं समझता हूँ मूर्खतापूर्ण ही होगा। जब इससे कहीं बड़ी नाव द्वारा भी रामप्रसाद और रामकुमार नहीं पार कर सके तो, इस छोटी डोंगीकी क्या बिसात है? यदि उस तंग दर्रेमें तीक्ष्ण तरंग हुई, तो फिर, विद्युत्-संचालित बोट ही जा सकता है।" मेरे दिमाग़में इसके हलकी कोई सूरत नहीं समाती थी। मैं उनकी बातोंमें बिल्कुल सच्चाई पाता था। मेरा कुछ भी बोलनेका उत्साह नहीं होता था।

हरि—"कप्तान, प्रभुनाथ, विक्रमसे सुनकर अवश्य हमारी तलाश

करेंगे। किंतु उससे लाभ? मान लो थोड़ी देरके लिये, कि एक आदमी किसी तरह उस महागर्तके भीतर लटकाया गया। तो भी वहाँ क्या हाथ आवेगा? अन्धकार, और घोर अन्धकार या अगाध अदृश्य जल! इससे तो उन्हें जल्द निश्चय ही हो जायगा कि हमारा काम तमाम हो गया, अब वेशी खोजनेकी आवश्यकता नहीं। और यह खयाल करना कि किसी प्रकार अपनी यहाँकी उपस्थितिकी सूचना उन्हें दी जाय, सो भी असम्भव है। यदि बन्दूक भी छोड़ी जाय तो भी, आवाज़ इन ऊँची पहाड़ियोंके घेरेसे बाहर जा ही कैसे सकती है? इसके बाद वह लोग भी तो इस प्रकारके एक घेरेमें हैं। रहा लाँघकर पार जाना, सो तो शायद बकरियाँ भी नहीं कर सकतीं।"

मैं—"लेकिन क्या करना होगा। देर करनेसे 'इन्द्रायुध' निराश हो चला जायगा। और जानेके लिए यह अड़चनें। तो भी चुपचाप हाथ-पैर मारना छोड़कर अपनेको इस क्रूर अवस्थाके हाथमें समर्पण कर देना भी तो उचित नहीं प्रतीत होता। क्या, यह अच्छा नहीं होगा, कि हम ज़रा आसपास घूमकर देखें!"

हरि—"मैं भी यही ठीक समझता हूँ। किन्तु, हमें बूढ़ेके दिलमें किसी प्रकारकी वेकली न पैदा होने देना होगा।"

प्रातःकालके उजालेमें, मगेलूको बिना आहट देते, हमलोग आस्तेसे अपने बिछौनेसे उठकर, घरसे बाहर चले आये, अब हमने आसपासकी भूमिकी देखभाल शुरू की। अभी सूर्यका प्रकाश हमारे पास तक नहीं पहुँच सका था, किन्तु पहाड़ियोंपर मालूम होता था; चारों ओर वही नीरवता अब भी अविच्छिन्न व्याप रही है। चारों ओर मृत्युकी छाया है। कहीं भी जीवनका चिह्न नहीं मालूम होता। हरिकृष्णने मेरे कन्धे-पर हाथ रखते हुए कहा—

"तैय्यार हो जाओ हिम्मतके साथ जवान! हमलोग कोई न कोई रास्ता निकाल लेंगे। आओ समुद्रके किनारे होकर घूमें।"

अब हमलोग उसी तरफ़से चल रहे थे। सचमुच हमारी समस्या

बड़ी कठिन थी। मैंने बहुतसे जासूसी उपन्यास और कठिनाइयोंसे मुक्त हुए वीरोंके वृत्तांत पढ़े हैं, किन्तु मुझे तो ऐसी कठिनाई कहीं भी सुननेमें नहीं आई। यदि वह लोग भी इस परिस्थितिमें आते, मुझे तो उम्मीद है, उनकी भी मेरी ही जैसी दशा होती।

यह द्वीप जिसपर हमलोग खड़े थे, वास्तवमें एक अत्यन्त प्राचीन, अन्तर्लीन ज्वालामुखीका शिखर था। रेतीली खाड़ी, जिसमें 'इन्द्रायुध' खड़ा था उसीका एक मुख विवर था, जो कालान्तरमें निम्न होते-होते, जल और वायुके प्रभावसे अन्तमें वर्त्तमान रूपमें परिणत हो गया। किन्तु ज्ञात होता है, इस ज्वालामुखीके दो मुख थे। दूसरा यही रहस्यमयी खाड़ी जिसके किनारे हमलोग खड़े टहल रहे थे। दोनोंके बीचमें ६ मील तक भयंकर चट्टानी पहाड़ियाँ थीं। करीबसे करीब जानेपर भी खाड़ीका काला मुख, जो पहाड़ियोंके बीचमें हमको दिखलाई पड़ता था, वह बड़ा ही रोमाञ्चकारी था। वहाँ पानीका वेग तीव्र एवं लहरें बड़ी खतरनाक थीं। मेरी समझमें कोई समझदार नाविक इस मार्गसे आनेकी हिम्मत नहीं कर सकता। एक तो महाराज-को उनकी ज्ञान-पिपासाके कारण इधर आनेकी अत्यन्त आतुरता थी। दूसरे शायद उस समय ज्वार रहा हो, इसलिये धार कम हो। इस मार्ग की चौड़ाई, यद्यपि तीन जहाजोंके एक साथ निकलनेके बराबर है, किन्तु और बातें कदापि सन्तोषजनक नहीं हैं।

युग बीत गये, जब यह मुख-विवर पिघले हुए लावा भाप और राख उगला करते थे। जब इनके मुखोंसे हजारों तोपोंकी एक साथ आवाज-सी आ रही थी। यह पिघले हुए पत्थरोंका समुद्र-सा उसके चारों ओर बहने लगा। जब वह आग उगलना थम गया। जब वह लावाकी बाढ़ रुक गई। तब धीरे-धीरे वह सब ठंडा होने लगे; और उन्होंने इन पहाड़ियोंका रूप धारण किया। कितने ही समयके बाद एक और परिवर्त्तन आया। अब यह खाली मुख-विवर समुद्रके जलसे भरने लगे। धीरे-धीरे इन्होंने खाड़ीका रूप धारण किया। अपने पुराने रास्ते-

के अवरुद्ध हो जानेसे जब कभी अग्निने फिर बाहर जानेकी इच्छा की, तो उसने दूसरे रास्ते बनाये, जिनमें ही शायद एक वह भी है, जिसमें हमलोग गिरे थे। और जो अब इसीकी भाँति जलपूर्ण है। यह गर्त, और यह चट्टानें हैं जिन्होंने इस द्वीपको 'मधुच्छत्र' नाम दिया।

यह 'गुप्तसमुद्र' उत्तर-दक्खिन एक मील और चौड़ा पौन मीलके करीब होगा। तटपर काली ज्वालामुखीय रेत थी, जिसके पिछले भागमें पत्थर और चट्टान जिसके पीछे वही भीष्मकाय दीवारें; जिनमें जहाँ-तहाँ हल्की-हल्की रेखायें-सी थीं। शायद इन्हींसे महाराजाने अपने नमूने एकत्रित किये थे। यह यात्रायें बहुत छोटी-छोटी हुई होंगी। कोई-कोई तो शायद कुछ घंटों होकी रही होंगी। शायद इन यात्राओंसे लौट थैलों भरे पत्थरोंको फिर महाराजा पृथक्-पृथक् करके श्रेणीवार अलग-अलग रखते होंगे। अनावश्यकको फिर फेंक देते होंगे। जहाज मुहानेसे दूर हटकर था। इतने दिन बिना मरम्मतके हो गये। तब भी जहाज भला-चंगा मालूम होता था, इसीसे पता लगता है, कि इसकी बनावट कैसी होगी। यद्यपि वारनिश और रंग कहीं-कहीं अब उखड़ चला था। अब भी उसके रक्षकने पूरे प्रयत्नके साथ उसे इसके योग्य रखनेकी चेष्टा की थी, कि मालिकके आते ही वह लौटनेके लिये बिल्कुल तैय्यार हो जाये! भगेलूकी दिनचर्या! उसका जीवन! यह प्राणिशून्य स्थान, जहाँ न बकरी, न स्यार, न कीड़ा, न मकोड़ा, न चूहा, न चींटी, यहाँ तक कि जरा-सीकी कोई छोटी-सी घास तक भी नहीं! यद्यपि समय समयपर इस गुप्तसमुद्रमें ज्वार आता है, उसके साथ मुहानेसे कुछ शब्द भी आता है। इससे पानी दो-तीन हाथ ऊपर भी चढ़ जाता है, किन्तु कैसा आश्चर्य! भगेलू कहता है कि यहाँ मछली एक भी नहीं आती। यद्यपि मछलियोंके आनेसे शायद जीवन-निर्वाहके लिये आशा बढ़ जाती, किन्तु इसमें सन्देह नहीं, कि उस समय हमारा बचकर यहाँ तक आना मुश्किल था। अवश्य उस अँधेरी गुफाके जलमें उस समय घड़ियालों और नाकोंका बसेरा होता।

हम टहलते हुए तटके पास वहाँ तक चले गये जहाँ से आगेका रास्ता एकदम बन्द था। उसके आगे वही चट्टान, वही अलंघ्य काली दीवार। यहाँ से मुहाना कुछ और अधिक दिखाई देता था। हमें यही मुक्तिमार्ग जान पड़ता था, बल्कि इसीके दर्शनकी लालसासे हम यहाँ तक बढ़ आये थे, किन्तु हमने कुछ भी ऐसा नहीं देखा, जो हमारे लिये आसरा होता। यह सिर्फ एक मेहराबदार ऊँचा द्वार था, यहाँ आशा और अनुकम्पाका पता न था। हरिकृष्णका वह डर, कि रास्ता छोटी डोंगीके लिए बड़ा भयानक होगा, बिल्कुल ठीक मालूम हुआ, क्योंकि वहाँ एक प्रखर धार-सी चलती जान पड़ती थी। जब वहाँ खड़े हम उधर देख रहे थे, तो हरिने कहा—

"इसकी बनावट विचित्र है; किन्तु अकेला नहीं है। 'फर्नान्दो-दि-नन्हीं' (ब्राजीलके पूर्व किनारेपर टापू)के उत्तरी भागमें भी ऐसा ही दृश्य है। किन्तु वह सर्वप्रसिद्ध, और यह तो सर्वथा अश्रुतपूर्व! यह स्थान इतना भयानक है, कि कोई मल्लाह इस ओर आना ही नहीं चाहता।"

मैं—"तो आपको आशा नहीं है, कि हम इससे बाहर निकल सकेंगे।"

हरि—"हाँ, डोंगी द्वारा हर्गिज नहीं। और यहाँ बड़ी नाव है नहीं। जहाजके साथ अनेक नावें रही होंगी। उन्हींमेंसे एकको ले रामकुमार और रामप्रसाद भी चले थे। लेकिन वह क्या हुई?"

मैं—"और अमेरिकन जहाज तो हमलोग भूल ही गये। वह कितने दिनोंसे यहाँ पड़ा है, और "इन्द्रायुध"के चले जानेपर भी उसे अभी कितने दिनों तक ठहरना है।"

हरि—"हाँ! बहुत कुछ आशा है, कि उसके आदमी यहाँ आवें। वह इस द्वीपकी पड़तालके लिये आया है। यदि पूर्णरूपेण उन्होंने खोजना शुरू किया, जैसा कि प्रोफेसरकी बातोंसे मालूम होता था, तो अवश्य वह लोग यहाँ आवेंगे, जैसे कि महाराजा यहाँ आये थे। और

यह भी हमें आशा रखनी चाहिये, कि चाहे उन्हें हमारे मरनेका भी किसी कदर अनुमान हो गया हो, किन्तु कप्तान प्रभुनाथ, प्रोफेसर और कप्तान जेक्सनसे हमारे विषयमें पूरा वचन लिये बिना नहीं गये होंगे।

अब सब बातें स्पष्ट मालूम होने लगीं। हम कहाँ किस अवस्थामें हैं। हमारे लिये अब क्या रास्ता, क्या तदबीर बाकी रही है—सभी बातोंपर पर्याप्त प्रकाश पड़ता मालूम हुआ।

मैंने कहा—"तब पहिले क्यों न मुझे इन बातोंसे आपने सूचित किया। इतनी देर तक मुझे अँधेरेमें रखनेका मतलब?"

हरिकृष्णने मेरे मुँहकी ओर स्थिर दृष्टिसे देखते हुए कहा—"मेरे दिमागमें भी यह विचार अपरिपक्व दशा हीमें था। हमारी परिस्थिति-का दुःखमय पहलू ही मुझे अधिक दिखाई देता था। कोई निश्चय नहीं था, इसीलिये माधव! मैंने नहीं कहा था।"

मेरे हृदयमें अब प्रतिक्रियाके तरंगोंकी बाढ़-सी आ गई। मैं अब कुछ न बोल सका। मेरे मनमें आशादेवीकी सुनहरी मूर्त्ति दूरसे आती दिखलाई पड़ी। मालूम हुआ, २० वर्षसे इस कैदमें पड़ा हुआ भगेलू, अब शायद बीस ही दिन और यहाँ रह सके। जल्द ही हमारी मुक्ति होगी। अः! कितना अद्भुत सफर होगा। बीस वर्ष तकका इस गुप्त-समुद्र और टापूका प्रवास, यहाँके सारे रहस्य, लोगोंको जब ज्ञात होंगे, तो उन्हें कितना आश्चर्य होगा।

अब हमलोग बँगलेकी ओर लौटने लगे। जब हम उससे सौ गजकी दूरीपर थे, तब दर्वाजा खुला। भगेलू बाहर आया। वह हमारी तरफ नहीं देखता था। उसकी दृष्टि पहले जहाजकी ओर गई, फिर गुप्तसमुद्र-के उत्तरी भागकी ओर जहाँ चट्टानोंका अंधकारमय जंगल था। वह वहाँ कितने ही मिनटों तक खड़ा रहा।

हरिकृष्णने कहा—"अपने मालिकको देख रहा है। हाय रे! भगेलू!" उसके व्यवहारसे मालूम होता था, कि मानो वह हमें भूल

गया है। किन्तु जिस समय हम आगे बढ़े और उसकी नजर हमलोगोंके ऊपर पड़ी तो उसे याद आई, उसके चेहरेपर प्रसन्नताके चिह्न दिखलाई पड़ते थे।

हरिकृष्णने आगे बढ़कर, 'वन्दे मातरम्' किया। और कहा—

"हमलोग ज़रा टहलनेके लिये चले आये थे। मुहानेको देख रहे थे, कि किस प्रकार खुले समुद्रमें पहुँच सकते हैं।"

भगेलूने इन सारे शब्दोंमें मालूम होता है, दो ही शब्द पकड़ पाये। उसने कहा—"खुले समुद्र, खुले समुद्र"।

हरि—"हाँ, तुम क्या समझते हो? हमें किसी प्रकार अपने जहाज-पर पहुँच जाना है!"

बूढ़ेने सिर हिलाते हुए कहा—"नहीं बाबू! इस रास्तेसे नहीं। वह रास्ता बड़ा भयंकर है। वह मुहाना चौथाई मीलका होगा, किन्तु अत्यन्त भयंकर, तीक्ष्ण धार, और तेज धारवाले चट्टान अगल-बगलमें हैं। जानेका उत्तम समय वही है, जब ज्वारसे पानी खूब भरा हो, किन्तु तब भी एक मज़बूत बेड़ेकी आवश्यकता होगी।"

मेरे दोस्तने कहा—"तुम्हारे पास एक ही डोंगी है, और नावें क्या हुईं? एक औरको मैं जानता हूँ जिसे रामकुमार और रामप्रसाद ले गये थे, किन्तु यहाँ और भी नावें रहीं होंगी।"

उस शुष्क चर्म-अस्थि-अवशिष्ट चेहरेपर शोककी छाया दौड़ती दीख पड़ी, उसने कठिनताके साथ कहा—"यही मेरा दुःख है। हमारे पास एक बड़ा सुन्दर अगिनबोट और एक रक्षक नाव थी। वह बराबर 'पुष्पक'के पास हीमें रहते थे। ओह! अपने अभाग्यको क्या कहूँ। एक रातको, जब कि ज्वार जोरका आया था। मेरी गलती, मैंने उनको मज़बूतीके साथ नहीं बाँधा था, और समझता था, कि वह सुरक्षित हैं, किन्तु प्रातःकाल जब मैंने देखा तो वह चले गये थे। मेरी तबियत घबड़ाने लगती है, जब मैं इस बातका ख्याल करने लगता हूँ। मालिक पूछेंगे, तो मैं क्या कहूँगा, और कप्तान साहबको क्या उत्तर दूँगा—"

अब आप पेज १२० पर देखें

हरि—"इसकी चिन्ता मत करो, वह तुमसे हर्गिज़ रुष्ट न होंगे। वह अच्छी तरह समझेंगे, कि तुम्हारा इसमें कोई क़सूर नहीं है। तो, तुम्हारी समझमें निकलनेका कोई रास्ता नहीं है?"

बूढ़ेकी दृष्टि ही इसके लिये पूरा उत्तर था। फिर मेरे मित्रने मामूली तौरपर कहा—"तो, हमें कोई दूसरा रास्ता सोचना चाहिये, या यहाँ प्रतीक्षा करनी चाहिये।"

भगेलू—"नहीं बाबू! जल्दी करनेकी कोई ज़रूरत नहीं। मालिक बराबर बाहर ही थोड़े रहेंगे। अबकी बार ज्यादा देर लग गई है, परन्तु अब दो-चार दिनमें आवेंगे कि।"

यह कहते हुए हमें लिवाये वह घरमें चला गया। जब तृण-वन-स्पतिका वहाँ पता ही नहीं तो दातवनकी क्या आशा थी। भगेलूने हमें दन्तमंजन और ब्रुश दिया। जब हम मुँह-हाथ धो, अपनी कुर्सियोंपर बैठे तो, भगेलूने गिलासोंमें गर्म दूध और कटोरियोंमें मीठी टिकिया नाश्ताके लिये रक्खी। तीनों आदमी बैठकर नाश्ता करने लगे। भगेलू-ने टिकियोंकी ओर इशारा करके कहा—

"मालिकिनने बहुत-सी चीज़ें बनवाकर हमारी यात्राके लिये रख दी थीं। मालिकने तो बहुत कम ही खाया था। अभी तो बहुत-सा खजूर, शक्करपारा, पेठा,—डब्बों और बोतलोंमें बन्द रक्खा पड़ा है। चलो न बाबू! देखें वहाँ।"

हरि—"तो तुम रोज़ जहाजपर जाते हो?"

भगेलू—"हाँ! रोज़ सबेरे। महाराजकी सब चीज़-वस्तु न वहाँ है? उनको झाड़-पोंछकर रखना होता है। कमरोंको भी झूठ-साँच झाड़ू-बहारू दे ठीक करना पड़ता है। न जाऊँ, तो कैसे बने?"

हरि—"लेकिन बाबा! जब तक हमलोग यहाँ हैं, आपके काममें कुछ सहायता देना चाहते हैं। हम समझते हैं, कि आप हमारी इच्छाको स्वीकार करेंगे। क्या यह अच्छा नहीं होगा, कि आप यहाँका काम देखें; और हम दोनों आदमी जाकर वहाँका काम कर आते हैं।"

यह सुनकर पहिले बूढ़ेके मनमें कुछ आनाकानी हुई। किन्तु हरि-कृष्णके मृदु व्यवहारने उसके हृदयको अपना लिया था, इसीलिये भगेलूने थोड़ी देरके विचारके बाद, स्मित-मुखसे स्वीकार किया। अपने ऊपर उसने बंगलाके झाड़ू-बहाड़ तथा बर्तन माँजनेका काम लिया, और हमलोगोंको वहाँका काम सौंपा। हमको यह भी बतला दिया कि, वहाँ कौन-कौन काम करना होगा। इस प्रकार हम दूसरी बार जहाजकी ओर चले। थोड़ी देरमें हम उसी सुसज्जित सीढ़ीसे होकर 'पुष्पक'के संगममेर सदृश पोत-तलपर पहुँच गये। वहाँ पहुँचते ही हरिकृष्णने कहा—

"माधव! अब थोड़ा मैं एक नीच काम करने जा रहा हूँ। तुम तब तक जाकर काम करो, मैं कप्तानके कमरेमें उलटापलटी करूँगा। मुझे आशा नहीं है, कि कप्तानने यहाँसे जाते समय कोई अपना अन्तिम सन्देश लिखे बिना छोड़ा होगा। मैं उसीको खोजना चाहता हूँ। मुझे उम्मेद है, उससे बहुत बातोंपर प्रकाश पड़ेगा। समझा?"

कल जो बात मुझे अरुचिकर मालूम होती थी, आज वही अत्यन्त प्रीतिकर प्रतीत हो रही थी। मुझे अब समझमें आ गया था, कि पत्रों, पत्रिकाओंकी पुरानी प्रतियाँ और भगेलूकी बातोंसे उठे सन्देहों हीने, उन्हें कल वैसा करनेको बाध्य किया था।

मैंने कहा—"हाँ! बेशक आप देखें। मैं काम करने जा रहा हूँ, किन्तु जैसे ही कोई आवश्यक बात मिले, मुझे उसी समय सूचित कीजियेगा।"

हरि—"हाँ! उसी वक्त।"

इस प्रकार हरिकृष्ण तो कप्तानके आफ़िसकी ओर गये, और मैं भगेलूके बताये कामको करने गया। कहीं झाड़ना, कहीं पोंछना, कहीं किसी चीज़को रगड़ना और पालिश करना, यही तो काम था। अभी मैंने दस मिनट भी अपना काम नहीं कर पाया था, कि हरिकृष्णने पुकारा—"माधव हो!"

मैं बिना स्वाँस लिये उधर दौड़ पड़ा। हरिकृष्ण कप्तानके आफ़िसमें मेजके पास कुर्सीपर बैठे हुए हैं। उन्होंने उसी लॉग-बुकको खोलकर सामने रक्खा है। किन्तु अबकी दृष्टि, जहाज़ विषयक लेखोंपर नहीं है। उनका हाथ बहुतसे फुलस्केपके खुले हुए पत्रोंपर है।

हरि—"जैसा मैंने खयाल किया था, वैसा ही है। देखो इन पत्रों को कप्तानने अपनी लॉग-बुकमें लिखकर रक्खा है, कि जिसमें नवागत जिज्ञासुको इन्हें पानेमें दिक्कत न हो। कल हमलोगोंको जल्दी थी, नहीं तो कल ही इन्हें खोज लिये होते।"

मैंने उनके कन्धेपर झुककर उधर देखना आरम्भ किया। उसके लिखे जानेकी तारीख १ कर्क १६६१ विक्रमीय थी। तारीखके नीचे मोटी कलमसे सुर्खीके तौरपर लिखा था—

"यदि मैं न लौटूँ।"

सप्तम अध्याय

कप्तानका सन्देश

हमने उसे इस प्रकार पढ़ा :

"मैं इसे एक अनिश्चित और भीषण अवस्थामें लिख रहा हूँ। मुझे इसमें बड़ा सन्देह है, कि इसे कोई दूसरा पढ़ने पा सकेगा, सिवाय इन तीनों बेचारोंके, जिनके ऊपर कि मैं जहाज सौंप कर जा रहा हूँ। किन्तु इस ख्यालसे कि, शायद कोई हमारी वर्त्तमान परिस्थितिसे अपरिचित दृष्टि इधर पड़े, इसलिये जल्दीमें जहाँ तक हो सकता है, विस्तारके साथ लिखनेकी कोशिश करता हूँ, कि क्यों मैंने अपने दिलमें यह इरादा किया।

"चार मास बीते, जब हमने 'रेतीली खाड़ी'में पहिले आकर लंगर डाला। महाराजा जगदीशपुर, दक्खिणी अटलांटिकके टापुओंके भूगर्भ-शास्त्रीय अन्वेषणके ख्यालसे हमारे साथ यात्रा कर रहे थे। हमारे आनेके एक ही सप्ताह बाद, जब महाराजको घूमते हुए इस खाड़ीका पता लग गया, तो उन्होंने 'पुष्पक'को यहाँ लानेकी आज्ञा दी। इस खाड़ीको देखकर महाराज बहुत खुश हुए। उन्होंने मुझसे कहा, यह दूसरा 'क्रेटर' भूगर्भ-शास्त्रीय अध्ययनके लिये अत्यन्त ही उपयोगी होगा। एक सप्ताह यहाँ ठहरनेके बाद, उन्होंने कहा, कि यहाँ हमें अधिक दिनों तक मुकाम करना होगा। इसलिये हमलोगोंने यहाँसे 'मौण्ते वायदो'की यात्रा की, कि वहाँसे लकड़ी तथा अन्य आवश्यक वस्तुयें एक विश्राम गृह बनानेके लिये लावें। उनके कहनेके मुताबिक ही, हम खाद्य-पदार्थ भी इतना लाये, कि जो हमारे सबके लिये बारह माससे अधिकके लिये पर्याप्त था। उन्होंने इसका कारण नहीं बताया, किन्तु उनके ढंगसे मालूम हुआ, कि उन्हें यहाँ अपने कामकी इतनी चीजें

मिलनेकी आशा है, जिन्हें देखनेके लिये उन्हें अधिक ठहरनेकी जरूरत है। सचमुच, एक बार उन्होंने यहाँ छै मास रहनेका इरादा प्रकट किया, और कहा, कि उसके बाद फिर एक बार यहाँ लौटकर आना होगा, किंतु यह सब कुछ आगामी कामोंपर निर्भर करता है। किनारे-किनारे महाराजने जो खोज किया, तो उसमें बहुत अच्छे-अच्छे नमूने उन्हें हस्तगत हुए जितना ही समय बीतता जाता था, उनकी दिलचस्पी भी उतनी ही बढ़ती जाती थी। वह इस संग्रहके कार्यमें इतना व्यस्त हो गये कि उन्होंने और दूसरी बातचीत तथा औरोंके साथ मिलने-बैठनेको भी एक प्रकारसे छोड़ दिया। यद्यपि वह बातूनी न थे, किन्तु वैज्ञानिक विषयोंपर वार्तालाप करना उन्हें बहुत पसन्द था। जब बँगला तय्यार हो गया, तब तो और भी उनकी प्रवृत्तिमें फर्क आ गया। वह कभी-कभी तीन-तीन, चार-चार दिन बँगले हीमें सोते थे, जहाजपर एक बार भी न आते थे। उनका कार्य था, आसपाससे तरह-तरहके पत्थरोंके नमूनोंको संग्रह करना, उनका सूचीकरण और पृथक्-करण। उन्होंने बँगलेकी जिम्मेवारी भगेलूको, जो कि महाराजके ग्रामका तथा उनका अत्यन्त विश्वासपात्र आदमी है, सुपुर्द किया। भगेलूने भी उसी प्रकार अपने और जहाजी साथियोंसे मिलना कम कर दिया। मेरे साथ यद्यपि महाराजका व्यवहार पूर्ववत् ही मित्रतापूर्ण था, किन्तु मैं समझता था, कि वह कार्यकी अधिकता ही थी, जो उन्हें मेरे साथ भी वार्तालापके लिये पहिलेकासा अवसर न देती थी। जो कभी कुछ कहते भी थे, तो भूगर्भ-शास्त्रकी कोई सामान्य बात लेकर। अपना काम, उन्होंने इस द्वीपमें क्या किया, इसपर कुछ नहीं कहते थे। यद्यपि मेरा ज्ञान भूगर्भ-शास्त्रके विषयमें अत्यल्प था, किन्तु मैं उसका एक अच्छा श्रोता था, किन्तु इस समय महाराजको श्रोताकी इच्छा ही नहीं थी।

"एक महीनेके बाद महाराजकी राय हुई, कि जरा दूर तकका चक्कर लगाना चाहिये। उन्होंने मुझसे कहा, उत्तरी भागकी पड़ताल करते हुए मैं पहाड़ीके उत्तर किनारे तक पहुँचना चाहता हूँ। लेकिन भूमि

बहुत ही नीची-ऊँची तथा अनिश्चित थी, इसीलिये उन्होंने कई आदमियोंको रसद पहुँचानेके लिये ले जाना पसन्द किया। मैंने अपनी सम्मति भी उनके मुवाफिक दी, और कहा कि आपके साथ आठ या दस आदमी जाने चाहिये। भूमि खड़ी और ऐसी बीहड़ है, कि कई जगह पैर जमानेके लिये जगह भी बनानेकी आवश्यकता पड़ेगी। महाराज साथ-साथ हर जगह भूगर्भ-शास्त्रीय अन्वेषण भी जारी रखना चाहते थे। आपसमें वार्तालापके बाद यह पक्का हुआ, कि यह चढ़ाई एक सप्ताहके लिये होनी चाहिये। महाराजने कहा—'यदि हम एक सप्ताहके बाद न आवें, तो आकर हमारी खोज लेना। लेकिन अर्जुन, तुम जानते हो न, मधुच्छत्र कितना बदनाम स्थान है?'

"मैंने कहा—बदनाम? सचमुच मुझे तो इसका पता नहीं।"

"इसपर महाराजने एक छोटी पुस्तक उठाई, जो मेजपर रक्खी थी, और कहा—'यह एक पुराना पुर्तगीजी विवरण है, इसमें इस तरफके समुद्रोंकी एक यात्राका वर्णन है, जो सत्रहवीं शताब्दीके पिछले भागमें हुई थी। इसमें एक स्थानका विवरण है, जो मुझे विश्वास है कि इसी द्वीपका है, यद्यपि वहाँ नाम दूसरा दिया है।'

"उन्होंने उसके कई पन्ने उलटकर एक ऐसा पृष्ठ खोला, जिसपर लाल पेन्सलका निशान दिया हुआ था। मैं 'पुर्तगीज' भाषा समझनेमें असमर्थ था, अतः महाराजाने उसका अनुवाद करके मुझे सुनाया। मैं उसे यहाँ यादकरके लिखता हूँ, जो मुझे आशा है, बिल्कुल वैसा ही होगा।"

"उन्तीसवाँ दिन—आज हमने एक प्राणिशून्य पथरीला द्वीप देखा जिसे मल्लाह लोग गड्ढोंका द्वीप कहते हैं क्योंकि इसमें असंख्य गड्ढे या गर्त हैं। इसकी भीषणतासे कोई भी यहाँ मुकाम नहीं करना चाहता, यद्यपि यहाँ एक अच्छा लंगरगाह और पास ही पीनेका पानी है। लोग कहते हैं, कि यहाँ एक गुफा है जिसमें शैतानने डेरा डाला है। अगर कोई अनभिज्ञ पुरुष उसके निवास-स्थानके पास चला जाता है, तो वह

उसपर अपने भयंकर नेत्रोंको खोलता है, और वह वहीं गिरकर मर जाता है। इसलिये हम यहाँसे वायव्य कोणकी ओर अग्रसर हुए।'

"महाराजने कहा—"मुझको इसमें बिल्कुल सन्देह नहीं है, कि यही वह गड्ढोंका द्वीप है। अब तुमको मालूम हुआ, कितना बदनाम यह द्वीप पहिलेसे ही है?"

"मैंने अस्वीकार करते हुए कहा—'वह बेहूदा, एक मिथ्याविश्वास था कि'। जिसपर महाराजके ओठोंपर एक अद्भुत हँसीकी रेखा दिखाई पड़ी, मानो वह उससे अधिक इस विषयमें जानते हैं, किन्तु उसे कहना नहीं चाहते।"

"उन्होंने कहा—'निस्सन्देह यह एक कहावत, एक मिथ्याविश्वास है, किन्तु शायद इसका युक्तियुक्त कोई अर्थ हो। शायद मुझे ऐसी कोई गुफा मिले। आपको मेरे पड़तालकी प्रतीक्षा करनी चाहिये। हाँ! तो अर्जुन, यदि एक सप्ताह बीतनेपर भी मैं न लौटूँ तो तुम मेरे खोजनेके लिये, घण्टी, पुस्तक और मोमबत्तीके साथ आना। शैतान सचमुच बड़ा निष्ठुर जेलर होगा।"

"मैंने उनके साथ वार्तालापका एक संक्षिप्त नोट 'लॉगबुक'में कर लिया।"

"दो दिन बाद महाराज निकल पड़े। उनके साथ दस आदमी थे जिनमें प्रथम अफसर श्रीहरिहर सिंह और चीफ इंजीनियर श्री गिरीशदत्त त्रिपाठी भी थे। हम उन्हें नावपर बैठाकर खाड़ीके उत्तरी तट तक पहुँचानेके लिये गये। पीछे उसी शामको आदमियोंमेंसे दो रामकुमार और रामप्रसाद लौट आये। हमने देखा कि वह वहीं पानीके तटसे हाथके इशारेसे बुला रहे हैं पीछे मालूम हुआ कि, रामकुमारने एक मील चलते-चलते कहीं अपनी घुट्ठी तोड़ ली है, इसीलिये रामप्रसादको उसके साथ करके लौटा दिया गया। इन आदमियोंने बताया, कि यात्रा बहुत कठिन है, अतः बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ना हो रहा है। वह सीधे उत्तरकी ओर बढ़ रहे हैं, किन्तु बाधायें असख्य हैं।"

"यह अन्तिम समाचार था, जिसे हमने महाराज जगदीशपुरके बारेमें पाया। सप्ताह बीत गया, किन्तु वह लौटकर न आये।"

"मेरी घबराहट और भी बढ़ गई, क्योंकि महाराज अपने प्रोग्राम और बातके बड़े पक्के थे। यद्यपि उस उक्त मेरे हृदयमें यह भी ख्याल आया, कि शायद उनको कुछ दिन और ठहर जानेकी आवश्यकता प्रतीत हुई हो। किन्तु मेरे लिये इसके सिवाय कोई चारा न था कि, पता लगानेके लिये एक दूसरी टोली भेजूँ। यह टोली पहिलीसे बड़ी होनी चाहिये, क्योंकि इसे अपनोंके अतिरिक्त उनके लिये भी रसद ले चलना है। मैंने अपने बचे आदमियोंसे ग्यारह मज़बूत जवानोंको इसके लिये निर्वाचित किया। अब तक मेरे चित्तमें कोई भारी सन्देह नहीं हुआ था।

"कई कारणोंसे इस टोलीका अगुआ मैंने स्वयं न होना चाहा। मैंने अपने द्वितीय अफ़सर श्रीरामबहादुर लाल, एक बहादुर और चतुर नवयुवकको इसका नेता बनाकरके भेजा। मैंने उन्हें इसे भली-भाँति समझा दिया, कि उन्हें कितनी सावधानी और दृढ़तासे काम लेना चाहिये। टोलीने बड़े उत्साहके साथ कूच किया ......और उसके बाद कुछ भी समाचार उन लोगोंका न मिला।

"मैंने इसके बाद दो सप्ताह तक प्रतीक्षा की। कहींसे भी किसी प्रकारकी आशा अब न रही। हमलोग अब दस ही मज़बूत आदमी बाकी रह गये। इतने आदमियोंसे जहाज़को घर लौटाकर देश ले जाना भी असम्भव था। मैंने इस ख्यालको अपने सामने आने ही नहीं दिया। मेरे दिलमें इन दुष्ट चट्टानों और भीतरी वस्तुओंके प्रति अपार घृणा उत्पन्न हो गई! मुझे धीरे-धीरे अब विश्वास हो चला, कि अवश्य उनपर कोई आफ़त पड़ी। किस बुरी साइतमें हमने यह यात्रा की! मेरी तबियत इसके विषयमें कुछ भी जाननेके लिये अधीर थी, किन्तु यहाँ कुछ न था। उत्तरी तट और उसकी काली दीवार वैसी ही नीरव थी।"

"किन्तु, यह मेरे लिये, असम्भव था कि मैं यहाँ चुपचाप बैठा बाट जोहता रहता। मुझे अब इस परिस्थितिका मुकाबिला करना होगा। मैंने अपने मित्र श्रीकामेश्वरप्रसाद, जो स्वयं भी मेरे साथ आग-पानीमें कूदनेके लिये तय्यार थे, के साथ विचार करनेपर, सब नाविकोंको एक साथ अपने आफिसमें बुलवाया। मैंने सारी परिस्थितिको बिना चूँ चिरा, बिना कुछ घटी-बढ़ीके सबके सामने खोलकर रख दिया—"जहाज़के मालिकको गये एक मास हो गया। वह और उनके साथियोंका तबसे कुछ पता नहीं। दूसरी टोलीके लोगोंको भी गये आज दो सप्ताह हो रहे हैं। उनकी भी वही दशा है। इससे पता लगता है, कि उनके ऊपर कोई आफ़त आई है, नहीं तो वह लौटे बिना अथवा अपना समाचार भेजे बिना न रुकते। यदि ऐसा हुआ तो उनके पास रसद थोड़ी थी उसके समाप्त होते ही उनके ऊपर यह दूसरी विपत्ति पड़ेगी। इस द्वीपमें सिर्फ़ पत्थर ही पत्थर हैं। अतः यह आशा नहीं कि उन्हें किसी मानवी शक्तिने रोक रक्खा होगा।" मैंने उनके सामने एक सहायक टोली भेजनेका प्रस्ताव किया, जो कि उनके मार्गका अनुसरण करते हुए आगे बढ़े। उन्होंने क्या राय दी?

"वही जो एक भारतमाताके पुत्रके लिये योग्य थी। किसीने भय और कायरताकी गंध तक अपने हृदयमें न आने दी। सबने एक स्वरसे, बड़े उत्साहसे कहा—'हम अपने कप्तानके आदेशपर, जलते तवेपर शिर-आँखोंके बल चलनेके लिये तय्यार हैं।' उनके उत्साहको बढ़ाते हुए श्रीराम बहादुरने कहा—'देखो महाराज कितने पवित्र कामके लिये कितने महत्त्वपूर्ण कामके लिये अपने घर-बार, अपने सुख-स्वर्ग सभीको परित्यागकर, हजारों कोस दूर इन सुनसान खड्डोंमें आये। उनके श्रेणीके राजाओं और नवाबोंमेंसे आज कितने हैं, जो विद्यानुरागमें देशकी यशोवृद्धिमें इस प्रकारका त्याग दिखावें। उन्हें तो अपने शरीरका सुख—अपनी इन्द्रियोंका सुख—यही सब कुछ है। भला कौनसा ऐसा आदमी होगा, जो ऐसे महापुरुषकी सहायताके लिये उसके

विपद्ग्रस्त साथियोंके उद्धारके लिये अपना क़दम आगे बढ़ानेसे रुकेगा। कप्तान साहब! आप चलिये, हमें जानेके लिये आदेश कीजिये। हम महाराजका समाचार बिना लिये, बिना उनको लिवाये नहीं लौटेंगे।

"इसके बाद मैंने कहा, कि तीन आदमियोंको यहाँ देखभालको छोड़ जाना चाहिये। रामकुमार, रामप्रसाद जहाज़पर और भगेलू तो महाराजकी चीज़ों और बँगलेपर है ही। इसके बाद यात्राके लिये सब सामग्री बाँधी-बूँधी जाने लगी, और दूसरे दिन सवेरे चलनेकी ठहरी।

"इस अन्तिम घड़ीमें मुझे विश्वास नहीं, कि मैं ठीक कर रहा हूँ। एक तो यह, कि शायद मैं इन्हें मौतके मुँह लिये जा रहा हूँ। और दूसरे यदि वह लोग जीवित और सुरक्षित हैं, तो तब तक वह यहाँ पहुँच जायँगे। किन्तु द्वीपकी भयानक मूर्त्ति, उनकी काली गुफायें और काली दीवारें सभी यह बता रही हैं, कि उन्हें कोई भारी विपत्तिका सामना करना पड़ा। कुशल नहीं है।

"वर्त्तमान अवस्थामें यद्यपि शीघ्रसे शीघ्र यहाँसे रवाना हो जाना ही अच्छा है। किन्तु मेरे हृदयमें इस समय कई प्रकारके सन्देह हैं। मुझे आशा नहीं है, कि मैं लौटकर भारतमाताके पवित्र चरणोंको इन आँखोंसे फिर देख सकूँगा। मुझे यह भी उम्मीद नहीं कि मैं महाराजसे मिल सकूँगा। मेरी समझमें महाराजके ऊपर जो पड़ना था सो अब तक पड़ गया होगा। मुझे आशा नहीं, मैं महाराजके परिवारको देख पाऊँगा या उनके किये यहाँके कामोंको अपने देशवासियोंके कानों तक पहुँचा सकूँगा।—

"जब यह पंक्तियाँ किसी अपरिचित बन्धु द्वारा पढ़ी जायँगी, मुझे आशा है, कि तब तक हमारा काम तमाम हो गया रहेगा। मैं उनसे प्रार्थना करूँगा, कि वह हमारी सहायताके लिये अपनी शक्ति और समयसे किंचनमात्र भी व्यय न करेंगे, क्योंकि निश्चय वह व्यर्थकी अपने ऊपर आफ़त बुलानी होगी, जिससे हमलोगोंको कुछ भी लाभ न

पहुँच सकेगा। उनसे यही हम आशा रखते हैं, कि यदि यहाँ छोड़े गये व्यक्ति जीवित मिलें, तो उन्हें उनके घर पहुँचा देना, तथा 'पुष्पक'-की इस घटनाका समाचार पत्रोंमें शीघ्रसे शीघ्र प्रकाशित कर देना, जिसमें इसके लिये उत्सुक व्यक्तियोंको सूचना मिल जाय।

"मेरी वसीयत मेरे प्राइवेट कागज़-पत्रोंमें है, जो कि डेस्कमें हैं, जिसे मैंने आज ही लिखा है।

—"अर्जुन सिंह, कप्तान, राष्ट्रीय नौसेना"।

हमने सन्देशको पंक्तिशः एक-एक शब्द करके पढ़ा। जब यह समाप्त हो गया तो हरिकृष्णने कुछ नहीं कहा। उन्होंने एक बार मेरी ओर ताककर भी नहीं देखा। उन्होंने चुपकेसे उन काग़ज़ोंको मोड़कर उस किताबमें रख, जहाँका तहाँ रख दिया। अब भी मैं उस महान् स्तब्धतामें भगेलूकी गतिविधि देख रहा था। अन्ततः मैंने कहा—

"तब?"

हरि—"उनमेंसे एक भी मुड़कर नहीं आया, और कुछ दिनोंके बाद रामकुमार, रामप्रसाद और भगेलूने इस काग़ज़को देखा। उनमेंसे दोनों, किसी प्रकार यहाँसे जान बचाकर निकलना चाहा, किन्तु भगेलू इसके लिये तय्यार न था। उसको अब भी आशा है—या, शायद उसे भय मालूम हुआ—या, शायद उसने वैसा करके अच्छा ही किया, क्योंकि इससे दूसरा काम बड़ा भयंकर निकला। इस प्रकार वह ठहर गया। पीछे कुछ दिनोंके बाद उसके दिमाग़ने जवाब दे दिया। अब वह कलकी भाँति जीता है। उसको मालूम नहीं उसे कितने दिन यहाँ रहते हो गये। यदि उसे यह मालूम होता, तो निश्चय है, कि वह अब तक जीता न रहता।"

मैं—"तो फिर इन लोगोंका क्या हुआ?"

हरि—"हम केवल अनुमान कर सकते हैं। हमलोग स्वयं जैसे एक गर्तमें गिरे, वैसे ही शायद किसी गर्तमें यह लोग भी गिर पड़े। किसी प्रकारकी बला इनके ऊपर आई, यह निश्चय है। पुराना पुर्तगीज़ोंको

कहावत, यद्यपि उसे रंग देकर वर्णन किया गया है, अवश्य किसी सच्चे आधारपर है। उन भोले-भाले नाविकोंके लिये शैतान एक सच्ची वस्तु थी, इसीलिये सभी विपत्तियोंके साथ उसका सम्बन्ध जोड़ देना उनके लिये अनिवार्य था।.........किन्तु सचमुच माधव! तुमको दुःख है, कि हमलोगोंको क्यों यह पत्र मिला?"

मैं—"दुःख! नहीं, यद्यपि यह हृदयविदारक है। यह नहीं कि इसने बहुत-सी बातोंको खोल दिया, प्रत्युत इसने सबसे भारी रहस्यमय मार्गका पर्दा चाक कर दिया।"

हरि—"हाँ! भाई, और इन सबको पढ़कर समाप्त करनेके बाद अब हम ठीक उसी रहस्यमयताके सामने खड़े हैं।"

इसके बाद वहाँसे उठकर हमलोगोंने अपना काम पूरा किया। इस रहस्यका आतंक ऐसा हमारे हृदयोंपर छाया था, कि हम अपने कामोंको पुतलीकी भाँति कर रहे थे। अब 'पुष्पक'की किसी भी वस्तुको वैसी बारीकीसे नहीं देखते थे, क्योंकि, अब हमारी दृष्टिमें उनका कुछ भी वास्तविक मूल्य न था। सचमुच हमलोग ख़ुश थे, जब कि हमारा काम हो गया और किनारे जानेके लिये तय्यार हुए।

बूढ़ा भगेलू हमारे लौटनेकी प्रतीक्षा कर रहा था। हमारे किनारे-पर पहुँचते ही वह हमारे पास चला आया। मैंने भगेलूके मुखको देखा, किन्तु वहाँ भी मुझे केवल रहस्य ही रहस्य दिखाई पड़ा। पीछे मुड़कर 'पुष्पक'की ओर दृष्टि डाली, उसकी सूरतसे अपार करुणाकी वृष्टि हो रही थी। दोनों ही जगहें असंख्य प्रश्नोंका उद्गम स्थान थीं। किन्तु था वहाँ प्रश्न ही प्रश्न—उत्तरका पता नहीं।

जब मैंने देखा, कि इसका परिणाम क्या होगा? आख़िर इसी जगह मुझे सबका उत्तर भी झलक गया।

अष्टम अध्याय

भयंकर बुलबुला

पिछले दिनोंमें इन विचारोंके अतिरिक्त हमारे दिमाग़में दूसरे विचारोंको भी स्थान मिलता, तो वह महान् रहस्य हमारे सामनेसे ओझल हो जाता, अथवा भूल जाता। उस समय इस कथाका रूप कुछ दूसरा ही होता, अथवा संसारकी अज्ञेय वस्तुओं हीमें रहती। किन्तु सूर्योदयसे सूर्यास्त तक हमारे सामने उस रहस्यके अतिरिक्त दूसरा था ही क्या ? हमारे सन्मुख वस्तुयें थीं, किन्तु हमें उनका आकार स्वप्न-सा, विस्मृत-सा अव्यक्त-सा जान पड़ता था। किन्तु वह रहस्य ? बिल्कुल स्पष्ट, सर्वथा मूर्तिमान्। निराशापूर्ण, जनशून्य 'पुष्पक' क्या था ? उत्तर ओरकी दीवारों और चट्टानोंकी कालिमा क्या थी। पुष्पकारोहियोंका नामलेवा कौन था ? जिधर भी हमने नज़र डाली, वही प्रश्न-परम्परा, उत्तर-रहित अथवा वही एक उत्तर। रात्रिका अन्धकार हमारे लिये मंगल वस्तु थी, वह उस सर्वव्यापक वस्तुको आच्छादित करके हमारा हित करती थी। उससे भी बढ़कर निद्रा थी, जो माताकी भाँति हमें अपनी प्यारी गोदमें लेकर सब कुछ भुलवा देती थी। हम उसी मनुष्यकी पलंगपर सोते थे, जो फिर लौटकर न आया। उसी कमरेमें, जिसे मानो उसने हमारे ही लिये बनवाया था। उस रात्रिकी नीरवतामें उस चिर एकान्तवासीकी नियमित श्वासकी आवाज़ हमारे कानों तक पहुँचती थी। वह फिर हमारे अन्तःकरणको विकल करना आरम्भ कर देती थी। ओह ! यह कैसा भोला है ? इसका विश्वास कैसा पक्का है ? अब भी आशा किये है, कि मालिक आवेंगे, आज नहीं तो कल आवेंगे। धन्य आशे ! तू भी बड़ी दयावती है। इसके अपार दुखको, इसके

अवसानरहित कारावासको, कुछ भी इसे पता न दे, तू चुपचाप इसे एक ही बार सबसे मुक्त करा देना चाहती है।

कभी-कभी हमें इसपर आश्चर्य होता था, कि क्यों बूढ़े भगेलूने हमको अपने मालिकका घर और बिस्तरा सोने-बैठनेके लिये दिया ? हम लोग रोज़ नियमपूर्वक जहाजपर जाते थे, किन्तु कभी वहाँ न सोये। यद्यपि बँगला भी वैसा ही एकान्त और हृदयवेधक था, किन्तु उस रहस्यमय समुद्रके उस सूने जहाज़में तो मालूम होता था कितने ही हज़ार भूत आकर बसेरा किये हैं।

इस प्रतीक्षाके स्वप्न, और इच्छारहित बातचीत और कामोंमें एक पक्ष बीत गया। अमेरिकन अब भी न आये। बूढ़ेकी भाँति हम भी उत्तरकी दिशाको रोज शाम-सबेरे देखते थे। ज्वार आया और, उस पथरीले मुहानेसे घर्घर करता हुआ निकल भी गया, किन्तु वहाँ किसी भी नाव या मनुष्यके शब्दका पता न था।

हरि—"हाँ, वह दूसरे भागमें द्वीपका पड़ताल कर रहे होंगे; किन्तु वह अवश्य अन्तमें यहाँ आवेंगे।"

यह पन्द्रहवाँ ही दिन था, जब कि मुझपर भगेलूकी बीमारी आनी शुरू हुई, मैं बोल उठा—

"वह क्यों यहाँ आने लगे ? ऐसी आशामें सार ? हो सकता है, कि वह लोग आवें ही नहीं ! अब सचाईको छिपाकर इस आत्मवंचना-से लाभ ?"

हरि—"इसमें सचाईके छिपानेका प्रयत्न नहीं। हम वही बोल रहे हैं, जो कुछ कि, समझमें आता है।"

मैं—"हाँ, ठीक है। किन्तु मेरा कहना है, उनके आने न आने दोनोंकी सम्भावना बराबर है। शायद इस वक्त तक वह चले गये हों।"

मैंने बिना जाने हुए यह सब कहा था, किन्तु हरिकृष्णको यह सब बातें पहिले ही सूझी थीं। मैंने और भी असन्तोष प्रकट करते हुए कुछ कड़े स्वरमें कहा—"आह ! तुम क्यों मुझे सदा बच्चा बनाना चाहते

हो ? क्या हम दोनों एक ही नावमें नहीं हैं ? क्या, हम लोग सीधे-सीधे साफ़ शब्दोंमें बिना लगाव-लपटावके बातचीत नहीं कर सकते ? ऐसा कहना हमारे लिये लाभदायक न होगा। यह खेल नहीं है, तुम इसे भली बात जानते हो।"

हरिकृष्णने इसे सावधान हो सुना। थोड़ी देरके लिये उनके मुख-पर गम्भीरता छा गई। अन्तमें उन्होंने हँस दिया। यह उनका स्वभाव था। वह रत्तीमात्र भी सत्य छोड़ना पसन्द नहीं करते थे, चाहे गाड़ी भर निर्बल तर्कोंपर ही वह अवलम्बित हो।"

हरि—"समाहित हो माधव ! हमें झगड़ना न चाहिये। यह सचमुच बहुत अच्छा होगा, यदि हम अपने पेटकी सभी बातें खोलकर कहें। मैं अपनी भूलको स्वीकार करता हूँ, भविष्यमें इसे भूल जाऊँगा कि, मैं तुमसे पाँच वर्ष बड़ा हूँ। मैं अपनी आशा और भय दोनोंको उसी समय तुमपर प्रकट कर दूँगा, जिस वक्त कि वह मेरे हृदयमें आवेंगी।"

मैं—"तो आप समझते हैं, कि शायद अमेरिकन हमें न मिलें।"

हरि—"नहीं, मुझे विश्वास है, कि वह जरूर आवेंगे, किन्तु यहाँ आशा सौ हिस्सेमें एक हिस्सा नहीं आनेके पक्षमें भी है। यही कारण है, कि मैं बराबर कोई और तदबीर ढूँढनेकी फिकरमें हूँ।"

"मैं—"छोटी नाव।"

हरि—"छोटी नाव ? तीन हम, उसपर रसद ! और फिर महान् अटलांटिकसे युद्ध ! और जब कि समीपतर भूमि सैकड़ों कोस दूर ! सोचो माधव, तुम्हें मालूम हो जायगा।"

मैं—"तो 'पुष्पक' ? बूढ़े भगेलूको उसपर डालकर ताला बन्द कर दो। भाप तय्यार कर लो, लंगर उठा लो और इस मायाजालसे बाहर।"

हरि (मुस्कुराकर)—"प्रत्येक नौसैनिक अफसरको कुछ इंजीनियरिंग जानना लाजिमी है, किन्तु सौदागरी नाविक-अफसरके बारेमें यह बात नहीं है। हम तीनोंमेंसे किसीको भी इसका जरा भी ज्ञान नहीं है। फिर पुष्पकको इस भयानक गुफाके मुँहमें डाल देना कितना साहस है ?"

यह हरिकृष्णकी प्रकृति थी। आप उनसे बात कीजिये, उनके उत्तरमें सदा सारे ही पहलुओंपर विचार करनेका निष्कर्ष पाइयेगा। उन्होंने शान्त-भावसे कहा—

यद्यपि यह भयंकर साहस है, किन्तु इसका भी समय आयेगा। लेकिन अभी नहीं माधव, मेरे भाई, उस समय हम पंख जमा कर उड़ेंगे। बीस वर्ष यहाँ बन्द होनेके लिये नहीं रहेंगे। किन्तु अभी वह नहीं। मेरी समझमें अमेरिकनोंको एक मास देना चाहिये; और इसी बीचमें ऋतु भी कुछ अनुकूल आ जाती है।"

आः! उन्हें इतना दृढ़, इतना परिस्थितिपर काबूवाला, इतना गम्भीर विचारक, इतना स्थिरसंकल्प, देखकर मुझे कितना आनन्द हुआ। इस सत्यताने मुझे बड़ी शान्ति, मानसिक सन्तोष प्रदान किया। मानो वह सर्वव्यापक हृदयद्रावक रहस्य एक बार मेरे सामनेसे मैदान छोड़ भागा। उन्होंने मेरी आँखोंमें परिवर्त्तनके चिन्ह देखे, तब फिर कहा—

"यहाँ एक और भी प्रश्न है। क्या चुपचाप बैठे यहाँ प्रतीक्षा करनेके बदले, हमलोग कुछ और कर सकते हैं? देखो यह रहस्य हमारे साथ है, चौबीसो घण्टे साथ है। यह दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। मालूम होता है, यह एकदम हमारे ऊपर गिरकर हमको चूर-चूर कर देना चाहता है। आधी रातको मैं जागता हूँ, उस समय, मैं समझता हूँ, यदि तुम पास न होते, तो शायद चिल्ला उठता। यही चित्तकी विलीनताका आरम्भ है। इसीने बेचारे भगेलूकी वह दशा की है।"

मुझे अब मालूम हुआ, कि हरिकृष्णकी भी आन्तरिक दशा मेरे सदृश ही थी, किन्तु उन्होंने उसको इतनी गम्भीरता-पूर्वक ग्रहण किया था, कि बाहर कुछ पता नहीं लग सकता था। मैंने तो समझा था, कि वह बिल्कुल अनभिज्ञ और बेपर्वाह हैं।

उन्होंने फिर कहा—"इसी वजहसे तो मैं समझता हूँ, कि यदि एक पक्ष और हमलोग इसी प्रकार रहे, तो वह जादू हमपर असर किये बिना नहीं रहेगा।"

मैं—"क्या ? आपका अभिप्राय यह है, कि आप-हम, चलकर किसी कुंजीका पता लगावें ?

हरि—"हाँ यही। क्यों न ऐसा किया जाय ?"

यही बात मेरे दिमागमें भी चक्कर लगा रही थी, इसीलिये मैं हरिकृष्णके चुपचाप बैठकर प्रतीक्षा करनेपर अत्यन्त असन्तुष्ट हो गया था। मुझे यह आशा न थी, कि वह मुझसे सहमत होंगे। मैं अब उनकी मुँहकी ओर बड़ी उत्सुकता भरी दृष्टिसे देखने लगा।

हरि—"इस यात्राके लिये एक सप्ताह काफी है। यदि इस बीचमें अमेरिकन यहाँ आ गये तो तब तक अपना खोजका भी काम करेंगे, और हम देख-भालकर लौट भी आवेंगे।"

मैं हृदयसे इस प्रस्तावके पक्षमें था। मेरे दिलमें उस समय एक अभिमानकी हल्की लहर-सी भी उठी। मैंने कहा—क्या हम भारत-सन्तान होकर चुपचाप बैठे रहें, और जो हमारे काम करनेका काम है उसे अमेरिकन कर लें।

किन्तु खतरा, इसमें सन्देह नहीं, उतना ही हमारी राहमें भी था, जैसा अगलोंकीमें।"

हरि—"हाँ ठीक है, भाई ! किन्तु उसमें इतनी शक्ति नहीं है, कि तुमको या मुझे आगे बढ़नेसे रोक रक्खें। मैं पुर्तगीजोंकी शैतानवाली कहावतपर विश्वास नहीं करता। मेरा विचार है, कि यहाँ कोई और भी बड़ा भारी गर्त है, जिसमें धोखेसे सारे ही पुष्पकारोही जा पड़े। किन्तु हम भुक्तभोगी हैं। हमें हर बातका पद-पदपर खयाल रखना होगा। यदि इतनेपर भी विपत्ति आती है, तो आने दो इस कायरतापूर्ण आत्मसमर्पणसे वह मृत्यु भी अच्छी होगी।"

"हाँ ! सचमुच हमें वैसी गल्ती नहीं करनी होगी।" अब चूँकि

खुले दिलसे बात करनेकी प्रतिज्ञा कर ली थी। इसलिये कुछ देर और निस्संकोच भावसे महाप्रस्थानके प्रत्येक अंगपर वार्तालाप किया। और तब जाकर हमने अपना इरादा भगेलूसे कहा।

हमलोग जभी उसकी नजरसे बाहर जाते थे, मालूम होता है, वह हमें भूल जाया-सा करता था। किन्तु यह अच्छा था, कि हमारे सन्मुख आते ही वह फिर वही प्रेममय व्यवहार करने लगता था। उसने अपनी रामकहानीके अनेक अंश दुहरा-दुहराकर कई बार कहे। उसे यह मालूम ही न होता था. कि उसने उन्हें पहिले कहा है। किन्तु उसके अतिरिक्त और कुछ जाननेके लिये किये गये हमारे सारे ही प्रश्न निष्फल हुए। उसने महाराज, जहाजके साथियों और पुराने दिनोंके विषयमें बहुत-सा कहा, किन्तु पिछले बीस बरसोंके लिये उसकी स्मृति कोरी थी। जादूने उसके ऊपर वह सब बहुत पहले ही कर दिया था जो कि वह हमारे ऊपर अब करने जा रहा था।

हरिकृष्णने उससे कहा—"महाराजसे मिलनेके लिये हम जाना चाहते हैं, तुम्हारी क्या राय है? आज दोपहरके बाद हम इसीपर विचार कर रहे थे।"

भगेलूने इसपर बड़ी शान्तिपूर्वक विचार किया। फिर थोड़ी देरके बाद उसके चेहरेपर आनन्दकी आभा-सी प्रकाशित होती दीख पड़ी।

उसने कहा—"यह बहुत ही स्तुत्य विचार है बाबू, मुझे निश्चय है कि महाराज इससे बड़े प्रसन्न होंगे। आप शायद महाराजके बहुतसे नमूनोंको ले आनेमें मदद कर सकेंगे, मुझे डर है, अब तक उनके पास उनका एक बड़ा ढेर जमा हो गया होगा।"

हरि—"हाँ ठीक! किन्तु रास्ता बड़ा बीहड़ है, सम्भव है हम किसी दूसरी ओर निकल जायँ और महाराजको न पा सकें। उनके ढूँढ़नेमें बहुत दिन लगें। इसके लिये हमें रसद साथ ले जानी होगी। कमसे कम एक सप्ताहके लिये हमें तय्यार होकर जाना चाहिए। क्या आप हमें इतने दिनोंका पाथेय साथ ले जानेकी आज्ञा देते हैं?"

थोड़ी देर तक मितव्ययिताने उसको मानो रोक देनेकी कोशिश की। किन्तु अन्तमें उसने कहा—

"आपको बहुत ज्यादा नहीं ले जाना चाहिये, किन्तु आवश्यक सामग्री ले जानेमें तो कोई हर्ज नहीं, वह तो यहाँ भी रहनेपर खर्च करनी ही पड़ती। आप बाबू, जितना चाहें उतना ले जायँ, मुझे पूरा भरोसा है कि, महाराज भी ऐसा ही चाहेंगे।"

हरि—"तो ठीक। अब हम जहाजपर जायँ; वहाँसे यात्राकी आवश्यक वस्तुयें एकत्रित करें।"

इसके बाद हमारा दो घंटा चीजोंको एकत्रित करनेमें बीता। बूढ़े भगेलूको अनेक धन्यवाद है, कि उसने 'पुष्पक'पर सभी सामग्रिया उसी क्रमसे रहने दी थीं। सबकी सूची और स्थानको खोज पानेमें हमको देरी न हुई हमलोग इसके लिये बड़े सावधान थे, कि उस चीजको न लें, जिसके बिना भी हमारा काम हो सकता है, और उसे छोड़ न जायँ जिसके बिना काममें बाधा पड़े। इसके लिये बल्कि दो दिमागोंकी उपस्थिति बहुत अच्छी हुई। कितनी ही बार हम हँस पड़ते थे, जब उन चीजोंको हाथमें लेते थे, जिनके लेबिलपर, पटना, बनारस और आगराकी किसी दुकानका नाम पाते थे। हमारी ही भाँति वह भी सुदूर उस सुनहरी भूमिसे आये थे, उनके भागमें भी यही बदा था, कि इस प्रकार बीस वर्ष पुष्पकपर बिताकर, फिर हमलोगोंके सहायक हों। सचमुच "दाना छितराना तहाँ जाना जरूर है।"

खाने-पीनेकी चीजोंके अतिरिक्त हमने वहाँसे दो तमंचे और कई दर्जन कार्तूस भी जरूरतके वक्तके लिये लिये। सब चीजोंको आसानीसे ले चलनेके लिये उन्हें स्वयंसेवकी झोलोंमें खूब ठीक तरहसे रख लिया। इन दो गठरियोंके अतिरिक्त एक गठरी कम्बलोंकी भी बनाई, क्योंकि रातको सोनेके लिये इनकी आवश्यकता होगी। यद्यपि शीत ऋतु बीत गई थी, किन्तु खुली जगहमें सोनेके लिये रात अब भी ठण्डी थी। यह सब बोझ इतना ही था, कि जिसे लेकर हम आगे बढ़ सकते थे।

यद्यपि कहीं-कहीं चढ़ाईमें शायद कुछ अधिक तकलीफ होगी, किन्तु इस ख्यालसे कि दिनपर दिन तो यह कम ही होता जायगा, हमने उसे और कम करनेकी आवश्यकता न समझी। हरिकृष्णने यह भी कहा—"यह आवश्यक नहीं कि सभी बोझ बराबर लादे ही फिरना होगा, मौका देखकर प्रत्येक दिनके विश्रामपर कुछ चीजें छोड़ते जायँगे, जिन्हें लौटते वक्त हम उपयोगमें लायेंगे।"

हमलोग अपनी गठरियोंको किनारे लाकर भगेलूके सामने परवानगीके लिये ला रखे। यह भी तै पाया, कि सबेरे नावपर चढ़कर तीनों आदमी समुद्रके उत्तरी तट तक चलेंगे, वहाँसे हम दोनों तो आगे बढ़ेंगे और भगेलू डोंगी लौटा ले आवेंगे। तब हमलोग बिल्कुल एक विचित्र दशामें अपने विस्तरेपर सोनेके लिये गये। मेरे दिलमें बड़ा जोश और बड़ा ही आनन्द मालूम हो रहा था।

दूसरे दिन सबेरे जब मैं जगा, तो उस समय इतना सबेरा था कि, अभी और सब सोये ही हुए थे। मैंने किसीको जगाया नहीं, चुपकेसे उठकर धोती और तौलिया उठाई और समुद्रमें जाकर स्नानकर आनेका इरादा किया। समुद्रपर अब भी वही नहूसत छाई हुई थी। आज इतने दिनोंके बाद मुझे पहाड़ियोंके शिखरोंके पिछले भागमें हल्की-सी पीली सूर्यप्रभा दिखलाई पड़ी। यह दृश्य मेरे लिये कितना आनन्दप्रद था, इसने मेरे हृदयमें एक प्रकारकी गर्मी पैदा कर दी। मैं आनन्दमें बेसुधकी तरह किनारे गया। इस स्नानमें यद्यपि कोई आनन्द न था। पानी मानो जमा हुआ था, उसमें हल्की-सी भी कोई लहर न थी। हवा बिल्कुल बन्द थी। मैं कपड़ोंको किनारेपर रख, अन्दर घुसा। छाती भर पानीके भीतर जाकर खड़ा हुआ। मैं ख्याल कर रहा था, कि पानी ठण्डा होगा, किन्तु मेरे आश्चर्यकी सीमा न रही, जब मैंने देखा कि वह खासा गर्म है।

इसमें कोई सन्देह नहीं। यह बात आश्चर्यकर और आनन्दकर दोनों ही मेरे लिये हुई। नहाते समय मुझे राजगृहके गर्मकुण्ड याद

आने लगे। मुझे यह ख्यालकर और भी आश्चर्य होने लगा, कि मैंने कभी नहीं इसे इतना गर्म पाया था।

कुछ देर तक पानीकी उष्णता बड़ी भली मालूम होती थी किन्तु, थोड़ी ही देरमें मुझे उसमें भी जादू दिखलाई देने लगा। मैं इसके कारणपर नाना भाँतिसे विचार करने लगा। मैंने सोचा, शायद यहाँके पानीका यह स्वभाव ही हो। जब ज्वारकी लहरें आकर इसे भर देती हैं, उस समय यह गर्मी नहीं मालूम होती, किन्तु उनके हटते ही पानी फिर अपने रूपमें आ जाता है। लेकिन इस कल्पनाको धीरे-धीरे मैंने भयावना रूप धारण करते देखा, इसलिये बेशी इसपर विचारना ही छोड़ दिया।

जिस समय मैं अपने बदनको मल रहा था, उसी समय मैंने एक और अद्भुत बात देखी। मुझसे कोई चालीस हाथपर पानीमें मुझे हलचल जान पड़ी। फिर क्रमशः छोटे-छोटे बहुतसे बुलबुले पैदा और विलीन होने लगे। पहिले मेरे दिलमें ख्याल हुआ कि, शायद कोई मछली हो, किन्तु थोड़ी देरमें एक बहुत ही भारी बुलबुला जलतलपर दिखलाई पड़ा। यह पहिले-पहिल आदमीके शिरके बराबर था, किन्तु जैसे ही वह मेरी ओर आता था उसका आकार बढ़ता जाता था। मैं अपनी जगहसे हटकर अब घुटने भर पानीमें आ गया था। मैंने उसे बढ़ते-बढ़ते अपने पहिले आकारसे दश गुनाका हो जाते देखा। इसके बाद वह एकबएक फूट गया। मैंने देखा कि उसके भीतर कुछ न था। पीछे मुझे उसमेंसे एक प्रकारकी गन्ध जान पड़ी, जो कि बड़ी अरुचिकर थी। गन्धको तो मैंने जाना, किन्तु मुझे यह न मालूम हो सका, कि वह किसकी थी। अभी मैं इसपर कुछ ख्याल दौड़ा ही रहा था, कि मैंने पीछेसे आवाज आती सुनी। देखा तो हरिकृष्ण बंगलासे निकल आये हैं।

मैंने कहा—"पानी खासा गर्म है। क्या यह आश्चर्यकर नहीं है?" उन्होंने कुछ भी आश्चर्य न प्रकट करते हुए कहा—"वाह! इसमें क्या

है ! हमलोग चारो ओरसे इस प्रकार बन्द हैं। और शायद यहाँ गर्म-सोता होगा।"

मैं—"दक्षिणी ध्रुवसे शायद ?"

हरि—"इसके लिये मत माधव ! बालकी खाल निकालो। ठंडा होनेसे इसका गर्म होना ही अच्छा है। कितने ही आदमी इसे बहुत पसन्द करते हैं।"

इन बातों और आगेके कामोंके कारण मैं उस भयंकर बुलबुलेकी बात ही कहना भूल गया। इसके बाद हमलोग नाश्ते और रास्तेकी तय्यारीमें लग गये। एक घंटेके बाद हम यात्राके लिये बिल्कुल तय्यार हो गये। उस समय हमारा हृदय इतना हल्का था, कि, मानो किसी आमोद विहारके लिये ही जा रहे हैं। हम तीनों आदमी अब सामान लेकर डोंगीपर बैठे, और उस रहस्यपूर्ण उत्तरीतटकी ओर चले।

बूढ़ा भगेलू पूर्ववत् ही चुप और शान्त था। जैसे ही हमलोग विदा होंगे जरूर वह हमें भूल जायगा। और हमारे लौट आने हीपर स्मरण कर सकेगा। हमारे जाते ही उसकी फिर वही बीस वर्षवाली जिन्दगी शुरू हो जायगी। जब हमलोग किनारेपर उतर गये। जब वह नाव लौटानेको हुआ उसी समय उसने कहा—

"बाबू ! कृपा करके एक बात मेरी ओरसे कहना न भूलियेगा। जब आप लोग महाराजसे मिलें, तो मुझे आशा है, आप अवश्य उन्हें समझा देंगे, कि वह जो बोट बह गये, उसमें बूढ़े भगेलूका कोई कसूर नहीं है। वह रातको चले गये, जब कि मैं मालिककी चीज़ोंके पास सोया था। अगर दिनमें या मेरे सामने जाते, तो मैं कदापि न जाने देता। याद रहेगा न ?"

हरिकृष्णने उसे विश्वास दिलाते हुए कहा—"जरूर, हम अवश्य महाराजसे यह बात कहेंगे, जैसे ही उनसे मुलाकात हुई। हम कभी नहीं भूलेंगे। मैं तुमको यकीन दिलाता हूँ, कि महाराज उसके लिये तुम्हें कुछ भी नहीं कहेंगे। अच्छा बन्देमातरम भगेलू बाबा।"

भगेलूने भी "वन्देमातरम्" कहा, और अब वह नावको फेरकर, उसी एकान्त बँगलेकी ओर चला। जब हम उसको लौटते देख रहे थे उसी समय हरिने कहा—"माधव! तुम समझते हो, कि वह हमारी जुदाईसे दुःखी हुआ होगा?"

"मैं—"नहीं।"

हरि—"तो, खुश हुआ होगा?"

मैं— 'नहीं, यह भी नहीं, तथापि—"

हरि—"हाँ। तथापि उसकी दृष्टिसे मालूम होता था, मानो, उसके सिरसे कोई बड़ा बोझा उतर गया है। बेचारा भगेलू! हमलोगोंने आकर उसके कार्यक्रममें गड़बड़ी डाल दी थी। अब वह फिर उसी चिराभ्यस्त दिनचर्याका आश्रयण करेगा।"

हमारा मुँह अब अपने रास्तेकी ओर था। सारा ध्यान उसकी नीचाई-ऊँचाई, और उससे गुजरे हुए यात्रियोंके विषयमें विचारनेमें लग गया। स्वयंसेवकी झोला एक कन्धेपर, और दूसरेपर कम्बल, सामने वह मृत्युका काला खोह था। उस समय समझदार जगत्का कोई आदमी हमें देखता तो क्या कहता!

नवम अध्याय

महापथ

जब हम गुप्तसमुद्र और द्वीपके उत्तरी तटके बीचके चट्टानोंपर कोई सौ गज बढ़े, तो उसकी भयंकरताको देखकर हमने उसे 'महापथ' कहना आरम्भ किया। शायद यह दूरी पाँच मील भी न रही होगी, किन्तु यहाँ यात्राकी कठिनाई दूरीपर अवलम्बित न थी, बल्कि मार्गकी अवस्थापर। उस महापथके बारेमें हरिकृष्णने कहा था—यहाँ भूमि है ही नहीं। भूमि न होनेपर भी उन पाँच मीलोंने दस घण्टाका कठिन परिश्रम लिया।

शायद हमारी चाल असन्तोषजनक मालूम हो। किन्तु स्मरण करिये आप अपनी किसी पहाड़ी यात्राको—जैसे नैपाल जाते समय चन्द्रागढ़ीकी चढ़ाई। यदि पहाड़ी मामूली हुई तो, आप जरा देरमें सौ गज चढ़ जायँगे, किन्तु जो कहीं बीच-बीचमें बड़े-बड़े चट्टान हों, जिन-पर कूदकर चढ़ न सकते हों; और आपको उनकी परिक्रमा करते हुए चढ़ना पड़ता हो। पैरके नीचेके ढोंके भी मिट्टीसे ढँके न हों, और हिलते हों। इसपर भी आपके झोलेमें बीस, पचीस सेरका बोझा तथा कन्धेपर मोटा कम्बल हो, तो ऐसी यात्रामें अवश्य आपकी आँखें निकल आवेंगी। उस समय फिर आप हमारी कठिनाइयोंको अनुभव कर सकेंगे। हमने अपने जीवन भरमें कभी ऐसी भयानक और कठिन यात्रा न की थी।

पहिले घंटे या उससे थोड़ी देर बाद तक तो मालूम हुआ, श्वास-रहित ढकेले जाते हुए, हमारी नसें पिसने और पिंडुली फटने लगी। हमने सोचा, कि यही हालत बराबर न रहेगी, कुछ ही देरमें हम इन

चट्टानोंको पारकर किसी अच्छी जगहपर आवेंगे। किन्तु थोड़ी देरकी भिड़न्तसे मालूम हो गया, कि यहाँ परिवर्त्तनकी आशा नहीं। तब हमने अपनी पागलोंकी-सी चेष्टाको बदल दिया। अब बकरीके बच्चोंकासा चढ़ना हमने अहितकर समझा। अब हम एक बार अपने रास्तेका दृश्य अन्त तक देखकर, जितनी भी आसानी और सावधानीसे जा सकते थे, वैसे ही जाते थे। ऐसा करनेसे यद्यपि पहिले जैसे जल्दी नहीं जा सकते थे, किन्तु जाने लगे आसानीसे। इससे हमलोगोंको जरा ढारस भी बँधी। दोपहर तक हमने अनुमान किया, सात मील चले आये होंगे। सात मीलकी चढ़ाई और दो मील और चलना, पूरे नौ मीलकी यात्रा, इसपर हमारा थका-भूखा होना कोई बुरा न था। हम-लोग वहीं बैठ गये, खजूर, टिकिया, नमकीन सेव, और शर्बतका अच्छा आनन्ददायक भोजन हुआ। सौभाग्यसे इस महापथपर जगह-जगह गड्ढोंमें हमें पानी मिलता जाता था, यद्यपि हमने भी अपनी छोटी कानविसकी मशक पानीसे भर ली थी।

मैं—"मुझे तअज्जुब नहीं होता, कि क्यों विचारे रामकुमारने अपनी घुट्ठी तोड़ डाली।"

हरि—"और फिर उसने फिरकर इस रास्तेपर पैर नहीं रक्खा। वही बात रामप्रसादने भी की, याद है न ? सचमुच वह बड़े होशियार आदमी थे।"

मैं—"मैंने सोचा था, कि यहाँ दूसरे मुसाफिरोंका कुछ पता-निशान मिलेगा, किन्तु वह कहाँसे हो सकता है। बीस वर्षका लम्बा अर्सा तिसपर भी इस अक्षांशकी कड़ी वृष्टि, भला इनके हाथसे कैसे कोई चिह्न बाकी बच सकता था।

हरि—"कैसी वीरान, कैसी हृदयविदारक यह जगह है ? पम्पासरके पासकी पहाड़ियोंके विषयमें तो कहते हैं, सुग्रीव और बालिने चट्टान फेंककर लड़ाई की थी और उसीकी पहाड़ी बन गई। किन्तु यहाँ ?"

मैं—"यहाँ मैं समझता हूँ, वह भयंकर खिलाड़ी ज्वालामुखी रहा है।"

हरि—"निस्सन्देह, यह टापू एक ज्वालामुखीका शिखर है। 'रेतीली खाड़ी' और 'गुप्तसमुद्र' उसके दोनों क्रेटर (मुख-विवर) थे। इसकी फुंफकारसे निकले,—यह गले पत्थर यहाँ इर्द-गिर्द जमे हुए हैं, अथवा यह किसी पुरानी चोटीके टुकड़े हैं, जो ज्वालामुखीसे भी पूर्व यहाँ रही होगी, और जिसके अन्दर खड़ी सुरङ्ग बना ज्वालामुखीने अपने अस्तित्वकी दुन्दुभी बजाई। सहस्रों वर्षोंके तूफान, वर्षा, और धूपने इन्हें बहुत ही जीर्ण-शीर्ण कर दिया है, तो भी यहाँ अभी उनका बहुत अंश बाकी है। कुछ सहस्राब्दियोंके और बीत जानेपर, यह घुल-कर एक प्रकारके मिट्टीके रूपमें परिणत हो जायँगे, जो वनस्पतिके लिये बड़ी उपकारक होगी।"

मैं—"हाँ! ठीक, अब ज्वालामुखी भी सुप्त ही नहीं मृत है।"

हरि—"मैं भी यही कहूँगा, क्योंकि इसके सबसे अन्तिम प्रकोपको हुए दस हज़ार वर्ष बीत गये होंगे। जानते हो, अटलांटिकमें ज्वाला-मुखीय द्वीपोंकी एक माला है, जो यथार्थमें किसी समय पर्वतोंके शिखर थे। उनमें नीचेकी ओरके सारे सुप्त हैं, किन्तु ऊपर उष्णकटिबन्धवालों-मेंसे कितने ही अब भी जीवित-उग्र हैं।"

"गुप्तसमुद्रका पानी आज सुबह गर्म था"—मैंने कहना आरम्भ किया, किन्तु हरिकृष्णने मुस्कराकर कहा—

"यह कोई असाधारण बात नहीं है, 'त्रिस्ता-दो-अकुन्'में एक झील है, जिसका पानी कभी नहीं जमता, यद्यपि वह बहुत ऊँची हिमरेखापर है। जबसे इन टापुओंका पता लगा, बल्कि उससे भी हजारों वर्ष पूर्वसे इधर कोई भी जाग्रत ज्वालामुखी नहीं दिखाई पड़ा।"

बहुत समय नहीं बीता कि मुझे इसके लिये पर्याप्त प्रमाण मिल गया, कि हरिकृष्ण यहाँ गलतीपर थे। इतना पीछे तक कि १८६३, विक्रमीमें इधर एक पनडुब्बे ज्वालामुखीके जाग्रत होनेका वर्णन प्रामा-

खिकताके साथ आप 'अटलांटिक नाविक'में पायेंगे। उससे अनभिज्ञ होनेके कारण मैंने केवल तर्कके लिये कहा—

"इन्द्रायुध परके एक आदमीने जो एक दिन कहा था, कि उसने आकाशमें एक लौ देखी। हमलोगोंके इस द्वीपमें पहुँचनेसे थोड़ा ही पहले।"

हरि—"अरे वह भाँगकी लहर थी, मैंने कहा नहीं? जाने दो।"

इसी समय मेरे दिलमें उस भीमकाय बुलबुलेकी बात भी आई, किन्तु मैं अब भी उसे न कह सका, और इसके बाद उसकी जानकारी भी व्यर्थ थी।

उसी तरह चलते ही, सायंकालको हम उस बड़ी पहाड़ी दीवारकी जड़में आ गये, जो कि टापूकी उत्तरी सीमा थी। इसी भीमकाय चहार-दीवारीके उस पार समुद्र था। जब हमने दाहिने और बाएँसे उसपर गौर करके देखा तो, वहाँ कोई भी उपाय फाँदनेका न था। बहुत-सी जगहोंपर तो वह सीधी खड़ी थी, और जहाँ कुछ तिर्छाई भी लिये हुए थी, वहाँ भी दस ही पाँच कदमका रास्ता था, उसके बाद फिर वही अलंघ्यता। उस समय मेरी दशा बड़ी निराशाजनक थी। मैं एक बार दिलसे उस खयालको हटाकर दीवारके चारों ओर देखने लगा।

हरि—"आज अब हमें इसके सामने ही सो जाना होगा। सम्भव है प्रातःकालकी किरणें किसी नयी बातपर प्रकाश डालें। मेरी समझमें हमें जरा और पच्छिम ओर खिसक जाना चाहिये, वहाँ अधिक टूट-फूट दिखाई देती है। रात्रि विश्रामके लिये कोई सायादार, आड़की जगह हो तो अच्छा है।"

इसके अनुसार ही, हम लोग पच्छिम ओर बढ़ चले, यद्यपि हम दिनभरके थके थे, किन्तु हमें अपनी मंजिल सामने दिखाई पड़ती थी। इसलिये इस अन्तिम घड़ीमें हमें वैसी कठिनाई नहीं मालूम हुई, जैसीकी सुबहसे जान पड़ी थी। बल्कि इधरका रास्ता भी बहुत कुछ अच्छा था।

मैंने ही पहिले-पहिल विश्राम-स्थानको ढूँढ़ निकाला, किन्तु मुझे उसके आगेकी कुछ खबर न थी। वहाँ हमें कुछ ऊपरकी ओर चालीस फीट चढ़कर एक टीलेपरसे जाना पड़ा, वहाँ एक चबूतरा-सा मालूम हुआ। हमारा रास्ता एक पानीका रास्ता था, और चबूतरा पहाड़ीसे गिरी चट्टानें थीं, जो समय और ऋतुके प्रभावसे चबूतरेकी तरह बन गई थी। जिस वक्त मैं आगे-आगे चबूतरेकी ओर चल रहा था, तो मैंने मालूम किया कि वहाँपर चबूतरेकी दीवार कुछ भीतरकी ओर घुस गई है। मैंने समझा—हमारे विश्रामके लिये यह अच्छी छायादार जगह होगी, किन्तु, मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, जब कि ऊपर चढ़कर मैंने देखा, कि दीवार मेरे अनुमानसे कहीं ज्यादा पीछेकी ओर घुस गई है। मैं आखिरपर पहुँचकर चिल्ला उठा—

"गुफा, गुफा।"

निस्सन्देह यह एक गुफा थी, किन्तु यह एक ऐसी गुफा थी, कि जिसका मुँह बहुत कुछ उन चट्टानोंसे ढँक गया था, जो हजारों वर्षोंसे, पहाड़ीसे गिर रहे थे। चबूतरेसे गुफाका तल थोड़ा नीचे था। थोड़ी देरमें हरिकृष्ण मेरी बगलमें आ खड़े हुए, हम दोनोंने अँधेरेमें झाँका। अन्तमें उन्होंने कहा—

"अच्छा यह विश्रामके लिये बहुत सुन्दर जगह है, पानी, छाया, और प्रातःकाल कुछ करने देखनेके लिये भी। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है, माधव! कि समुद्र तक पहुँचनेके लिये यही एकमात्र रास्ता है।"

मैंने कान लगाकर कहा—"मैं तो इधरसे कुछ नहीं सुनता हूँ।"

हरि—"सो कैसे सम्भव है? शायद वह एक मील दूर हो। लेकिन मुझे तअज्जुब है।"

मैं—"बहुत ठीक?"

हरि—"कि शायद यह वही गुफा है, जिसका जिक्र कप्तानने किया है, और पुर्तगीजोंकी कहावतोंमें भी है।"

मैं—"शैतानकी गुफा ! ओः ! आओ भी ।"

हरि—"हाँ, क्यों नहीं । किन्तु कुछ भी हो, शैतान महाराजको हम सबेरे तक कोई तकलीफ न देंगे, जिसमें कि वह हमारे ऊपर आँख गड़ावें । अब यहाँ एक रात विश्राम करो, फिर कल देखा जायगा ।"

आग तय्यारकर रखनेका वहाँ हमारे पास कोई सामान न था, और उसकी आवश्यकता भी न थी । रातको हवाका नाम न था । मैंने तीन मोमबत्तियाँ निकालकर जलाईं और उन्हें गुफाके द्वार पत्थरके किनारेपर चिपकाकर रख दिया । हवामें गति न होनेसे टेम सीधी ऊपर-को जा रही थी, लेकिन हरिकृष्णने तुरन्त ही दोको मुँहसे फूँककर बुझा दिया—

"तुम बेवकूफ लड़के हो माधव ! हमें गुफामें जाने और लौटनेके लिये इनकी बड़ी आवश्यकता होगी । तुम्हें पता है, वहाँ कितनी बत्तियाँ लगेंगी ? इस सन्नाटेमें एक ही तीनके बराबर बलेगी । जब तक यह बुझेगी तब तक हम गाढ़ निद्रामें पहुँच गये रहेंगे । अच्छा अब खाने का डौलडौल करो ।"

हमने दीवारकी जड़में थोड़ी जगह कम्बलसे झाड़-झूड़कर साफ कर ली, और फिर वहीं कम्बल बिछा दिये । डटकर आनन्दपूर्वक भोजन हुआ, इतने हीमें खूब अँधेरा-घुप हो गया । हमलोग वहीं कम्बलपर पैर फैलाकर लेट रहे । दिन भरकी चढ़ाई-उतराईमें हमारी एक-एक नसमें मानो हजार-हजार फोड़े हो गये थे, अथवा किसीने मुँगरी लेकर सारे बदनको खूब कूँच दिया था । यदि हम इतने थके न होते, जिसके कारण ही नींद हमारे पहुँचनेसे पहिले ही वहाँ आकर मौका ताक रही थी, तो मैं समझता हूँ, उस भयानक अज्ञात गुफा और उसके निवासी-का ख्याल आये बिना न रहता । हरिकृष्णने सोते समय कहा—"माधव भगेलूको देखा न !"

मैं—"हाँ तो ?"

हरि—"ख्याल किया, कितनी खबरदारी वह अपने सोनेके कमरेकी,

जिसमें कि महाराजके नमूने रक्खे हैं, रखता था ? उसने सिर्फ एक बार हमलोगोंको वहाँ ले जाकर दिखाया था।"

मैं—"हाँ, वह बूढ़ा बड़ा ही विचित्र आदमी है।"

हरिकृष्णने इसपर कुछ बुर्बराया, फिर तुरन्त ही मैंने देखा, कि वह खर्राटा लेने लगे। इसके बाद मैंने उन्हींका अनुकरण करना विचारा। इस बीचमें एक बार मेरा खयाल घरको दौड़ गया, जहाँ मुझे अपने विद्यार्थी जीवनकी घटनायें सामने आने लगीं। इसके बाद बीच हीमें मैं निद्रामग्न हो गया, किन्तु वह खयाल अब स्वप्नके रूपमें परिणत हो गये। भिनसहरेके समय स्वप्नमें देख रहा हूँ, कि मैं सवेरे छात्रावाससे उठकर नालन्दाके विद्यालयके क्रीड़ाक्षेत्रमें बैठा हूँ। सूर्यकी लाली पूर्वदिशामें छिटक रही थी! गर्मीकी ऋतुमें हवाके ठण्डे-ठण्डे झोंके बहुत भले मालूम होते थे। मैं इन्तज़ार कर रहा था, मोहनके आनेका। उसे देर करते देखकर मैं मन ही मन उसको कुछ कड़वी-मीठी कह रहा था। उसी समय मेरे कानमें उसके स्नेहपूर्ण शब्द आये—

"माधव, हो!"

मैं नहीं कह सकता, स्वप्नमें मैंने इसे कितनी बार सुना। किन्तु उसी समय मेरी निद्रा खुल गई। इसके लिये मुझे खेद हुआ। देखता हूँ, अब दिनका उजाला हो गया है, मोमबत्ती खतम हो गई है। मुझे उस वक्त कुछ भी ठण्डक नहीं मालूम होती थी। मैंने एक बार अपनी आँखोंको मला और अँगड़ाई ली—

"माधव! हो!"

फिर वही शब्द मेरे कानमें आये। मैं हैरानमें पड़ गया, क्या अब भी स्वप्न ही देख रहा हूँ? मेरा जबड़ा नीचेको गिर गया। मेरे कानोंमें अब भी वही शब्द गूँज रहे थे। एक मिनट हो गया, दो-तीन मिनट हो गये—अबकी फिर एक बार वही शब्द स्पष्ट कानोंमें सुनाई दिया। अब मेरी तबियत घबराने लगी। सारे बदनपर रोमांच हो गये, मानों एक ठण्ढी हवाका झोंका-सा मेरे शरीरमें लग गया है।

दशम अध्याय

मुर्दों की गुफा

"क्या है माधव ?"

हरिकृष्णने पूछा। वह मेरी चेष्टाको कितनी ही देरसे देख रहे थे। मैंने सावधानीसे अपने पैरोंके बल बैठनेकी कोशिश की, और काँपते स्वरमें कहा—

मैं—"मैंने इसे सुना।"

हरि—"क्या सुना ?"

इस शान्त प्रश्नने एक बार मेरे विकीर्ण विचारोंको एकत्रित करनेमें सहायता की। मैंने एक बार शिर उठाकर चारों ओर नजर डाली। क्या मैं सचमुच स्वप्न देख रहा था ?

मैं—"मैंने सुना जैसे कोई मुझे पुकार रहा है।"

हरिकृष्ण खड़े हो गये और बोले—"वह यही गुफ़ा है, निस्सन्देह यह प्रति शब्दोंसे भरी है। हवा, समुद्र, गिरते हुए पत्थर सभीकी प्रतिध्वनियाँ इसमें भरी हैं। मैंने भी रातमें कई बार उन्हें सुनते हुए अनुभव किया।"

मैं ठकुआ गया। मेरे होश एकदम उड़ गये। मेरे कानोंमें अब भी वह शब्द ज्योंका त्यों भरा था।

मैं—"वह सर्वथा वास्तविक था। जब मैं बिल्कुल जागकर उठ बैठा था, तब मैंने उसे सुना। वह मेरे एक बालमित्रकी थी।"

हरि—"ठीक, किन्तु स्वप्न भी बाज वक्त बड़े विचित्र रूपमें आते हैं, नहीं मालूम ? अच्छा अब चलो चलें उस गड्ढेपर, वहाँ सीसे

निवृत्त हो 'स्टोव' जलाकर थोड़ा गर्म दूध और नाश्ता तैयार करें, फिर तब बात करेंगे।"

कम्बलोंको चौपेतकर अब हम पानीके किनारे गये। वहाँसे हमें कलके रास्तेका कुछ भाग दिखाई दिया। हमलोगोंने एक बार नजर फैलाकर उधर देखा। कलके परिश्रमपर हमें कुछ सन्तोष और हिम्मत हुई। मुझे अब ख्याल हुआ, कि मैंने सचमुच मोहनकी आवाज नहीं सुनी। रातको सोते समय जो ख्याल किया था, ज्ञात होता है, उसे ही मैं स्वप्नमें देखने लगा। इसी बीचमें कोई अस्पष्ट शब्द गुफासे मेरे कानोंमें आई होगी, जो मुझे मोहनकी आवाज मालूम हुई। बहुत दिनोंसे प्यारे मोहनको मैंने नहीं देखा। मेरी तबियत उसे बहुत मिलनेको कर रही है सही, किन्तु यहाँ कहाँ उसकी सम्भावना? सचमुच, कैसा अच्छा होता, जो इस समय मोहन हमारे साथ होता! उसे इस यात्रासे बड़ा आनन्द आता!

जब खाने बैठे, तो मैंने सब बात कही। कैसे हम स्कूलमें रहते थे? कैसे जब हम दोनों छोटे-छोटे थे, तो अपने गाँवके तालाबके किनारे खेलने चले जाते थे। कभी-कभी आँखमिचौनी खेलते-खेलते हमें बड़ी देर हो जाती थी, तो किस प्रकार कमला मेरी बहिन, और मोहनके पिता हमें पकड़कर ले जाते थे। मोहनके पिता कहते थे, जो फिर इस तरह देखा, तो बच्चू! कान उखाड़ लेंगे। किस तरह जब हम पढ़ रहे थे, तभी हमें कामकी ओर आनेकी आवश्यकता हुई। किस प्रकार हमदोनों कलकत्तामें, जहाजके काममें भरती हुए। जहाँसे हमारा 'इन्द्रायुध' तो ब्राजील और अर्जेण्टाईनकी ओर आया, और उसका जहाज आष्ट्रेलियाको। आः! कितना मैं दुखी हुआ था, जब हम दोनों एक-दूसरेसे अलग हुए।

हरि—"हाँ मालूम हुआ, कैसे तुम दोनों बैठ-बैठकर खेला करते और तरह-तरहके स्वप्न देखा करते थे। अन्तमें जीवनकी बाढ़ आई, उसने तुम दोनोंको बहाकर समुद्रमें पटक दिया। कभी वह भी दिन

आवेगा, जब फिर तुमको यहाँसे निकालकर किनारे पहुँचा देगी। अभी क्या होगा कौन जानता है?"

मैं हरिकृष्णके मुँहकी ओर देखने लगा। उन्होंने हँसकर कहा—

"क्या है? मेरे ख्याल भी उसी प्रकार दूर-दूरका सफर कर रहे थे, जैसे तुम्हारे। मैं तुमसे उसे छिपाना नहीं चाहता माधव! मेरे दोस्त! मेरे हृदयमें बराबर एक व्यक्ति बस रहा है, किन्तु यह पुराने दिनोंका कोई बालमित्र नहीं है! हाँ! य—वह एक लड़की है, जिसे मैंने एक बार और सिर्फ एक बार अपनी जिन्दगीमें देखा है, यहाँ तक कि उसका नाम तक भी मुझे मालूम नहीं।"

मैं—"क्या? एक लड़की?"

हरि—"हाँ, प्यारे माधव! एक लड़की। सुनो मैं उसीके बारेमें कहने जा रहा हूँ। तुम्हें मालूम है न, मैं मुम्बासा 'इन्द्रायुध'में सवार हुआ। पहिले मैं कलकत्ताके 'तिलक'में काम करता था। मुझे कलकत्ता छोड़े छै मास हो गये। उसी समय मैं एक दिन अपने जहाजके मालिक-की कोठीपर धर्मतला गया। किन्तु वहाँ मालूम हुआ कि सेठ इस समय अपने घरपर तुलापट्टीमें आनेको कह गये हैं। मैं जब उनके घरपर पहुँचा, तो अभी सेठजी भोजन कर रहे थे, इसलिये मुझे थोड़ी देर बैठ जाना पड़ा। मुझे ख्याल है, वहाँ एक लड़की थी। उसने मुझे बड़े आदरसे कुर्सी बैठनेके लिये ला दी, तथा समय अच्छी तरह बितानेके लिये 'भारतमित्र'की एक प्रति भी ला दी। उनसे यह कार्य इतनी खूबीसे किया, तथा वह इतनी स्वच्छ, सुन्दर और मधुर थी, कि जिस समय वह वहाँसे हटकर दूसरे कमरेमें चली गई, जहाँ कि वह सेठजीकी बालिकाको पढ़ा रही थी, तो मेरा चित्त समाचार-पत्रकी ओर न जाकर उसीकी ओर जाने लगा। उस दिनके बाद, जब कभी भी मैं अपने कामसे छुट्टी पाता हूँ, तो एकान्तमें अवश्य मुझे उस युवतीका ध्यान आता है। अब भी जब कि मैं सो गया था, तो मेरे सामने उसकी वही मनोहारिणी मूर्त्ति आविर्भूत हुई। उसके वही मधुर

बर्ताव अब भी थे। मैं इसी आनन्दमें मग्न था, किन्तु इसी बीचमें मेरी निद्रा खुल गई।"

मैं—"हाँ! यह एक बड़ी मनोहर कथा है। क्या आप फिर भी उससे मिल सकेंगे? अच्छा, उस कोठीका नाम क्या था?"

हरि—"लक्ष्मीशंकर माधवदास। हाँ, मुझे आशा है, कि मैं फिर उसे देख सकूँगा। किन्तु उसके वहाँ बराबर रहनेमें सन्देह है। शायद उसे कोई उससे भी अच्छी जगह मिल गई, तो वह वहाँ चली जायेगी।"

मैं—"उसकी सूरत कैसी थी?"

हरि—"पतली, मेरे कन्धेके बराबर होगी। बड़ी-बड़ी आँखें और काले लम्बे बाल। उसके नेत्र, ललाट और नाक बिल्कुल तुम्हारे ही सदृश थे, यही कारण है, कि बहुधा तुम्हें देखते हुए मेरा चित्त उसकी ओर चला जाता है। उसका स्वर कोमल और साफ था। उसकी मुस्कुराहट मधुर और अकृत्रिम थी। वह आपादचूड़ एक देवी थी।"

मैं—"उँह। यह सभी लक्षण अस्पष्ट हैं। क्या वह अच्छे कपड़े पहिने थी? उसके शरीरपर आभूषण थे?"

हरि—"यद्यपि उसके कपड़े बहुत स्वच्छ थे, किन्तु उनमें कोई तड़क-भड़क न थी। हाँ! मैं भूल गया, उसके गलेमें एक चार अशर्फियोंकी हमेल थी। मुझे खूब ख्याल है, वह अशर्फियाँ अकबरशाही थीं।"

मैं—"बस-बस मालूम हो गया। वह चारों अशर्फियाँ मेरी प्यारी माताने मेरी बहिनको दी थीं। कमला मेरी बहन उसको प्राणके समान रखती है। जब मैंने एक दिन उसे उनके कंठे जुड़वाकर पहिने हुए देखा, तो मैंने कहा भी,—बहिन अब यह तेरी खास पहिचान होगी। मेरी बहिन कितने ही दिनोंसे सेठ लक्ष्मीनारायणकी कन्याओंको पढ़ाती है। मेरी ही शिक्षा-दीक्षाके लिये उसने यह नौकरी कर ली थी। सेठजी मेरे पिताके तभीसे बड़े मित्र थे, जब कि वह कलकत्तामें एक समाचार-पत्रके सम्पादक थे। वह कमलाको अपनी कन्याओंके समान ही मानते

हैं। सचमुच हरि ! वह ऐसी रूप-गुण सम्पन्ना है। मैं और वह दोनों अपनी माँको पड़े हैं।"

हरिने बड़े ही आश्चर्यके साथ कहा—"सच ? ऐसा माधव।"

मैं—"यदि फिर भी हम 'इन्द्रायुध'पर जा सके, तो मैं तुम्हें उसके पत्र दिखाऊँगा।"

हरि—"धन्य सुयोग ! तुम्हारे कोठीका नाम पूछते ही, मुझे सन्देह होने लगा था, कि शायद तुम्हें कुछ पता है।"

हमारी बात यहीं समाप्त हुई। अब हम लोग नाश्ता करके तय्यार हो गये थे। मैंने देखा, कि हरि कितनी ही बार मेरी ओर आश्चर्यभरी निगाहसे देखता था। अब हमारे सन्मुख गुफामें प्रवेश करनेका सवाल था। हमारे दोनोंमेंसे किसीके भी दिमागमें, यह साफ नहीं मालूम होता था, कि क्यों हम उसके अन्दर जानेका इरादा करते हैं। शायद हमारे दिमागोंने यह चकमा खाया था, कि उसपार समुद्रमें हमारी प्रतीक्षामें कोई जहाज खड़ा है। हमने यद्यपि अपने इस भावको एक-दूसरेपर प्रकट नहीं किया, किन्तु बिना कहे ही हुए हमने यह दिलमें पक्का कर लिया, कि गुफाको पार करना होगा बड़ी सावधानी और दृढ़तासे। शैतानवाली पुर्तगीजोंकी पुरानी किम्वदन्ती अब भी हमारे दिमागमें गूँज रही थी। हमलोग चबूतरेपर चढ़ गये, फिर वहाँसे शनैः-शनैः गुफाके भीतर उतरे।

यह एक रास्ता था, जो दिनकी गर्मी और प्रकाशसे अनन्त रात्रिके अन्धकार और जादूकी ओर ले जाता था, कोई तीस-चालीस गज तक दिनके उजालेने अपने छोटेसे छोटे रूपमें हमारा अनुसरण किया। इससे वियुक्त होते ही हमारे दिलने न जाने कैसा-सा महसूस किया। चलनेमें फर्श ऊभड़-खाभड़ और खुरा-खुरा जान पड़ा। हरिने खड़ा होकर कहा—'अब हमें रोशनीकी जरूरत है, नहीं तो आगे बढ़नेमें खतरा है। अगर मशाल होते, तो इस समय अच्छा होता। देखो न

अँधेरा कितना गाढ़ा है ? मोमबत्ती यहाँके लिये बहुत दुर्बल है। अच्छा तो बत्ती एक साथ जलाओ। इन्हें एक हाथमें उठाये ले चलो। जब तुम्हारा हाथ थकने लगे तो कहना, फिर मेरी बारी आवेगी।"

तब हम लोग धीरे-धीरे आगे बढ़ेंगे। रोशनी सचमुच धीमी थी, किन्तु हमलोग बहुत ही पास-पास चल रहे थे। थोड़ी ही दूर आगे चलनेके बाद मुझे अपने इस प्रयत्नपर आश्चर्य होने लगा। मैं कौन-सी मूर्खतामें पड़ गया हूँ ? मैं क्यों इस प्रकार अपने समय और शक्तिको बर्बाद कर रहा हूँ ? हमको अन्तमें अपने कियेपर पछताना होगा।

गुफाका दृश्य—एक आश्चर्यकर जादूभरा दृश्य है। मेरे दिलमें इस प्रकारके भाव उठने शुरू हुए, किन्तु पहिले ही दस मिनटोंके बाद वह सभी विलीन हुये। अब हमें उस अर्द्ध अंधकारमें कभी खिसकना कभी आगे-पीछे चलना, कभी एक पंक्तिमें कदम बढ़ाना पड़ता था। कभी हमारी बगलमें गुफाकी दीवार होती थी और कभी पानीका रास्ता, जो अब सूखा था। कभी हम छोटे-छोटे पत्थरोंपर चलते थे; और कभी घुट्टी डूबने भर बालूपर जो कि शायद समुद्रके किनारेका-सा था। बीच-बीचमें हरिकृष्ण किसी-किसी पत्थरकी ओर झुककर देखने लगते थे किन्तु मैं बराबर अपने ध्यानको मामबत्ती और अपने पैरों हीपर रखता था। सन्नाटेका आधिक्य इतना था, चारों ओरके अन्धकारका ख्याल इतना डरावना था, कि आखिरकार मैं डरने लगा। हाँ। सचमुच मैं डरने लगा। मैं इसके लिये लज्जित नहीं हूँ।

यही कारण था कि मैंने बात-चीत करना आरम्भ किया, जिसमें कि मेरे ऊपरसे भयका प्रभाव कम हो जाय। यद्यपि हरिकृष्ण मेरे साथ छायामें चल रहे थे, किन्तु उन्हें बात करनेकी इच्छा नहीं थी। मैंने पूछा—

"आपको उम्मीद है, कि कोई और भी कभी इस गुफासे आया होगा ? कोई चिन्ह आपको इसका मिला ?"

मैं अपने शब्दोंकी प्रतिध्वनि सुनकर भौंचक-सा हो गया। मालूम होता था, उसने मीलों तक तार बाँध दिया है।

हरिकृष्णने शिर थामकर कहा—"ऐसा सम्भव नहीं प्रतीत होता।" यह मनुष्यके हाथकी रचना नहीं है। निस्सन्देह, किसी ज्वालामुखीय हलचलने इसका निर्माण किया है। यह एक सुप्त ज्वालामुखीकी एक नाड़ी है। हमलोग एक महान् आग्नेय-पहाड़की खोखड़में घूम रहे हैं।

हमलोग थोड़ा और आगे बढ़े। अब भी हम वैसे ही अन्दरकी ओर जा रहे थे, गुफाकी बनावटमें भी हमें कोई परिवर्त्तन नहीं जान पड़ा। यहाँ चौड़ाई बहुत ज्यादा थी, अब हम बीचमें चल रहे थे। नजर डालनेपर हमें अगल-बगलकी दीवारें दिखाई पड़ती थीं, और छत इतने ऊँचेपर थी कि अन्धकारसे हम उसे पृथक् नहीं कर सकते थे, किन्तु एक बात सन्तोषजनक थी, हवा यहाँ पर्याप्त थी। यद्यपि कहीं-कहीं इसमें कुछ भारीपन था, किन्तु साधारणतया वायुमंडल शुद्ध था। वायु दोनों ही छोरोंसे आती मालूम होती थी, जिसमें समुद्रकी ओरसे इसकी गति स्पष्टतर थी।

हम इस घने अन्धकारमें बीस मिनट तक चलते रहे। अभी तक कुछ भी न दिखाई पड़ा। हरिकृष्णने अनेक बार पत्थरों, और पैरके नीचेसे बालुओंको लेकर परीक्षा की, तो भी वहाँ विचारणीय कोई बात न थी। यकायक हमारे हृदयोंपर धक्का-सा लगा, हममेंसे एकने किसी चीजको ठुकराया, जिसकी आवाज किसी धातुकी पत्थरसे टकराने-सी मालूम हुई। मेरे दिलमें इसके लिये बहुत ख्याल न था, किन्तु हरिने कहा—

"ठहरो।"

मैं एकदम खड़ा हो गया। हरिने कहा—

"हटना मत, मालूम होता है तुमने कुछ गिरा दिया।"

मैं—"नहीं तो, शायद किसी चीजको ठुकराया है।"

तब वह फर्शपर ढूँढ़ने लगे, मैं खड़ा हो प्रकाश दिखलाने लगा। वहाँ कुछ भी चमकीला, अथवा फौलादकी तरह नीला दिखलाई दिया। किंतु ठीक उसी समय हरिने कोई चीज उठा ली।

हम दोनों आदमी उसपर झुककर देखने लगे, पहिली दृष्टिमें हमें पहचान मिला कि वह क्या चीज है। यह भूरे रंगकी पतली स्वस्तिकके आकारकी कोई चीज थी, किन्तु, जब हमने गौर करके देखा, तो हमें वास्तविकताका पता लगे बिना न रहा। यह एक प्राचीन छूरा था, जिसकी मूँठपर तलवारकी भाँति कब्जा लगा हुआ था। इसके फलका बहुत भाग मुर्चा लगकर गल गया था, इसलिये और भी इसके पहिचाननेमें दिक्कत थी।

मैंने हरिकृष्णके हाथको, जिसपर वह चीज थी, देखा, कि हिल रहा है। यहाँ एक सच्चा साक्षी मिला। हमको पता लगा कि हम ही अकेले इस गुफाके पता लगानेवाले नहीं हैं, किसी औरने भी हमसे बहुत पहिले इसमें कदम रक्खा था। हम अब एक-दूसरेकी ओर देखने लगे।

मैं—"मालूम होता है किसी नाविकका छूरा है।"

हरि—"हाँ, या पुराने समयके किसी सैनिककी तलवार है। इन दोनोंमेंसे कोई एक चीज अवश्य है, और यह यहाँ शताब्दियोंसे पड़ी है।"

मैं—"हैं, शताब्दियोंसे।"

हरि—"क्यों नहीं? देखो इसकी अवस्थाको। यह जगह सर्वथा शुष्क है, यहाँ सीड नहीं है। ओह! यह अवश्य शताब्दियोंसे पड़ी-पड़ी, माधव, यहाँ हमारी बाट जोह रही थी।"

मैं इसपर हँस पड़ा। थोड़ी देर तक और हम उसको देखते रहे, किन्तु वहाँ और किसी बातका पता न था। उन्होंने कहा—

"हमलोग, साफ करके, इसकी परीक्षा करेंगे, किसी वक्त। उसे हरिने अपने पाकेटके हवाले किया, और यात्रा फिर शुरू हुई।"

यद्यपि चाकू हमसे कुछ न बोला; किन्तु इसने हमारे ऊपर एक खास प्रभाव डाला। अगर हम इसे पाये न होते, तो शायद बहुत आगे

न बढ़ सके होते, किन्तु जब हमने कोई चीज पाई तो हमें आशा होने लगी, कि आगे शायद और भी कुछ मिले। अब एक नई उत्सुकता और नई उमंगसे आगे बढ़ने लगे। मैंने देखा, कि मेरी मानसिक कठिनाइयाँ आतंक और सन्देह सब न जाने कहाँ चले गये। अब पीछेके खयालकी जगह हमारे चित्तमें आगेका ख्याल आने लगा। अब दूसरी बार हमें क्या मिलेगा ?

इसी अवस्थामें जब हम आगे बढ़ रहे थे, तो हमारी यात्राका एक विशेष स्थान हमारे सामने आया।

हमारे अगल-बगलमें अभी कोई जानने योग्य परिवर्त्तन नहीं आया था। अब भी घनी-भूत अन्धकार हर चीज़को ढाँके हुए था। अब भी वही गहरा प्रतिध्वानक, गुम्बद, वही रोमाञ्चकारी वायुमंडल, वही विस्तृत पथरीला घर था, जिसमें सूर्यका प्रकाश कभी नहीं गया। रास्ता अब सीधा जाता मालूम होता था। यदि यह किसी बहुत बड़ी वक्र आकृति-का खंड हो, तो नहीं कह सकता। मैं हैरान था कि कब तक हम इसी तरह चलते रहेंगे ? कितनी देरमें समुद्र तक पहुँचेंगे ? शायद हरिकृष्ण भूल तो न गये, वह कहते थे कि यह रास्ता टापूके किनारे समुद्रको जा रहा है। उस समय मैंने प्रश्न न किया। उस समय बात करनेकी मेरी इच्छा भी न होती थी।

अब गुफा, जो पहिले धीरे-धीरे ऊँचेकी ओर जा रही थी, नीचेकी ओर होती मालूम हुई। यह नीचेकी ओर उसका झुकना तीन मर्तबामें हुआ था। सबसे पिछले फर्शकी बनावट समथर-सी मालूम हुई। यह फर्श प्रायः बीस गज तक रहा होगा। इसके बाद धीरे-धीरे फिर अब चढ़ाई शुरू हुई। हमारी रोशनी बहुत दूर तक न जाती थी, इसलिये थोड़ी-थोड़ी दूरपर ठहर जाना पड़ता था। वहाँसे आगे नज़र डालकर फिर आगे बढ़ते थे। जिस वक्त एक पत्थरपर खड़ा होकर मैं आगे देख रहा था, और चाहता था कि, अपना पैर आगे बढ़ाऊँ, उसी समय मेरी ऊँचीकी हुई मोमबत्तीसे एक गड्ढा-सा दिखलायी पड़ा। उधर

देखते ही अकस्मात् मेरी दृष्टि एक ऐसी चीजपर पड़ी, कि जिसे देखकर मैं एकदम चिल्ला उठा।

हरिकृष्ण दौड़कर मेरे पास आ गये, उन्होंने पूछा—

"क्या है?"

मैंने बड़ी धीमी आवाजमें कहा—"वहाँ उस जगह मैंने कुछ देखा है—प्रकाश।"

हरि—"प्रकाश!"

किन्तु 'वहाँ' ही सबसे अधिक अँधेरी जगह थी। वह बिल्कुल गुफाके दीवारके पास थी। उस अन्धकार और छायाकी ढेरमें हमारी निर्बल मोमबत्तीका प्रकाश अशक्त था। तथापि मैंने कहा—

"हाँ, एक प्रकारकी झलक!"

हमदोनोंने खड़े होकर अँधेरेकी ओर देखा। मेरा हृदय दहलने लगा।

हरि—"अच्छा लेकिन मैं कुछ नहीं देखता हूँ। थोड़ा बत्तीको ऊँचा उठाओ तो।"

मैंने दोनों मोमबत्तियोंको अपने शिरसे और ऊपर उठाया, अबकी फिर मैंने प्रकाश—अद्भुत प्रकाश देखा, जो अन्धकारके बिल्कुल मध्यसे आ रहा था। वह झलकमें, ऐसी आश्चर्यकर प्रकाशवाली, सूक्ष्म, तथा तेज थी, कि मैंने कठिनतासे उसको देख पाया। चाहे वह कुछ भी रही हो, किन्तु यह तो निस्सन्देह था, कि वह, जंगली जानवरकी टिमटिमाती आँख न थी।

मैं—"वहाँ! आपने देखा?"

हरि—"मैंने कुछ नहीं देख पाया।"

मैं—"वहाँ क्यों? वही तो अबकी फिर थी। मालूम होता है, वह कोई चमकीली चीज थी, जिसे मोमबत्तीके प्रकाशने पकड़ लिया। शायद कोई काँचका टुकड़ा था।"

हरि—"ओह! कोई चमकीली धातुका टुकड़ा, या शायद स्फटिक-खंड रहा होगा। अब मैंने समझा। चलो, नज़दीक चलें।"

अब ज्ञात हुआ, कि वहाँ कोई भय करनेकी चीज़ नहीं है। मेरी भी हिम्मत अब कुछ बढ़ चली। इसलिये हम तीसरी पैंडीपर बढ़े। उसके बाद एक पंक्तिमें फिर गड्हेके फ़र्शपर। एक बार फिर जब मैं घूमा, तो फिर मुझे वही चमक दिखाई पड़ी। थोड़ी देरमें हम गुफाकी दूसरी दीवारके पास आधी दूर तक चले गये।

हरिकृष्ण मुझसे आधा कदम आगे रहे होंगे। वह सावधानीसे किन्तु निर्भयताके साथ आगे बढ़ रहे थे। यकबयक वह अपनी जगह खड़े हो गये। उनका ठिठकना क्या था, मानो किसीने मेरे हृदयपर हजारों मनका कोई पत्थर दे मारा। मेरी अकल हैरान और दिमाग परेशान हो गया। उन्होंने सामनेवाले अँधेरेपर एक बार ख्याल करके देखा, और मालूम होता था कि, देखनेके साथ ही मारे भयके अचेत होने लगे। उनके चेहरेका भयानक विकार उसी समय मालूम हो गया, जिस समयकी उन्होंने अपनी गर्दनको मोड़ा। दूसरे क्षण वह पीछेकी ओर हटे और झट मोमबत्ती मेरे हाथसे ले ली। जिस समय उन्होंने ऐसा किया, उसी समय मैंने नीचेकी ओर देखा कि वह एक मृत शरीरके ऊपर खड़े थे। मैंने श्वास खींची और अपने पैर पीछे खींच लिये। किन्तु, मैंने देखा कि वह भी मेरे साथ पीछे हट आये हैं।

हरि—"ठहरो, मुझे देखने दो।"

मैं आगे न बढ़ा, और इसकी जरूरत भी न थी। अब हम उस अँधेरेके अभ्यासी हो गये थे। अब हमें उसमेंकी चीजें दिखलाई पड़ने लगी थीं। हमारे पैरोंके करीब ही एक मृत मनुष्यका शव था, जिसके शरीरपर नौसैनिक अफसरकी वर्दी थी। वास्तवमें यह शव नहीं था, जैसा कि मैंने पहिली दृष्टिमें मालूम किया, यह एक मानव कंकाल था—एक भयानक पैशाचिक हड्डियोंका ढाँचा, जिसके ऊपरसे मांसका एक-एक अणु, न जाने कबका लुप्त हो चुका था। वह धरतीपर पड़ा हुआ

था। मुँह उसका ऊपरकी ओर था। शिरकी ओर बाहोंके सीधे फैले होनेसे उसकी लम्बाई और भी अधिक होकर भयानक प्रतीत होती थी। हरिकृष्ण जब सीधे आगेको बढ़ रहे थे, तो यकबयक उनके पैरोंके नीचे वही वस्तु आ गई थी, जिसे वह देख न पाये थे। यदि वह पीछे न लौटते, तो दूसरे ही क्षण उसपर गिर पड़ते।

कंकाल तो हर वक्त ही देखनेमें भयानक मालूम होती है, किन्तु खासकर उस अनादि अन्धकारकी, उस नीरवतामें और उस परिस्थितिमें। मैंने अपनी बत्ती ऊँची की। उस भयंकर दृश्यके सन्मुख, मैंने अपनी बुद्धि और तर्क-शक्तिको शान्त रखनेका पूरा प्रयत्न किया। फैले हुए हाथोंमेंसे चमक आते देख, मैंने अनुमान किया शायद यहाँ अँगूठी होगी। मैंने देखा, कि वहाँ बगलमें हथियार—रिवाल्वर चाकू आदि भी पड़े हुए थे।

हरि—"इधर देखो, यहाँ और भी कितने हैं।"

और भी! हाँ! वहाँ सचमुच और भी थे। जिस समय मैं उनकी अँगुलीकी ओर देखने लगा, मेरा शिर घूमने लगा। दूसरे भी? ओफ! सारी जगह उनसे भरी हुई थी! उस टिमटिमाती रोशनीमें, दिखाई पड़ा, कि वहाँ कंकालोंका ढेर लगा है। उनकी आकृतिसे उनकी मृत्युके समयकी अवस्था ज्ञात हो रही थी। उनमेंसे किसी-किसीके ऊपर कपड़ा था, और कोई-कोई सर्वदा नग्न। एक जमात तो दीवारके पास थी, यह मुंड-रहित कबन्ध थे। उनके शिर उनके घुटनोंके पास थे। न जाने वर्षोंसे वह वहाँ पड़े हुए हैं। समय पाकर उनके स्नायुबन्धन टूट गये, और अब वह अंग-भंग दिखलाई देते हैं। दूसरे कितने, जिनमें कुछ झुककर एक पत्थरके सहारे घुटने टेके, मानो प्रार्थना कर रहे हैं। कोई-कोई स्वच्छ श्वेत ढाँचेसे हैं, जिनपर किसी प्रकारके विकार या मृत्युका चिह्न नहीं है। उनको देखनेसे यह समझना मुश्किल हो जाता है कि वह मृत मनुष्य हैं। वह बहुत समयसे वहाँपर हैं, किन्तु दूसरे पीछेके हैं। मैंने पूछनेकी कोई आवश्यकता न समझी, जब कि मुझे एक जगह, एक

आदमीकी टोपीपर जहाजका नाम-सा दिखाई पड़ा। जितने अक्षर मैं पढ़ सका, वह थे 'पुष्प ...

हाँ! यही महाराज जगदीशपुर और उनकी टोलीके लोप होनेका भेद था; इस विषयमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु वहाँ और भी रहस्य थे। थोड़ी देर तक हम शून्य-मस्तिष्क हो उधर ही देख रहे थे, कि हमारी दृष्टि एक आकृतिपर पड़ी जिसकी पोशाक और लेटना विशेष प्रकारका था।

मैं—"ओः! उसपर नज़र डालिये।"

यह आदमी उन दोनोंके ऊपर गिरा हुआ था। जान पड़ता है, इसकी मृत्यु उनके ऊपर खड़े होते समय हुई। जब मैंने फिर उसपर नजर डाली, तो देखा कि वह साधारण रीतिके कपड़ोंसे आच्छादित न था। हमें जो कुछ दिखाई पड़ता था, वह था—लाल मुर्चा जो पैरोंके कवच, शरीरके कवच, और छातीके आवरकपर लगा हुआ था। उसी प्रकारकी लाल वस्तु उसकी टोपीपर थी जिसके नीचे शिर ढँका हुआ था और अन्ततः खिंची हुई तलवार—जो एक मांसहीन हाथमें थी—का फल भी उसी लाल वस्तुसे ढँका था।

मैं थोड़ा और आगे बढ़ा कि भली प्रकार देखूँ। जिज्ञासाने इस समय भयको भगा दिया था। किन्तु, जिस समय मैंने उन सबको इतना देख लिया, और कुछ-कुछ तात्पर्य भी समझ लिया, तो भय फिर लौट आता-सा जान पड़ा। मैं पीछे लौटना ही चाहता था, कि हरिने जल्दीसे कहा—

"ज़रा देर ठहरो। मैं देखूँ तो।"

वह आगेकी ओर बढ़े। मैंने समझा था, कि शायद वह उस कवच-धारी पुरुषकी परीक्षा करेंगे, किन्तु वह दूरवाले पैशाचिक मुंडकी ओर बढ़ गये। वहाँ एक आदमी खूब लम्बा पड़ा हुआ था। एक विशेष उत्सुकताके साथ उसके दोनों हाथ, एक अच्छे लम्बे-चौड़े पत्थरके टुकड़ेपर पड़े हुए थे। मुझे आश्चर्य होने लगा, जब मैंने

देखा कि, हरिकृष्णने उस कवचधारीकी ओर कुछ भी न ध्यान दे, उस पत्थरकी ओर झुककर उसे छूना-सा चाहा। मैं बड़ी उत्सुकता भरी दृष्टिसे उनकी ओर देख रहा था।

यकायक वह सीधे खड़े हो गये, और उन्होंने अपने हाथको शिरकी ओर उठाया। इसके बाद वह लड़खड़ाने लगे जैसे अपने बोझको सँभाल न सकते थे। मैं मुँह-खोले अचरजसे देख रहा था उसी समय वह गिर गये। वह उन मृत्युके भयानक चिह्नोंपरसे होते हुए नीचेकी ओर जा पड़े। जिस समय वह कंकालों परसे गिरे, उस समय एक प्रकारकी तड़तड़ाहट हुई, जिसने मेरे रक्त तकको सुखा दिया।

एकादश अध्याय

मोहनस्वरूपका भूत

हरिकृष्ण मृत थे !

पहिले-पहिल मेरे ऊपर एक बड़ा आतंक छा गया। अवश्य कोई सर्वनाशक चीज यहाँ है, जिसने उन्हें मार दिया, जैसे कि उसने दूसरोंको पहिले मारा था। जैसे ही वह आगेकी ओर लड़खड़ाये, मैं बड़े ही भयकी दशामें पीछे हटने लगा। उस समय मेरे नीचेका पत्थर खिसक गया। मैंने अपनेको गिरनेसे बचानेके लिये जिस वक्त प्रयत्न किया, उसी समय मेरी हाथकी मोमबत्ती नीचे गिरकर बुझ गई, मैं नीचे और बड़े गाढ़ अन्धकारमें अकेला था।

आह ! कैसी भयंकर स्थिति ! हमने एक ही बार ऐसी बात देखी थी, जब कि उस महागर्तमें अपने आपको गिराया था। इस अवस्थाने मेरे चारों ओर एक भयानक आतंक फैला दिया। हरिकृष्ण मृत, और कोई पैशाचिक खतरा, उस छायामें, मुझे भी अपना शिकार बनानेकी प्रतीक्षामें अपनी भयंकर आँख डाल रहा है ! उस गुफाके मृत्युजालमें मैं एकाकी—बिलकुल एकाकी था। इसीलिये भयभीत हो गया। मैं गिर पड़ा।

यह गिरना ही था, जिसने हमारी प्राण-रक्षा की। मेरी चिल्लाहटकी प्रतिध्वनि अभी शान्त भी न होने पाई थी, कि फिर मैं अपने पैरोंपर था। यद्यपि भय अब भी था, किन्तु यह वैसा न था। एक क्षणमें ही मेरा दिमाग शान्त और सोचने लायक हो गया। जिस समय मैं खड़ा हुआ, मेरी तबियत खराब और सुस्त थी। मैं दीवारके सहारे लगकर थोड़ी देर बैठ गया। उस समय मेरी नाकोंमें किसी प्रकारकी बड़े जोरकी गन्ध घुस रही थी, मेरे तालूपर एक अजब अरुचिकर

स्वाद मालूम हो रहा था। किन्तु मेरे शान्त मस्तिष्कने इसे झट सोच निकालनेमें देर न की। मुझे खयाल होने लगा कि, मैंने ऐसी गंध कभी और भी सूँघी है। इसका स्मरण होते ही मेरा सारा भय काफूर हो गया। मुझे गुफाके रहस्यका पता लग गया।

उसके बाद क्या हुआ? मुझे पूरा स्मरण नहीं है। यह उस समय भी अन्धकारका स्वप्न, जल्दी, आशा और भय था, और अब तक है। उस समय जो कुछ कि मैंने किया, उसमें तर्कका हाथ कम और चटक-का ही हाथ अधिक था। मालूम हुआ, कि मैंने तुरन्त एक नहीं छै मोम-बत्तियाँ एक साथ जलाकर पाँतीसे पथरीली दीवारपर रख दीं। तब मैंने दो रूमालोंको पानीमें भिगा अपने मुँह और नाकके ऊपर बाँध दिया तब फिर उसी भयानक स्थानमें कूद पड़ा, जहाँसे भागा था। यह सब करनेमें एक मिनटसे कम ही लगा होगा।

इसके बाद स्वप्न कुछ साफ-सा होना आरम्भ हुआ। मैं उन अभागे नंगे कंकालोंको लाँघकर अपने मित्रके पास गया। वह भयानक आँख एक बार फिर मेरी ओर चमकी, किन्तु मैंने उसकी ओर ध्यान न दिया। बड़ी सावधानीसे मैंने हरिकृष्णकी गर्दन और बाँहको पकड़, बड़े भयंकर जोरके साथ पहिले उन कंकालोंसे उन्हें बाहर किया। फिर मैंने उस गड्हेसे निकलकर ऊपरके चट्टानपर, रखनेका भीष्म परिश्रम किया।

यद्यपि यह काम मेरी शक्तिसे बाहरका था। हरिकृष्ण मुझसे अधिक लम्बे और मृतदशामें पड़े थे। मुर्देका बोझा सचमुच आवश्य-कतासे अधिक भारी हो जाता है। किन्तु उस समय मेरे साहस, मेरे आन्तरिक भावोंने मुझे एक अद्भुत शक्ति दे दी थी। मैं जैसे ही उन्हें उस स्थानमें ला सका, वैसे ही वहीं उनकी बगलमें गिर पड़ा। एक क्षणमें फिर मैं खड़ा हो गया। मैं इस समय भय और निस्सहाय होनेसे काँपता और पसीने-पसीने था। एक बार मेरे दिलमें आया, मैं यह नहीं कर सकूँगा—मैं नहीं कर सकूँगा जाने दो उन्हें मरने दो।

इसके बाद फिर स्वप्नकी सनक—सबसे बड़ी सनक सवार हुई। मैंने समझा, मैं कुछ आहट सुन रहा हूँ—पैरकी। मैंने चारों ओर निगाह डाली, और बिल्कुल ही आश्चर्यान्वित न हुआ, जब कि मैंने देखा कि एक मृतक खड़ा होकर मेरी ओर आ रहा है। किसी प्रकार वह अपनी हड्डियोंको एकत्रितकर मेरी मददके लिये आ रहा है। मैंने उसकी चमकती अँगुलियों और हाथोंको, उसके बीभत्स मुखको देखा। मैंने परिस्थितिके अनुसार अपने आपपर काबू करनेका प्रयत्न किया, भयको पास न फटकने दिया। वह उस छिछले गढ़हेसे ऊपर आया, और एक अस्पष्ट, भूतों जैसे किन्तु परिचित स्वरमें बोला—

"मदद चाहते हो, क्यों दोस्त? आह! ठीक, क्या फिर तुम्हारा दाँतदर्द शुरू हो गया?"

नहीं, मैंने बिल्कुल नहीं आश्चर्य किया। आश्चर्य क्यों होगा, जब कि कोई बात स्वप्नमें हो रही है। भयकी सम्भावना न थी, क्योंकि भयकी अन्तिम किस्त तक मेरे पास आ चुकी थी, अब उससे अधिककी सम्भावना ही न थी। मैंने अपने मुँहपरकी पट्टी तोड़ ली और कहा—

"बहुत देर नहीं की, ठीक समयपर तुम आ गये। हाथ लगाओ जल्दी इसे खींचकर ऊपर ले चलें। इस गढ़ेमें, और इसके आस-पास बहुतसी जहरीली हवा भरी है, मैं इससे बाहर हो जाना चाहता हूँ।"

भूत—"बिल्कुल ठीक कहते हो, अच्छा एक-दो-तीन!"

मैंने अपनी सारी शक्ति लगाकर उस शरीरको ऊपर उठाया, और साथ ही भूतने भी जोर लगाया। तीन बारके जोरमें हमलोग ऊपर आ गये। यद्यपि शक्ति अब समाप्त हो गई थी, किन्तु प्रसन्नता थी कि काम पूरा हो गया। हमने उस निस्सहाय सूरतको जमीनसे चार फीट ऊँचे कर पाया। भूतने कितना आश्चर्यजनक परिवर्त्तन प्रदर्शित किया, जब हमने यह कर लिया, तो मैंने मजाकसे कहा—

"मुझे कभी यह ख्याल न था, कि तुम भी उनके पास तशरीफ रख रहे हो? सचमुच, मैं तुम्हारी हड्डियोंको न पहचान पाया। कंकाल,

जानते हो न, संसारमें सबके एकसे ही होते हैं। लेकिन हाँ! जब मेरे ऊपर गाढ़ पड़ा, तो तुमको ही ख्याल हुआ, मैं कभी तुम्हारे इस उपकारका बदला चुकाये बिना न रहूँगा।"

भूत मेरी ओर ताककर मुस्कुराने लगा।

मैं—"मुस्कुराओ मत। अभी इसकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। देखो, यहाँ बोतल है, इसमें शर्बत है, थोड़ा लेकर इसके मुँहमें डालो। क्यों? तुम्हें इसकी नाड़ीका भी पता मालूम हो सकेगा, देखो तो चलती-बलती है कि नहीं। देखो, जल्दी सब करो, मुझमें अब कुछ करनेके लिये ताकत नहीं है।"

भूतने मेरी आज्ञाका अनुसरण किया। क्यों न करे, वह पहिले भी करता था। हाँ। करता था, चाहे मेरी आज्ञा सरासर अनुचित ही क्यों न हो।

उसने प्रसन्नताके साथ कहा—"अच्छा, ऐसा आदमी मिलना मुश्किल है। जरा होश होने दो, मैं उनसे तुम्हें परिचित कराऊँगा।"

भूत—"मैं बड़ा प्रसन्न हूँ। किन्तु यह तो बताओ यह कौन है?"

मैं—"अरे, यह हमारे तृतीय अफसर हैं, हरिकृष्ण ठाकुर। लेकिन मोहन, कब तक वह तुम्हें यहाँ रहने देंगे? क्या बारह बजने तक?"

भूत—"नहीं उससे कुछ पहिले ही तक कि!"

मुझे भूतकी सारी ही बातचीत अच्छी तरह शब्द-शब्द याद है। मुझे याद है, कि अंतमें भूतने मेरी ओर देखा और मुस्कुरा दिया। उसने अपने आपको जैसे कहा···'पागल, मैं समझता हूँ। अच्छा, किन्तु मैंने ख्याल न किया था, कि यह ऐसे होगा।'

इस पिछली बातका कहना, मोहनस्वरूपका तकिया-कलाम था। यह ठीक उसी तरह उसके भूतके मुँहसे भी निकला। यह शब्द सीधे मेरे हृदयमें पहुँच गये, उस समय मेरी आँखें डबडबा आईं।

मेरा कंठ रुद्ध हो गया। हरिके पास चट्टानके सहारे मैं वहीं बैठ गया। मैंने देखा, भूत सब ही काम कर रहा है। वह उसे इतना

अच्छी तरह कर रहा है, कि मेरी सहायताकी आवश्यकता ही नहीं है। मैंने ख्याल किया, मैं यहाँ दम ले रहा हूँ। ओः! भूत अभी फिर मुर्दोंमें, हड्डियोंमें चला जायगा। हाय, मोहन तुम मर गये! किन्तु तब भी तुम मेरे लिये इतना करते हो। यह तुम्हारे लिये ही शोभा देता है। ओः! इसी समय मेरी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बह निकली।

भूत (अनुकम्पाके साथ)—"क्यों ? क्या हुआ ? क्यों तुम रो रहे हो ? यह नहीं मरा है ?"

मैं—"हाँ, यह नहीं मरा है ? किन्तु तुम तो मर गये हो न ? इसलिये मैं रो रहा हूँ। आः! मैं कैसे बिना रोये रह सकता हूँ, जब अपने सर्वोत्तम मित्र, अपने बाल-संघातीको भूत बने देख रहा हूँ। कहाँ तुम्हारे प्राण हैं, मोहन ?"

"एक दरख्तके ऊपर मैं समझता हूँ।"—भूतने कहा—फिर एक उत्सुकताभरी दृष्टिसे देखा। इसके बाद हरिकृष्णके शिरपर फिर पानी भिगाभिगाकर रखने लगा।

मुझमें इतनी भी शक्ति न थी, कि मैं अपने आँसुओंको भी पोंछ सकता। मैं चुपचाप हसरतभरी निगाहोंसे उसकी ओर देखने लगा। मेरा दिल बराबर आशंकित रहने लगा, कि कब तक यह हमारे साथ रहने पायेगा। सचमुच यह घड़ीके बारह बजनेके करीब ही चला जायगा। अब मैंने एक बार उस अँधेरी जगहकी ओर निगाह डाली, जिधर भूतके और साथी अब भी गाढ़ निद्रामें सो रहे थे। अबकी मुझे आँख न दिखाई पड़ी। क्या हुआ ? क्या वह सर्वथा लुप्त हो गई ? तब मैंने अपनी छओं मोमबत्तियोंको पत्थरपर चिपके तथा खूब तेज जलते हुए देखा। आः! कितना भारी अपव्यय! कैसी मूर्खता ? हरिकृष्ण क्या कहेंगे ?

इसके बाद मालूम हुआ, कि जैसे सभी मोमबत्तियाँ एक साथ ही बुझ गईं मैं बेहोश हो गया और मेरा शिर हरिकृष्णके कन्धेपर गिर गया।

बहुत देरके बाद मैं जागा, अर्थात् मैं होशमें आया। बीच-बीचमें, मुझे मालूम होता था, कि होश कुछ-कुछ आ जाता था। उस समय आधा जाग्रत और आधा सुप्त होता था, उस समय मेरे आस-पास होती सारी ही बातें अस्फुट-सी दिमागमें घुसती थीं। वार्तालापका कोई-कोई टुकड़ा सुननेमें बहुत दूरसे आता ज्ञात होता था। फिर जान पड़ा, दो आदमियोंने मेरे एक-एक हाथको अपने कन्धेपर रख, और अपने हाथोंको मेरी छातीके चारों ओर लपेटकर मुझे खड़ा किया। वह मुझे पथरीले रास्तेसे ले चल रहे थे। बीच-बीचमें मेरा पैर भूमिसे छू जाता था और ज्ञात होता था, जैसे मैं चल रहा हूँ। जब मैं ऊपरकी ओर जल्दी कर रहा था, जान पड़ता था, कि कोई पीला प्रकाश मेरे ऊपर चमकने-नाचने लगता था। उस समय मेरे दोनों साथियोंके हाँफनेकी और मेरे कराहनेकी आवाज आती थी। उसके बाद फिर पैरोंके आगे-पीछे पड़नेके साथ ऊपरकी ओर फिर वही नाचती हुई पीली रोशनी और उसका उर्ध्वमुखीन मार्गके प्रकाशित करनेका व्यर्थ प्रयत्न। यह यात्रा, जान पड़ी, हजार वर्षमें समाप्त हुई।

इसके बाद हिलना-डोलना बन्द हो गया। जान पड़ा, मैं एक चट्टानके सहारे पीठ लगाकर बैठा हूँ। मेरे मुँहमें शर्बतकी मिठास थी, मेरे मुँहपर हवा शीतल, स्वच्छ, सामुद्रिक और काफी लग रही थी। फिर मुझे समुद्रकी आवाज, गर्जन और हुँकार युक्त होते हुए भी चेतोहर और आनन्दप्रद सुनाई पड़ी। फिर जान पड़ा, कि सूर्यका प्रकाश मुझपर पड़ रहा है, इन किरणोंके साथ जीवन और चेतनाशक्ति भी मेरी लौट रही है।

बहुत दूर किन्तु धीरे-धीरे समीपतर आता हुआ हरिकृष्णका शब्द सुन पड़ा—"हाँ, यह गैस (गन्दी हवा) का असर है। कार्बोनिक एसिड मेरी समझमें,—अथवा उससे भी भयंकर कोई वस्तु। यह उस जगह भी निकल आती है, जहाँ ज्वालामुखीकी गड़बड़ मची हो। यह गैस

इतनी वजनी होती है, कि भूमिके तल हीपर रहती है। लेकिन एक घंटेके भीतर यह होशमें आ जायँगे।"

"उसे दूसरा धक्का लगेगा, जैसे ही वह मुझे देखेगा" भूतने कहा। जिसपर मेरी इच्छा हुई कि लड़कोंकी-सी हँसी हसूँ। किन्तु उसके बाद जो सन्नाटा छाया, मैंने उसमें अपनी श्रुत बातोंसे कोई निष्कर्ष निकालना चाहा। यह जाग्रत और निद्रावस्थाकी सन्धि थी। इस सिड़ी भूतने वचन दिया था, कि वह मेरे जगने तक मेरे पास रहेगा। उस अस्पष्ट होशमें भी यह स्पष्ट जान पड़ता था, कि भूतकी प्रतिज्ञाका कोई मूल्य नहीं। तथापि एक छाया सदृश अतात्विक वस्तु, स्वयं भूत हीकी भाँति, मेरे सन्मुख झलकती जान पड़ी। स्वप्नकी प्रतिज्ञाको दिनके प्रकाशमें यद्यपि कोई भी पूर्ण होनेकी आशा न करेगा। स्वप्न उलटा हो जाता है। ऐसे ही, जब मैं जागूँगा, तो भूत न रहेगा।

कुछ क्षणके बाद सभी स्वप्न समाप्त हो गये। एक सच्ची हवा मेरे मुँहपर लग रही थी। एक वास्तविक समुद्र था, जिसका गम्भीर नाद मैं सुन रहा था, जिसे कि वह नीचेकी चट्टानोंसे भिड़कर कर रहा था। मैं एक बड़ी भारी गुफाके मुँहपर बैठा था, जो एक खड़ी पहाड़ीकी जड़से सौ या अधिक फिट ऊँचेपर होगी। मेरे सामने समुद्रकी अनन्त नील जलराशिके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई न पड़ता था। चारों ओर क्षितिजोंसे मिली वह नीलिमा जगह-जगह सफेद फेनोंसे रञ्जित थी। ऊपर चमकीले नीले आकाशमें सूर्य चढ़ा हुआ था। चारों ओर प्रकाश, उष्णता और गति थी। आह! उस अन्धकार और मृत्युके स्वप्नके बाद यह बड़ा मंगलमय जागरण था।

हरि—"वन्देमातरम्, माधव!"

वह मेरे पास खड़े थे, उनके स्वर और मुस्कुराहटमें मधुरता और स्निग्धता झलक रही थी। वह घुटनोंके बल मेरे पास बैठ गये, और मेरे हाथको अपने हाथोंमें लेकर बोले—

"क्यों, अच्छे तो हो?"

मैं—"बहुत अच्छे। मैं आशा करता हूँ, कि मैंने आपको बहुत तकलीफ दी।"

हरि—"मुझे तकलीफ दी! मेरे प्यारे माधव, तुमने मेरे प्राण बचाये।" मैंने चिल्लाकर कहा—"क्या! गुफामें! क्या सचमुच वह स्वप्न वास्तविक था?"

हरि (धीरेसे)—"मुझे नहीं जान पड़ता, तुम क्या स्मरण कर रहे हो। किन्तु यह निस्सन्देह है, कि हमने गुफाद्वारा यात्रा की है। मेरे ऊपर एक जहरीली गैसने असर जमा लिया था, और तुमने मुझे उसके पंजेसे बचाया। तुम्हें याद नहीं है?"

"हाँ"। इसके बाद मुझे बहुत-सी बातें याद पड़ने लगीं। मोहन-स्वरूपके भूतके देखनेकी पिनक? वह क्या हुआ? किन्तु मैंने इसके बारेमें न पूछा। मुझे अभी बात करनेकी बहुत इच्छा न थी।

हरि—"कल रात अथवा नहीं आज प्रातःकी बातका जरा ख्याल करो। तुम्हें स्मरण है तुमने एक विचित्र स्वप्न देखा था। तुम्हें मालूम हुआ, कि एक पुकार, तुम्हारे मित्रकी आवाज सुननेमें आई।"

उनका क्या अभिप्राय था, मैं न पूछ सका।

हरि—"एक बार मैंने एक किस्सा—बड़ा ही करुणाजनक किस्सा पढ़ा था। वह भी इसी तरहका, दक्षिण-अटलांटिकका ही किस्सा था, किन्तु वह यहाँसे और दक्खिनका जहाँ आँधी और अनवरत समुद्री प्रकोप बना रहता है। दो जहाज एक ही समय और एक ही तूफानसे टूट गये, किन्तु उनके टूटनेकी जगह एक न थी। नंगे सुनसान फैले हुए, चट्टानोंके एक तो उत्तर और दूसरा दूसरी ओर टूटा था। टूटे हुए जहाजोंके आरोहियोंकी दो टोली किसी प्रकार किनारे पहुँची, जिनमें-से एकके पास रसद अत्यधिक और जगह बहुत सुरक्षित छायादार थी, और दूसरोंके पास न रसद और न ऋतु-प्रकोपसे शरण लेनेके लिये कोई सुरक्षित जगह थी। दोनों टोलियोंके बीचमें एक पतलेसे टापूका अन्तर था, किन्तु उन्हें एक-दूसरेसे मिलनेका संयोग न लगा।

आखिर एक टोलीके सारे ही आदमी भूख और जाड़ेसे मर गये, सिर्फ एक जीवित बचा, यद्यपि सौ ही गजके फासलेपर भोजन, छाया, मित्रता सब कुछ मौजूद थी! तुमने सुना, दक्षिणी अटलांटिकके एक टापूमें कैसा बीता?"

मैं—"हाँ, किन्तु-किन्तु किन्तु—"

हरि—"बहुत कुछ वैसा ही यहाँ भी हुआ है। जिस समय हमलोग द्वीपके दक्षिण ओरमें सुरक्षित पहुँच गये थे, उसी समय टापूकी उत्तर तरफ पाँच मील दूर एक जहाज तूफानमें पड़कर, चट्टानोंसे टकरा गया। सारे ही आदमी डूब गये, सिर्फ एक जीवित बचा, और वह भी कितने दिनों तक एक पहाड़ीकी जड़में एक पतलेसे चट्टानपर कैद रहा। शायद वह वहीं भूकसे मर गया होता, किन्तु अन्तिम आशाने उसे पहाड़ीके ऊपर चढ़नेकी अनुमति दी। वह चढ़कर एक गुफामें पहुँचा। यद्यपि वहाँ भी आशाके लिये कुछ न था, किन्तु उसने अँधेरेमें भीतर घुसकर खोजना आरम्भ किया, और उसका सौभाग्य था, कि उसने प्रकाश देखा, और शब्द सुने। इससे भी बढ़कर उसे आश्चर्य तब हुआ जब कि उस गुफामें, उस अन्धकारमें उसने अपने मित्रका मुख चीन्हा।"

मैंने एक गहरी स्वाँस ली। मैंने हरिके मुँहकी ओर ताकनेका साहस न किया। वह उठा और चला गया। किन्तु ठीक उसी समय कोई एक दूसरा व्यक्ति आया और मेरी बगलमें बैठ गया—ठीक उसी जगह जहाँ हरि घुटनेके बल बैठा था।

मैंने इस आगत व्यक्तिके मुँहकी ओर न देखा; किन्तु मैंने उसके नंगे पैर और पिंडली देखी जो छिले, फटे और भद्दे से मालूम होते थे, जिनपर फटे हुए कपड़ोंके चीथड़े लटक रहे थे। मैंने उसके हाथोंकी भी वैसे ही फूटे-छिले, अँगुलियोंको घिसी और छिली देखी। सचमुच, मुझे याद आ गया, कि मैं उन हाथोंको जानता हूँ दर्दके मारे मेरा दिल फिर टूटने लगा। उसने घबड़ाकर— जान पड़ता था, अब

भी उसको डर था कि कहीं मेरे दिलको यकबारगी इस सूचनासे धक्का न लगे, कहा—

"ओः ! प्यारे माधव ! किन्तु मैंने खयाल न किया था, कि यह ऐसा होगा ?"

यहाँ भ्रमकी कोई बात न थी। अन्तमें मैंने घूमकर उस चेहरेकी ओर देखा, जिससे मैं पूर्ण-परिचित था। आकृति बदल गई थी, भूखसे मुँह पीला और रूखा पड़ गया था ऊपरसे समुद्री नमकने उसे और विकृत बना दिया था। किन्तु ऊपरको उठी हुई नाक, काले कुंचित केश, पतले ओठ और गोल मुख अब भी उसी अपरिवर्तित दशामें थे। दिल भी, जो उन चमकती हुई काली पुतलियोंके द्वारा मेरी ओर झुक रहा था, वह भी वहाँ था। अब मैं कुछ बोल न सका। वास्तवमें वहाँ कहने हीको क्या था ? कौनसे शब्द थे जो उस समय भाव प्रकट करनेमें असमर्थ न होते ? थोड़ी देरके लिये इन्हीं विचारोंमें मैं शून्य हो गया। उसी समय यकायक मेरे हाथोंने उसके शरीरको वेष्ठित कर लिया, मैं उससे लिपट गया और मेरे मुँहसे अकस्मात् निकल पड़ा—"आः मेरे मोहन !"

इसके बाद कितनी देर तक हम नीरव और चेष्टाहीन रहे। बाहर-की ओरसे यद्यपि हम अन्धकारमें थे, किन्तु अन्तस्तल आनन्दके प्रकाश-से भरपूर था।

पीछे उसने बताया, कि यह सब कैसे हुआ ! उसने हरिकृष्णके कहे हुए ही किस्सेको दूसरे शब्दोंमें दुहराया। पुराने दिनोंमें घरपर हमने कुछ समुद्री कहानियाँ, मिलकर पढ़ी थीं। किन्तु उसमेंसे कोई भी ऐसी अद्भुत और मनोमुग्धकर रीतिसे न लिखी गई थी, जैसी कि यह हमारे सामने मौजूद थी। उसी तूफानने, जिसने कि 'इन्द्रायुध'को भगाकर मधुच्छत्रमें पहुँचाया, 'शोभा'को भी अपने, रास्तेसे बेरास्ते 'कर दिया। एक दिन प्रातःकाल पोतारोहियोंने देखा, कि उनका जहाज एक पथरीले टापूसे दो मील वायव्य कोणपर है। उसे एक बलवती तरंगमाला उधरको ले जा रही है, और एक

पहाड़ी दीवारपर धक्का खाकर रूईके गालेकी तरह उछल रही है। घंटों उन्होंने जहाजको रोककर उसे दूर रखनेका यत्न किया। शायद वह इसमें सफल हो जाते, किन्तु अन्तमें उनके शत्रुओंका एक भयंकर आँधीने साथ दे दिया। अब अवस्था निराशामय हो गई और तीसरे पहर दिनको जहाज चट्टानसे टकराकर चूर-चूर हो गया। समय बहुत थोड़ा था, तो भी कुछ आरोहियोंने एक नाव पानीपर उतारी थी, किन्तु उसे भी लहरोंकी क्रोधपूर्ण आँखें न सह सकीं।

मोहन—"मुझे ठीक पता नहीं कि क्या हुआ। केवल मैं और एक मेरा साथी बढ़ई पोततलपर थे। वह कड़ुआ आदमी था, उस समय भी ह्विस्की ही पिये-सा मालूम होता था। हम दोनोंके पास एक-एक रक्षक-पेटी थी। हम दोनों जहाजके बीचमें पोततलपरके एक घरमें शरण लिये हुए थे। जिस वक्त जहाज टकराया उसी वक्त सारे मस्तूले समाप्त हो गये। और जान पड़ता है, मुझे उसी धक्केने बाहर फेंक दिया, मैंने देखा। वहाँ जल नहीं है! वहाँ तो फेन और गाजसे भरे जलमें जगह-जगह लकड़ीके तख्तोंके परस्परके टकरानेकी आवाज है। यह मेरी चतुराई नहीं थी जो तैरकर बाहर निकल आया। मैं कभी न जान सकूँगा, कि यह कैसे हुआ? जिस समय यकबयक थककर मैं बदहवास होना चाहता था, उसी समय मेरा पैर जमीनमें जा लगा। वहाँसे धीरे-धीरे मैं पहाड़ीके नीचे एक ऊँची चट्टानपर आ गया। मैं रातभर उसीपर पड़ा रहा।

'सबेरे भी समुद्रकी वही दशा थी। कभी-कभी पानीका छींटा मेरे ऊपर तक आने लगा। मैंने कहा—अब क्या आशा है। एक ही बड़ी लहर और मैं पत्थर परसे साफ। जहाजसे मेरे अतिरिक्त एक ही चीज बच सकी थी, और वह आस्ट्रेलियासे अमेरिकाको भेजे गये सेवोंमेंसे एक सेवका बक्स था। यह बक्स भी टुकड़े-टुकड़े हो गया था, और सेव पानीपर तैर रहे थे। मैंने उनमेंसे दो सौ सेव चुन लिये, मेरे पास खानेके लिये कुछ न था। मैंने बड़ी सावधानीसे उन्हींपर नव दिन व्यतीत किये। पानी पीनेके लिये तो चट्टानोंमेंसे मिल जाता था।

आखिर भूखे रहकर मरनेका दिन आया। एक बार तो दिलमें आया समुद्रमें डूबकर इस आफतसे छुटकारा पा लूँ, किन्तु फिर मैंने पहाड़ीकी ओर देखा। मैं उसे बीस फीटसे ऊपर न देख सकता था। मेरे दिलमें आया, इसपर चढ़कर देखना चाहिये। यह चढ़ाई दरख्तकी चढ़ाई-सी थी, किन्तु तुम्हें मालूम है माधव! लड़कपनसे मेरा चढ़नेका अभ्यास है। उसके बाद मुझे पानीके गिरनेका रास्ता मिल गया; जिसके सहारे चढ़ते-चढ़ते मैं इस गुफाके मुँहपर आ गया। इसी जगह मैंने अन्तिम दोनों सेवोंको खाया, एकको रात सोनेसे पहिले, और दूसरेको आज सवेरे, गुफामें घुसनेके पूर्व।"

मैं—"और फिर तुमने हमें पाया?"

मोहन—"हाँ, फिर मैंने दो सौ गजके करीब चलनेके बाद तुमको पाया। किन्तु जिस समय मैंने बत्ती और तुम्हारे मुखको देखा, तो मुझे स्वप्न-सा मालूम हुआ। यह वास्तविक बिल्कुल ही नहीं मालूम होता था। और तुम भी अपनेको स्वप्नसे समझते थे।"

मैं—"हाँ, सचमुच।"

मोहन मुस्कुराया—"यहाँ, बड़ा लम्बा-चौड़ा स्वप्न मालूम हुआ। आज रातके भिनसहरेको मैंने भी तुम्हारा स्वप्न देखा था। मानो मैं नालन्दा-विद्यालयके मैदानमें हूँ। तुम्हारी प्रतीक्षा करते-करते जब देर हो गई, तो मैंने पुकारना शुरू किया—'माधव हो!'"

मैं—"ओः! इसे तो मैंने सुना था।"

मोहन (आश्चर्यके साथ)—"तुमने सुना था?"

मैंने उसे बतलाया, कि मैंने कैसे इसे सुना था, कैसे मैंने इसे हरिकृष्णको बतलाया। लेकिन हरिने कहा...

इसी समय मैंने अपनी चारों ओर देखा। मैंने समझा था, वह पास हीमें कहीं विश्राम कर रहे हैं। किन्तु वहाँ मेरे पीछे गुफाके अतिरिक्त कुछ न था।

मैंने जोरसे कहा—"क्यों! वह कहाँ गये?"

द्वादश अध्याय

आँख

मोहनने शान्तिपूर्वक कहा—"पीछे गये हैं।"

मैंने—"क्या पीछे चले गये? कहाँ पीछे?"

मोहन—"गुफाके दूसरे छोरपर। उन्होंने निश्चय किया है, आज रात्रिमें यहीं विश्राम किया जाय, क्योंकि तुम्हारा शरीर अभी चलने-फिरने लायक नहीं हुआ है। इसीलिये वह सब रसद-पानी वहाँसे लाने गये हैं। घबराओ मत। अब खतरेका भेद खुल गया है, कोई डर नहीं है। मैं भी जा रहा हूँ, रास्तेमें चीजोंके लानेमें सहायता करूँगा।"

मैं—"किन्तु काम बड़े खतरेका है।"

मोहन—"हाँ, एक तरहसे; किन्तु अब हमें उनपर विश्वास करना चाहिये। मैं ठीक नहीं कह सकता, कि तुम्हारा साथी माधव! किस तरहका आदमी है, क्योंकि अभी तुमने उसके बारेमें कुछ नहीं कहा, किन्तु जो कुछ कि मैंने इस थोड़ी देरके अनुभवसे जाना है, वह अनुगमन करने योग्य अच्छा नेता है।

तब मैंने सारी कथा कह सुनाई, जिसके छोटे-छोटे अंशोंके समझानेमें आध घण्टा व्यतीत हो गया। अन्तमें मोहनने कहा—

"आः यह तो हमारे नालन्दाके सभी पुराने स्वप्नोंके कान काटती है! और हम दोनों अभी उसके बीच हीमें हैं। मुझे तुम्हारे 'गुप्तसमुद्र' 'पुष्पक' और मंगेलूको देखनेकी बड़ी इच्छा है। मुझे आशा है, वह जल्द पूरी होगी। लेकिन अब जरा पहाड़ीकी बारीपर आओ, तो मैं उस जगहको दिखाता हूँ, जहाँ 'शोभा' टकराकर चूर हुई।"

उसने मेरी काँखमें हाथ लगाकर धीरे-धीरे किनारेपर खड़ा

किया। मैंने वहाँसे उसके पहाड़ीपर चढ़नेका रास्ता भी देखा। बीचमें कहीं-कहीं मुश्किलसे पैर रखनेकी जगह थी, सो भी पानीके बहनेसे चिकनी थी। पहाड़ी एक प्रकारसे खड़ी थी। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, कि मोहनने छिपकलीके भी कान काट लिये। मुझे अब मालूम हुआ कि क्यों उसके हाथ-पैर और अँगुलियाँ छिल गईं थीं? क्यों उसके कपड़े जगह-जगह फट गये थे। यह एक चीज थी, जिसे नालन्दाके दिनोंमें हम ख्यालमें भी न ला सके थे। साठ हाथ नीचे पहाड़ी जरा-सी तिछीं हुई थी, किन्तु मैंने वहाँ कोई ऐसा स्थान न देखा, जिसपर कि उसने तूफानमें शरण ली थी। जड़के पास देखनेसे दो जगह चट्टान जरा-जरा निकली हुई थी। इनका सिलसिला तीस हाथ तक चला गया था। इनमें यह दाहिनी ओरका भाग था, जिसपर आकर जहाज टकराया और उसका सर्वनाश हुआ। यहाँ पानी बहुत गहरा है अतः तूफानी लहरोंका प्रबल होना अनिवार्य ही है।

मोहन—"मेरा विश्वास है, कि ऐसी भयानक रीतिसे कोई भी जहाज न टूटा होगा""किन्तु चलो फिर अपनी पहिली जगहपर, नीचेकी ओरका देखना कुछ लोमहर्षण-सा हो रहा है। और अब यदि तुम्हारी आज्ञा हो, तो मैं तुम्हारे साथीके पास जाऊँ।"

मैंने उत्सुकताके साथ कहा—"लेकिन, गैससे खबरदार रहना। क्या मैं भी साथ नहीं चल सकता?"

मोहन—"महाशय हरिकृष्णने इसे बड़े जोरसे मना किया है। अगर तुम्हारी हिम्मत हो तो, उनकी आज्ञाका उल्लंघन करो। अच्छा, जाता हूँ। रोशनी आते देखना, तो समझ जाना कि हमलोग आ रहे हैं।"

इस प्रकार मोहन गुफामें अन्तर्धान हो गया। मैंने थोड़ी दूर तक उसका अनुसरण किया, किन्तु इतनेमें हाथकी बत्ती मार्गकी वक्रतामें छिप गई। अब फिर उस गुफाकी भयानकता और अन्धकारसे मेरा दिल सिहरने लगा, और मैं जल्दीसे वहाँसे उठकर द्वारपर सूर्यके प्रकाश-

में आ गया। रात्रिके दुःस्वप्नने मेरे चित्तपर भयानक प्रभाव डाला था। अब मुझे खुली हवा और प्रकाश दो चीजें बहुत अच्छी मालूम होती थीं।

मैं बड़ी देर तक वहाँ बैठा रहा। अब सूर्य धीरे-धीरे समुद्रकी ओर झुकने लगा था। दिनका वह अवशिष्ट भाग हमारे लिये बहुत ही आनन्ददायक होगा। मैंने वहाँ एक स्थान भोजनके लिये और दूसरा सोनेके लिये साफ कर लिया। चट्टानके एक छेदसे पानी पीनेके लिये जमा कर लिया। किन्तु मुझे प्रत्येक आवा-जाहीमें गैसका भय लगने लगता था। मान लो यदि वह न लौटे और जाकर उन कंकालोंमें सो गये तो? यह ख्याल आते ही मेरे देहसे पसीना छूटने लगा।

तब गुफासे एक गूँजती हुई आवाज सुनाई। दूर देखनेमें एक धीमी नाचती-सी रोशनी दिखाई पड़ी। मैं उनकी सहायताके लिये दौड़ गया। बेचारे मोहनके लिये मुझे बहुत ख्याल था। बत्ती हरिकृष्णके हाथमें थी।

हरिने प्रसन्नताके साथ कहा—"बहुत ठीक। तुम्हारा बालमित्र माधव ठीक उसी जगह मिला, जिस जगह मैं चाहता था—अर्थात् उन्हीं तीनों पैशाचिक पौड़ियोंपर। उसी जगहसे इस बड़े गट्ठरको वह ला रहा है, जैसे कि तुम देख रहे हो। उसकी सहायता मेरे लिये बड़ी आनन्दप्रद हुई।"

हरिकृष्ण आगे-आगे चले। मैंने मोहनका छोटा गट्ठर ले लिया। मोहनने धीरेसे कहा—

"तुम्हारी कसम! माधव! तुम्हारे हरिकृष्ण काम करनेमें बड़े बहादुर हैं। इन सभी चीजोंसे लदे हुए वह कंकाल-गर्त तक आ गये थे। साथ ही एक हाथमें उनके मोमबत्ती भी थी। वहीं यह सुस्ता रहे थे, कि मैं पहुँच गया। कैसा मजबूत दिल है? है न?"

मैं—"जरूर। किन्तु क्यों वह वहाँ सुस्ताने लगे?"

मोहन—"अब आगे बिना सहायताके बढ़ना असम्भव मालूम होता था, और क्या ? मुझको ऊँची जगहपर मोमबत्ती लेकर खड़े रहनेको कह दिया, और फिर स्वयं अपने मुँह-नाकपर मजबूत पट्टी बाँधकर नीचे गढ़हेकी ओर गये। नीचे उन कंकालोंको अच्छी प्रकार देखने-भालने लगे। मानो उनकी जन्म-कुण्डली खोजने अथवा उनके यहाँ आनेके समयका पता लगाने लगे थे। किन्तु वहाँ न जेब था, न कोई कागज पत्र। यहाँ तक कि वह कवचधारी भी खूखा ही था।"

"मैं—हाँ, तब फिर ?"

मोहन—"फिर चट्टानोंको ढूँढ़ने लगे। जूतेसे कोई-कोई टुकड़ा उठाते थे, और उसकी परीक्षा करने लगते थे। बीच-बीचमें पीछे हट कर स्वाँस ले लेते थे। अन्तमें उन्होंने उन पत्थरोंमें डूबकर एक बड़ा-सा पत्थर ढूँढ़ निकाला और उसे मेरे पास ले आये। फिर उसपर खूब अच्छी तरह कम्बल लपेटा। और उसीको वह ले चल रहे हैं।"

मैं—"क्या ? पत्थर !"

मोहन—"हाँ। एक बड़ा ही सुन्दर नमूना है। उसका वजन पन्द्रह सेर पक्का होगा। प्रातराशसे पहिले तक न जाने कितने और ऐसे-ऐसे वह अभी और एकत्रित करेंगे। लेकिन कौन इन्हें ढोकर घर ले चलेगा ?"

यह प्रश्न फिर सामने न आया। हम लोग गुफाके द्वारपर पहुँच गये। हरिने अपने नमूनेको एक कोनेमें डाल दिया। और थोड़ी देर तक उसी कम्बलपर लेट गये। जब हम लोग भी ऊपर आ गये तो वह मुस्कुराये।

हरि—"मैं बहुत थक गया हूँ। भूक बड़े जोरकी लगी है। कितनी देरमें भोजन मिलेगा ?"

मैं—"बहुत अच्छा। तो माधव जल्दी तय्यारी करो। जरा अपना सब गुण खर्च कर तो दो। आजकी मिहनतपर हमलोग उसके योग्य हैं।"

यहाँ घर तो था नहीं कि पर्याप्त बर्त्तन-भाँड़े और सारी चीजें मिलतीं, तो भी यथासम्भव तय्यारीमें कसर नहीं रक्खी गई। मेरा भोजनका चौका सचमुच बहुत ही सुन्दर था। मेरे आनन्दका आधा भाग तो था, मोहनस्वरूपको खाते देखना। भूख कड़ी लगनेसे हमने भोजन बड़ी रुचिसे तथा अधिक मात्रामें किया।

हमारे इस भोजके आनन्दमय वायु-मंडलका क्या कहना है! जरा स्मरण करो! इस अन्तिम और अत्यावश्यक समयमें मोहनके अचिन्तित आगमनको, जो सचमुच एक जादू था। मैं सोचने लगा, कि अब पुष्पकको खुले समुद्रमें लाकर देशकी ओर घुमाना आसान होगा। मुझे आशा होने लगी, कि अब जल्दी ही हरिकृष्ण वर्त्तमान परिस्थितिके अनुसार भविष्य-कर्त्तव्यपर परामर्श करेंगे। किन्तु मैंने देखा, कि उनके दिमागमें कुछ दूसरा ही है।

भोजन-समाप्तिके बाद ही उन्होंने कहा—"आ जाओ, अभी अँधेरा होनेमें एक घंटासे अधिक देर है। यहाँ मेरे पास बैठ जाओ।" उन्होंने कम्बल उस कोनेपर बिछाया था, जहाँ सूर्यकी अन्तिम किरणें सुगमतासे पहुँच रही थीं। हम दोनों जाकर वहाँ बैठ गये। अब हरि वहाँसे उठकर दीवारके पास चले गये, जहाँ उन्होंने अपना नमूना ले आकर रक्खा था। सावधानीसे उसे लेते हुए वह हमारे बीचमें आकर बैठ गये, और उसे अपने पैरोंपर रख लिया।

उन्होंने पूछा—"तुम्हें मालूम है यह क्या है?"

मैं—"एक पत्थर है"।

हरि—"हाँ, और उससे कुछ अधिक, इधर देखो।"

यह एक गोल छोटा-सा मामूली पत्थर था, किन्तु बीचमें बारीक फाँक थी, जिससे चमक निकलती थी। हरिने इसे ऊपर घुमा दिया, जिसमें सूर्यकी किरणें अन्दर जा सकें। उसे देखते ही हम और मोहन दोनों ही ठक हो गये। यकायक नानावर्णकी किरणें उसमेंसे फूट निकलीं।

मैं—"आँख!"

हरि—"हाँ, यही वह आँख है, जिसे गुफामें तुमने देखा था। इसपर तुम्हारे बत्तीका प्रकाश पड़ता था, जैसेकि इस वक्त सूर्यका पड़ रहा है। इधर नजदीकसे देखो।"

हमने देखा। वह रोशनी एक छोटी-सी जगहसे, पत्थरके अन्दरसे आ रही थी। वहाँ काँचकी भाँति कोई एक चीज थी, जिसका बाहरका भाग चिकना था। इसी चिकने भागपर जब प्रकाश पड़ता था, तो उसमेंसे अद्भुत लाल किरणें निकलने लगती थीं। इसीको देखकर मैं गुफामें डर गया था।

हरि—"यह तुम्हारी 'आँख' इस पत्थरमें मँढा हुआ एक छोटा-सा स्फटिक-खंड है, जो युग-युगान्तर तक कोसों नीचे पृथ्वीके उदरके भयानक अग्निमें पड़ा था। किसी ज्वालामुखीय तूफानके भयंकर ऊर्ध्व विरेचनमें पड़कर वह बाहर फेंक दिया गया; और वहाँ यह और वमन की हुई वस्तुओंकी धारमें पड़ गया, जो इस गुफासे होकर समुद्रकी ओर जा रही थीं। किसी तरह यह बीच हीमें यहाँ गुफाके सबसे निचले भागमें पड़कर दीवारसे लगकर रह गया। और इस अन्धकारमें दस हजार वर्षोंसे प्रतीक्षा कर रहा था। अभी यह प्रतीक्षामें ही था, कि इसी बीच बाहर आदमियोंने आजकलका संसार बनाया। उन्होंने असभ्यता जंगलीपनसे निकलकर बोलना, जोतना, घर बनाना, बस्ती बसाकर रहना, धर्मानुष्ठान करना, राज्य, साम्राज्य, प्रजातंत्र स्थापन करना, ऐतिहासिक वीरता प्रदर्शित करना, और अन्तमें दूर-दूरके सामुद्रिक मार्गोंका पता लगाना सीखा। इस तरह एक समय इस टापूमें ऊँचे मस्तूलों और पालोंवाला एक लकड़ीका जहाज, जो आजकलके जहाजोंके सामने एक खेल-सा होता, आया। उसपर बहुतसे बहादुर मनुष्य, जो आधे नाविक और आधे सैनिक थे जिनका अफसर एक कवचधारी और खड्गधारी वीर था। यह लोग पुर्तगीज थे, जो 'विस्की' या 'सेविल्ले'से यहाँ आये थे, यह वह लोग थे, जिन्होंने अपनी पहुँच भर पुरानी दुनियाको अधिकृत करके नई दुनियापर धावा बोला

था। उन्होंने खोजते-खोजते गुप्तसमुद्र पा लिया, और मेहराबदार मुहानेके द्वारा अपने जहाजको वहाँ घुसा दिया। फिर टापूकी देखभालमें कई दिन लगाये। और शायद इन वीरान चट्टानोंपर अपने बादशाहका झण्डा गाड़कर अपना अधिकार भी उद्-घोषित किया। आखिरकार एक दिन वह उत्तरीय दीवारके पास पहुँच गये, और फिर उन्होंने इस गुफामें प्रवेश किया, जिसको कल हमने पाया था। उनका इरादा इसके खोजनेसे, समुद्र तक पहुँचनेका रहा होगा।

उसी समय यह घटना घटी। आगे चलनेवाले आदमियोंके हाथोंमें मशाल थे, जब वह इस गड्हेमें आये, जहाँ 'आँख' बाट जोह रही थी, तो एकने इसकी चमकाहट वैसे ही देखी, जैसे कि तुमने देखी थी। और यही स्फटिककी चमक उनके जानकी गाहक हुई। पहिला आदमी चिल्लाकर आगे दौड़ा, कि इसकी परीक्षा करे। किन्तु भयंकर गैसने, जो पास ही एक चट्टानकी दरारसे निकलती है, उसे ढाँक लिया, और वह वैसे ही वहाँ गिर पड़ा, जैसे कि तुमने उसे, हाथ चट्टानके ऊपर फैलाये हुए देखा। दूसरे भी उसकी ओर झुककर आँखें फाड़कर देखने लगे; और शीघ्र ही वह भी एक-दूसरेके ऊपर गिर पड़े। सबसे अन्तमें, उस टोलीका कप्तान एक और आदमीके साथ आया, कि देखें क्या हुआ। कप्तान स्थितिको खतरनाक समझ तलवार खींचकर, आगे बढ़ा। शायद कुछ देर ही तक उसने भौंचक-सा इस हत्याकाण्डको देखा होगा कि उसका भी समय आ गया, और वह भी वहीं गिर पड़ा। किन्तु उसके साथीने जब यह दशा देखी, तो उसका होश उड़ गया। जब उसने देखा कि 'आँख' उसकी ओर घूर रही है, तो वह यहाँसे बेतहासा भाग निकला। किसी प्रकार वह जहाजपर पहुँच गया। वहाँ उसने यह सारी कथा ब्यान की, और मिथ्याविश्वासपूर्ण कालमें यह शैतानकी आँख' भयानक अटलांटिकके सम्बन्धमें एक मशहूर कहानी हो गई।

उस जालमें फँसे लोग, फिर अपनी जगहसे न उठ सके। थोड़ी देर तक उन्होंने लम्बी साँस ली। इसी गैसने अपना पूरा अधिकार

जमा लिया, और वह सर्वदाके लिये सो गये। इसके बाद यह काण्ड चार सौ वर्षोंके लिये अन्तर्हित हो गया। तब सिर्फ बीस वर्ष हुए—एक दूसरा अन्वेषक—महाराज जगदीशपुर आये; जिन्होंने शैतानकी आँखवाली कहावतको पढ़ा था, और उसपर हँस दिया था। किन्तु, उनके दिलमें आया, कि इसका अवश्य कोई और रहस्य है, और इसी रहस्यका पता लगानेके लिये वह इसकी तहमें घुसे। आखिर बत्तीकी रोशनीसे आँख फिर चमकी किन्तु उस चमकके खोजनेके ख्यालमें उनके दिमागने गैसका कुछ भी ख्याल न किया; और वह भी उसी फंदेमें फँस गये। उनके पीछे एक-एक करके उनके साथी और फिर उनके पता लगाने वाले भी उसी बलाके शिकार हुए। वह सब यहाँ मौजूद हैं। माधव! मैंने उन्हें गिना है!"

बहुत पीछे मोहनने मुझसे अनेक बार कहा—

"देखो, माधव! यदि हमने ऐसी एक कथा ही तय्यार कर ली तो यही हमारे लिये पर्याप्त होगी, हमें फिर किसी रोजगारकी आवश्यकता न होगी।"

उस समय मैंने उसे कुछ न कहा। हरिकृष्ण अपनी बात समाप्त-कर थोड़ी देर बैठे। फिर पत्थरको अपने पैरोंके बीचमें दबाकर उन्होंने एक नाविकोंवाला मजबूत चाकू अपने पाकेटसे निकाला।

हरि—"अच्छा, अब आँखको इससे निकालना है! यह कोई बहुत कठिन नहीं है।"

और सचमुच ही यह कोई मुश्किल नहीं था। जहाँ तहाँ उन्होंने चाकूको दबाया, और तिर्छे खींचा, कि टुकड़ा-टुकड़ा अलग होने लगा। पाँच मिनटके भीतर सब पत्थरको काटकर आँखको अलग कर लिया। इसकी आकृति बहुत कुछ अंडाकार थी। उसके चारों ओर एक पतला चिकना-सा पत्थरका पलस्तर था।

हरिने उसे बारबार उलट-पलटकर बड़े आश्चर्य और उत्साहसे

कहा—"यह है वह रहस्य, जिसने शताब्दियों तक संसारको अन्धकारमें रक्खा। जिसने एक विचित्र और भयानक कहावत प्रसिद्ध की। जिसने पृथ्वीके उच्चतम् श्रेणीके मनुष्योंकी बलि ग्रहण की। लेकिन यह बिल्कुल छोटा-सा स्फटिकका चिकना टुकड़ा था। बस यही सब कुछ। जब तुमने इसको उस समय, उस भयानक दृश्यके बीचमें देखा था; तो यह कितना हृदय विदारक मालूम होता था। वस्तुतः, किसी चतुर पुरुषकी यह उक्ति बिल्कुल सत्य है—मनुष्य कुछ नहीं, वह परिस्थिति के हाथका एक खिलौना है। जरा सोचो 'पुष्पक और उसके सारे आरोही इसीके शिकार हुए। शैतानकी आँख! सचमुच यह शैतानकी आँख है।"

मैंने घृणाके साथ कहा—"फेंक दो इस जघन्य वस्तुको। जाने दो इसे समुद्रमें सदाके लिये।"

हरि—"नहीं, इसकी हमें आवश्यकता है। जब हम अपनी कथा कहेंगे, तो उस समय यह उसका पक्का साक्षी होगी। इस समय इसे हमें अपने पास रखना होगा। हाँ! माधव! तुम्हारे पास बहुतसे पाकेट हैं, लो इसे एकमें रख लो। मेरे पाकेट पहिलेसे भरे हुए हैं, और बेचारे मोहनके पास तो कोई है ही नहीं।"

मैंने उस टुकड़ेको रूमालमें लपेटकर अपने ऊपरवाले पाकेटमें डाल लिया। यही 'पुष्पक' और उसके लुप्त आदमियोंकी कुञ्जी और मुर्दोंकी गुफाका रहस्य था।

त्रयोदश अध्याय

शैतानकी आँख

मोहन—"इस बातका विश्वास कठिनाईसे होता है।"

मैं—"ठीक।"

मोहन—"अब भी, मुझे मुश्किलसे विश्वास पड़ता है।"

मैं—"और मुझे भी।"

यही बात हमने कई बार दुहरा-दुहराकर की। अन्तर यही था, कि कभी मैं प्रश्नकर्त्ता होता, और कभी मोहन। अन्तमें हम दोनों एक-दूसरेके हाथको अपने हाथोंमें दबाकर एक निश्चयपर पहुँचे, कि यह सब निस्सन्देह सत्य है।

उस गम्भीर समयमें अपनी मानसिक शान्ति और स्वस्थतापर हमें बड़ा आश्चर्य होता है। शायद हम दोनों जोशमें थे, और इसके अतिरिक्त दो वर्षके बाद मिले थे। दोनों बड़े धीमे स्वरसे बात करते थे, इसके अतिरिक्त कभी-कभी हाथ मिला लेते थे। हम दोनों एक ही कम्बलके नीचे बड़े आनन्दसे सोये। उस समय मेरा मुँह मोहनके मुँहके पास था। हम दोनों इतने ही दिनोंमें बहुत बढ़ गये थे।

उस रात निद्रा असम्भव मालूम होती थी और हमने उसकी इच्छा भी न की। हमलोग आपसमें तरह-तरहकी बात करनेमें लगे थे। हरि हमसे बीस गजके फासिलेपर छायामें सोये थे। उस भलेमानुषने ऐसी जगह अपना बिस्तरा किया था, कि जहाँ हमारी फुस-फुस नीचेकी समुद्रगर्जनाको पारकर न पहुँच सकती थी। निद्रा बहुत देरके बाद आई। अन्तिम बात मोहनने हरिकी की थी—

"क्यों माधव! तुम्हारा हरि पत्थर-सा है?"

मैं—"हाँ, ऐसा ही।"

मोहन—"जानते हो, मुझे क्या ख्याल हो रहा है ? मैं उसके पीछे आग-पानीमें कूद सकता हूँ।"

मैं—"मैं भी, और उनके लिये भी। मैंने इस बातका उसी समय अनुभव किया, जिस दिन पहिले-पहिल मैंने उन्हें देखा।"

मोहनने थकावटसे एक लम्बी स्वाँस ली। थोड़ी देर बाद अर्द्ध-निद्रितावस्थामें जम्हाई ली, फिर बुरबुराया—।

"मैंने नहीं सोचा था, कि यह ऐसा होगा ! यह—"

"यह अभी उसकी जिह्वापर ही था, कि वह निद्रामें मग्न हो गया। उसका शिर उसकी दाहिनी बाँहपर था और बाईं बाँह मेरी छातीपर थी मैं उसके इस आत्मसमर्पणपर मुस्कुराया और पाँच मिनट-के बाद मेरी भी वही दशा थी।

यह पाँच मिनट अनेक विचारोंसे परिपूर्ण थे, यद्यपि वे विशृंखलित थे, जैसे कि निद्राके समयके विचार साधारणतया हुआ करते हैं। मुझे खूब स्मरण है, कि मैंने समुद्रसे अपनी भूलके लिये क्षमा माँगी। मैंने कहा—

"मैंने ख्याल किया था, कड़ी मिहनत मशक्कत तूफान और धक्का-के अतिरिक्त तुम्हारे पास कुछ नहीं है; इसलिये मेरा विश्वास तुमपरसे उठ गया था। उस समय मुझसे यही आशा हो सकती थी; किन्तु अब तुमने मुझे बहुत-सी चीजें दी, जिनमेंसे अन्तिम और सर्वोत्तम मेरा बालमित्र मोहन है, जिसे तुमने दिया। समुद्र देव ! मेरी क्षमाप्रार्थना-को स्वीकार करो, और मुझे अपना आज्ञाकारी सेवक समझो" इसके बाद मैं निद्रामें लीन हो गया। उस निद्रामें मुझे स्वप्न आतेसे मालूम हुए। नीचेकी लहरोंके धक्केसे वह पहाड़ी हिलने लगी !

मैं कई घंटे सोता रहा। मेरी निद्रा खुली। उस समय समुद्रीय ऊषाकी रक्त किरणें नीचे समुद्रके उस स्थानपर खूब प्रतिफलित मालूम हो रही थीं, जहाँ कि तूफानने 'शोभा'को पटककर तोड़ा था। थोड़ी देर तक सोये हुए मैं इस दिनके नवजात शिशु-सूर्यके महान् प्रयासको

देख रहा था, जो कि सब जगह अपने शत्रुओंको परास्तकर अपना अधिकार जमाना चाहता था। मुझे उस समय कुछ ठण्डक मालूम होती थी, किन्तु जैसे ही मैंने उठकर अपनी रगोंको कुछ हर्कत दी, कि फिर मेरी तबियत ताजा हो गई, मैं अपनेमें नूतन उत्साह पाने लगा। जवानीकी फुर्ती फिर लौट आई। मैंने स्वच्छ और खुली सामुद्रिक हवाको दिल खोलकर पान किया।

मोहन अब भी गहरी नींदमें था। मैंने उसे जगानेके बदले अपने आधे कम्बलको भी उसके ऊपर ओढ़ा दिया। अब मेरे दिमागसे कलवाले स्वप्नकी गन्ध निकल गई थी। अब मेरे लिये मैं और मोहन दोनों ही यथार्थ थे। उसके आनेने कितना परिवर्त्तन उत्पन्न कर दिया। कोई भी वीरान द्वीप वीरान नहीं हो सकता, जिसमें मोहन हो। कोई भी निराशामय प्रदेश निराशामय नहीं हो सकता, जहाँ आशापूर्ण मोहन उपस्थित हो। अवश्य यह उपस्थिति हरएक वस्तुके आकारमें महान् परिवर्त्तन करेगी।

हरिकृष्ण भी अभी सो रहे थे, किन्तु उसकी स्वाँस बहुत धीमी-धीमी बिना किसी प्रकारका शब्द किये चल रही थी। मैं शौचादिसे निवृत्त हो नाश्ता तय्यार करनेमें लग गया। मुझे ख्याल हुआ कि मैं अब इसे उदारताके साथ कर सकता हूँ, क्योंकि अब हमारा मुँह घरकी ओर है, और शायद रात्रिके आनेसे पूर्व ही हमलोग उस जगहपर पहुँच गये रहेंगे, जहाँ हमने आते समय अपनी रसदका कुछ भाग जमा कर दिया है। यह तब यदि हम बँगले तक न पहुँच सके। मैंने खूब प्रथम दर्जेका नाश्ता तय्यार किया। फिर हरिकृष्णको जगाया—

"नाश्ता तय्यार है, सर्कार उठिये।"

उन्होंने अपनी आँखें खोलकर देखा। चीजें तय्यार करके आल-मोनियमकी तश्तरीमें रखी थीं और दूध स्टोवपर चढ़ा हुआ था। हरि उठकर झट मुँह-हाथ धोने गये। फिर मैंने मोहनको जगाया—

"उठिये कुम्भकर्णजी, तुम्हारे भाग्यसे फिर रात आयेगी।" मोहनने

कम्बलके नीचेसे अपना स्मित मुख बाहर किया। उसने कहा—"मैं जागता था, कितनी देरसे कि? तुम्हारा सब देख रहा था।"

मैं—"जाओ जल्दी मुँह-हाथ धोकर तय्यार हो जाओ, नहीं तो देखना ही तुम्हारा हिस्सा रहेगा, समझे? मैं बड़ा भूखा हूँ, मेरे लिये दो हिस्से अधिक न होंगे।"

प्रातःकालके छिटकते हुए प्रकाशमें वह नाश्ता बड़े ही आनन्दका मालूम होता था। यह सायंकालके भोजनसे भी मधुर था, क्योंकि उस समय हम थके-माँदे थे और अब खूब ताजा। हरिकृष्ण चुपचाप खाने-में लगे हुए थे, किन्तु मोहन बीच-बीचमें अपना नटखटपन दिखाये बिना न रहता था। बीच-बीचमें हरिकृष्णकी दृष्टि गुफाके अन्धकारकी ओर चली जाती थी। मुझे उसके देखते ही फिर वह पैशाचिक दृश्य स्मरण आने लगा। मैंने उससे हटानेके लिये कहा--

"चलनेके लिये बड़े उत्सुक हैं क्यों?"

उन्होंने विकसित बदन हो कहा—"हाँ, हमें बँगलेपर चलना है। यहाँ तकका प्रोग्राम तो निश्चित हो गया। अब इसके बाद दूसरा अध्याय सोचना है। तुम्हारी क्या राय है?"

मैं—"बिल्कुल ठीक। भगेलू जब दोकी जगहपर हम तीनोंको देखेगा, तो कैसा अचरजमें पड़ेगा। यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि, वह इस समय हम सबको सर्वथा भूल गया होगा, किन्तु सामने जाते ही उसे बातें फिर याद आने लगेंगी।"

मोहन—"इससे भी बढ़कर कितनी बातें उसे याद आयेंगी। मैं बड़ा उत्सुक हूँ कि उसके उस आनन्दको देखूँ, जो कि उसे मुझे देखकर होगा। अच्छा अब बाँधा-बूँधी करें। मैं बिल्कुल ठीक हूँ। मैं समझता हूँ, एक पक्ष सेवका फलाहार आदमीके सभी रोगोंको चंगा कर सकता है। मैं जानता हूँ, माधव! जिस समय वह देखेगा, तो उसे स्वप्नकी भ्रान्ति होगी। वाह क्या खूब!"

मैं—"किन्तु वह तुम्हें खाते देखेगा, तो तुम उसके लिये महामारी हो जाओगे।"

मोहन—"उँह, यह वही, माधव ! अब भी है, चलो अब अपना काम ठीक करें।"

हमने इसके बादका आधा घंटा गठरी बाँधनेमें लगाया। अब मैं निस्संकोच कह सकता हूँ, कि अबकी बारकी बँधाई मुझे यात्रारम्भकी बँधाईसे बढ़कर मनोरंजक थी। बीच-बीचमें मोहन एकाध चुटकुले छोड़े बिना नहीं रहता था।

मोहन—"वाह ! कितनी चीजोंका गट्ठर तुम बाँध लाये हो। तुमने तो रॉबिन्सन क्रूसोकी चोटीपर भी लात दे दिया। स्वयंसेवकी झोला, स्टोव, बत्ती और क्या क्या ! विचारा रॉबिन्सन न हुआ, नहीं तो उसे कामके बहुतसे गुर अप्रयास ही मिल जाते !"

मैं—"हाँ ठीक कहा, किन्तु यहाँ उसको इसके लिये कोई गुर न मिलता, कि अपनेसे बड़ोंके सामने कैसे जबानमें लगाम देनी चाहिये। हाँ, अच्छा लो, जो गठरी चाहो चुन लो !"

मोहन—"यदि दो बुराइयोंमेंसे चुनना है, तो मुझे छोटी दो।"

मैं "बिल्कुल ठीक। ठीक ही कहा बच्चे ! और यही अधिक भारी है।"

अब हमने उस भूमिको अन्तिम नमस्कार किया। अँधेरेमें पहुँचते ही, मोमबत्ती जला ली गई। इसके बाद शनैः-शनैः हमारी हँसी बुझ गई, क्योंकि उस अन्धकारके घरमें दाँतोंके खोलनेका हुक्म न था।

हरि अपनी गठरीको लिये आगे-आगे चल रहे थे, मोहन तथा मैं उनकी पीठपर थे। यह उतराईका रास्ता था। उतराई, जो कंकाल-गर्त तक चली गई थी। हमारे लिये अब रास्ता कुछ नहीं था, क्योंकि हमको उसका अनुभव हो गया था, बल्कि हमारे दो साथियोंने तो उसे दो बार तै कर लिया था। मेरा हृदय भी अब शान्त था, तथापि उत्सुकता भरे हृदयसे हरिने दो-एक बार फिरकर मेरी ओर देखा।

आगे पेज 140 पर देखिये

हरि—"ज्वालामुखी अलाप-बिलापसे भरी यह गुफा है। सम्भव है तुमको दूसरी 'आँखें' देखनेमें आवे किन्तु इसकी आशा कम है।"

उसके बाद मैंने अनेकबार अपने आसपासमें नजर दौड़ाई। रास्ता बराबर जान पड़ा। यद्यपि हमने कई जगह उस चट्टानी दीवारके खनिज-कोषमें अनेक बार चमक देखी, किन्तु वह लाल-लाल आँखें करके घूरनेवाला स्फटिक-नेत्र फिर न देखनेमें आया।

अन्ततः हम कंकाल-गर्तपर आ गये। वहाँ थोड़ी देर तक दम लिया। उस समय उस पैशाचिक स्थानके विषयमें हममेंसे किसीने जिक्र न छेड़ा। एक तरहसे हम सभी मौनसे थे। सचमुच, मैं नहीं समझता, कि किसीने भी उस समय अँधेरेमें उस दीवारकी ओर देखा होगा, जहाँ कि कंकालराशि थी। यद्यपि हमारे लिये यह बड़े आनन्दकी बात होती, यदि हम उनकी समाधि बना पाते, किन्तु वहाँ इसके लिये गुंजाइश न थी। गढ़े खोदने या पर्याप्त मिट्टीका संग्रह करना असम्भव था। जहाँ इतने दिनोंसे वह पड़े हुए हैं, वहीं उन्हें रहना होगा, अखंडित अन्धकार ही उनकी समाधि है।

अवशिष्ट गुफाकी यात्रा अब आरम्भ हुई। यद्यपि रास्ता साफ न था, किन्तु पूर्वपरिचित था। हमें पहिलेके कई स्थान याद थे। हमलोगोंने इस यात्राको इतनी अच्छी तरह तै किया, कि शायद प्रकाशमें पहुँचते-पहुँचते हमें एक घण्टा भी न लगा होगा।

मोहन (लम्बी साँस ले)—"ओह! मालूम होता है, जैसे कोई अभागा गदहा हूँ।"

मैं—"हाँ, लेकिन, शृंगयुक्त और पुच्छरहित। देखो न यह तुम्हारे शिरपर काली सींग है!"

फिर हमलोग चबूतरेपर चढ़ गये। वहाँ हमने झोरा-झण्टा नीचे पटक दिया, और विश्राम करनेके लिये पड़ रहे। यहाँ हम कुछ देर तक ठहरे, क्योंकि उस अँधेरे और ऊबड़-खाबड़के चलनेने हमारे

चित्तको न जाने कैसा-सा बना दिया था। यद्यपि आगेका रास्ता भी कोई अच्छा नहीं था, किन्तु उसमें वह कालरात्रिकी भयानकता तो नहीं आनेवाली थी।

हरि—"गुप्तसमुद्रसे यहाँ तक आनेमें हमें एक पूरा दिन लग गया था, किन्तु इसकी वजह यह थी, कि हमको रास्ता देखना जगह-जगह ठहरना, और इधर-उधर कभी-कभी भटकना भी पड़ा था। यदि हम-लोग सीधे चले गये, तो मुझे आशा है, कि सूर्यास्तसे पहिले ही किनारेपर पहुँच जायेंगे।"

मैं—"और बाकी तो सिर्फ झिझिरी खेलना होगा"। मुझे यह नहीं मालूम था, कि महापथके समाप्त करते ही, हमारी सबसे बड़ी समस्या आरम्भ होगी।

एक लम्बी दम लेनेके बाद हमलोग फिर उठ पड़े। हम जल्दी-जल्दी हरिके पीछे-पीछे चल रहे थे, और कोशिश कर रहे थे, कि जहाँ तक हो, नजदीकसे चलें। किन्तु जितना ही हम आगे बढ़ते थे, उतनी ही हमारे मार्गकी कठिनाई बढ़ती जाती थी। यद्यपि मोहनको द्वीपके बारेमें कुछ अनुभव हो चुका था, किन्तु उसके लिये भी यह आश्चर्यकर था। उसमें लथड़-पथड़ होनेसे पहिले ही कहा—"हाय रे किस्मत! मैंने एक बार बद्रीनारायणके एक पर्वतकी, हाँ तुंगनाथकी चढ़ाईका वर्णन पढ़ा था, किन्तु मैं उस समय उसे ठीक न समझ सका था। मालूम होता है वह भी ऐसी ही होगी। लेकिन यह दृश्य माधव! अफसोस है, कि राजगृहमें नहीं ले जाया जा सकता, नहीं तो भाग्य खुल जाता।"

मैं—"हाँ, आठ आनेका टिकट, और लड़कोंके लिये आधा टिकट, देखनेके लिये। सारा पटना और बनारस उलट पड़ता कि! तब तो शायद बिहारवाले, रेलके बच्चेसे न काम चलता, पटनासे सीधी लाईन लानी पड़ती। लेकिन बच्चू! मैं इसके लिये भगीरथ नहीं बनने जा

रहा हूँ। बस! 'बकसैं बिलार, मूष बाणा रहि हैं'। इन्हें यहीं रहने दो।"

इसके बाद मैंने देखा, कि मोहन आगे बढ़कर हरिके साथ होनेके लिए बड़ा जोर लगा रहा है। हरिकृष्णने दिग्दर्शक अपने हाथमें लिया था। जैसे ही जैसे दिन ढलता जाता था वैसे ही वैसे वह अधिक उत्सुक होते जा रहे थे। अब उनका ध्यान रास्तेकी ओर इतना आकृष्ट था, कि बातें करनेकी फुर्सत न थी। मुश्किलसे एक-दो बार उन्होंने मुझसे और मोहनसे हमारे थकनेके बारेमें पूछा होगा। किन्तु उसमें भी मैंने ख्याल किया, कि वह उत्तरकी प्रतीक्षा न करते थे। उनके अभिप्राय-को जानकर हम लोग भी दिल तोड़कर साथ रहनेकी कोशिश करने लगे। यद्यपि मैं चलनेमें बदहवास था, किन्तु मोहनकी अवस्था देखकर बीच-बीचमें एकाध बात उससे कहे बिना न रुकता था। एक बार मैंने कहा।

"कहो मोहन! तुमने कहा था, कि तुम्हारे जहाजके आदमियोंने जहाजपरसे एक नाव उतारी, ठीक उसी समय जब कि वह टकरानेके समीप पहुँच गई थी। तुम ठीक जानते हो, कि वह उलट नहीं गई?"

मोहन—"हाँ, ठीक, यद्यपि मैंने इसे अपनी आँखोंसे न देखा, किन्तु मुझे इसपर बिल्कुल सन्देह नहीं। क्यों?"

मैं—"क्योंकि, यदि वह उलटती नहीं, सीधे किनारे चली आती, तो आदमी 'गुप्तसमुद्र'का पता लगा लेते, और वहाँ आकर बँगला दखल कर लेते। और यह बहुत खराब होता, यदि वह आदमी उत्तम श्रेणीके न होते।"

मोहन—"इसके लिये बेखटके रहो यह कभी नहीं हो सकता। मैं इसे स्वीकार करता हूँ, कि आदमी उत्तम श्रेणीके न थे—कोई-कोई बड़े ही रूखे उजड्ड मल्लाह थे। किन्तु मुझे कदापि विश्वास नहीं कि वह जीवित हैं।"

मैं भी सुस्त न था, तिसपर हरिकी बढ़ती हुई उत्सुकताने और चित्तको चंचल कर रक्खा था। अब दिन समाप्त हो चला था, और तो भी अभी हम वहीं चट्टानोंके मैदानमें चक्कर खा रहे थे। हम अभी उस स्थानको न पा सके जहाँ हम रसदका एक हिस्सा रख गये थे, हरिने इसका जिक्र भी मुझसे न किया था। जिस समय मैं उन्हें इधर-उधर अपनी तेज दृष्टि दौड़ाते देख रहा था, उस समय और भी मेरा होश उड़ रहा था। यद्यपि यह अकारण था, किन्तु ऐसी वह मनहूस जगह थी, जहाँ हजारों ऐसी अकारण बातें जमा थीं।

किन्तु यकबयक रंग पलट गया। जिस समय मैं यह सब सोच रहा था, उसी समय हरि एक चट्टानपर चढ़कर चिल्लाये—

"समुद्र, बस आधा घण्टा और!"

इस जोशने एक नया असर पैदा कर दिया। इसने हमारी नसों और जाँघोंकी थकावट भी भुलवा दी। हरि फिर आगे बढ़े, हमलोग साँस बन्द किये उनके पीछे थे। क्रमशः मार्गकी कृच्छ्रता दूर होने लगी, और रास्ता चौड़ा दिखलाई देने लगा। दस ही कदम और चले थे और सामने गुप्तसमुद्र आ गया।

यह गोधूलीका समय था, दूसरे छोरपर छाया पड़ी हुई थी। बँगला भी साफ नहीं दीखता था, जान पड़ता था अँधेरेमें कोई सफेद-सफेद दाग है। मैंने देखा कि अब हम महापथसे प्रायः निकल आये हैं। अब आगे एकसौ पचास गज ही बाकी रहा है। सौ गज तक फैले हुए पत्थर और चट्टान, और फिर पचास गज ही बालुका तट बाकी है। इसी बीचमें मैंने देखा, हरि आधी दूर निकल गये, किन्तु इसी समय एक चिकने पत्थरपर उनका पैर फिसल गया, वह एक कराहत, जो आधी दर्द भरी और आधी असन्तोष भरी थी, के साथ गिर पड़े। तुरन्त ही खड़े हो गये, किन्तु अब पैरपर बल न दिये जानेके कारण उन्होंने एक बाँह मेरे कंधेपर रख ली।

हरि—"यह बाधा पड़ी। मालूम होता है, मेरे पैरमें मुर्च आ गई है।"

मैं—"यह खुश-किस्मती है, कि आपने पहिले नहीं तोड़ लिया। आप समझते हैं कि, चल सकेंगे?"

उन्होंने दो-चार कदम चलकर देखा, किन्तु दर्द बहुत अधिक होता था। फिर वह रुक गये।

हरि—"ना, मुझे बड़ा सख्त अफसोस है; लेकिन असम्भव है, अब तुम्हें नाव लानी पड़ेगी।"

मोहन—"मान लो, यदि गोली दागी जाये। तो क्या भगेलू इसे नहीं सुनेगा, और नाव नहीं लावेगा?"

आरम्भमें यह ख्याल अच्छा मालूम हुआ, किन्तु विचारनेके बाद मैंने इसे व्यर्थ समझा—"छोड़ो, इसकी जरूरत नहीं। वह बिस्तरेपर चला गया होगा। यदि वह सुनेगा भी, तो अपनी अनेक कल्पनाओंमेंसे इसे भी एक समझ लेगा, क्योंकि यह निश्चय है, कि अब तक वह हमें भूल गया होगा।"

हरिने स्वीकारते हुए कहा—"अच्छा है, तुम दोनों जाओ, मैं यहाँ बैठा प्रतीक्षा कर रहा हूँ। यदि बहुत अँधेरा भी हो जायेगा, तो भी मैं तुम्हें पुकार सकूँगा अथवा बत्ती दिखा सकूँगा।"

मैं—"बहुत ठीक आपने फरमाया। आप समझते हैं, कि हम आपको अकेले छोड़कर चले जायेंगे? नहीं, जनाब तृतीय अफसर साहब! यह हमारा इरादा नहीं है। मोहन, अपने सेवके फलाहारके बाद भी, खतम हो चुका है, उसे भी जरा दम लेनेकी आवश्यकता है। मैं अकेला बँगलेको जा रहा हूँ, नाव लेने। आप इसके लिये कोई चिन्ता मत करें। भगेलू मुझे पहिचान भी सकेगा, और मोहन उसके लिये एक विचित्र जन्तु-सा होगा, जिससे वह यदि भड़क भी जाय, तो कोई सन्देह नहीं।"

मेरा तर्क लाजवाब था, अन्तमें दोनोंको इसे स्वीकार करना पड़ा। हमने अपनी-अपनी गठरी वहाँ बालूपर रख दी, और कम्बलोंको बिछा दिया जिसपर कि दोनों आराम करें। अब मैं खाली हाथ था। किन्तु इसी समय मैंने एक भारी भूल की। मैंने अपने जेबसे पिस्तौल निकाल-कर, मोहनके कम्बलके पास रख दिया, यद्यपि अब तक उसे मैंने बरा-बर साथ रक्खा था। अब मैंने किनारे-किनारे जहाँ तक मुझसे हो सकता था, जल्दी-जल्दी आगे बढ़ना शुरू किया।

मेरे चले जानेके तीन मिनट बाद हरिकी नजर मेरे रिवाल्वरपर पड़ी, वह आश्चर्य और भयसे ठक हो गये, उन्होंने अपने ओठ खोले और चाहा कि मुझे वापस बुला लें, किन्तु मेरी थकावटका ख्याल करके फिर मुँह बन्द कर लिया।

चतुर्दश अध्याय

बँगलेमें क्या देखा-सुना

मैंने पहिले कहा था, कि गुप्तसमुद्रकी लम्बाई एक मीलसे कुछ अधिक होगी। अतः मुझे डेढ़ मीलके करीब चलना था। अब अँधेरा हो गया था। मेरे पैरोंके नीचेकी काली रेत बड़ी चिकनी और चलनेमें मुश्किल थी। मैं एक पैर जमाकर जैसे ही दूसरा पैर उठाना चाहता था, वैसे ही पहिला अपनी जगहसे आधा कदम पीछे हट आता था। मैं आगे बढ़नेकी कोशिशमें बहुत जल्दी कर रहा था, किन्तु मुझे सफलता मिलती नहीं जान पड़ती थी। मैंने बालू छोड़ ऊपरसे चलना चाहा, तो देखा कि वह उससे भी कठिन और भयानक काम है। वहाँ रास्तेमें बड़े-बड़े पत्थर पड़ते थे, जिनसे उस अँधेरेमें पैर तोड़ बैठना आसान था। मैंने लाचार फिर वही रास्ता पकड़ा। देर हो किन्तु सुरक्षित तो था।

यह कहना कठिन है, कि क्यों, जितना ही मैं आगे बढ़ता जाता था मेरी बेचैनी बढ़ती जाती थी। शायद उस भयंकर टापूमें उस पैशाचिक अंधकारमें, उस जादूके समुद्रके किनारे, यह पहिला समय था, जब कि मैं अकेला था। इसके अतिरिक्त हरिकी वह उत्सुकता थी, जिसके चिन्ह मैंने स्पष्ट उनके मुखमंडलपर देखे थे। यह सभी बातें एकत्रित होकर मेरे ऊपर इतना अधिकार जमा चुकी थी, कि बँगलासे आवाज पहुँचने भरकी दूरीपर पहुँचते-पहुँचते मुझे चारों ओर कुआँ, और भूत-प्रेतका ही भ्रम होने लगा था। इसमें सन्देह नहीं, यदि उस समय अकस्मात् कोई एक कंकड़ भी खरबड़ाता तो मैं चिल्लाकर भाग उठता।

कोई भी इस प्रकारकी घटना नहीं हुई। अन्तमें जो चीज मुझे दिखाई भी दी, वह मेरे लिये अधिक आनन्ददायक और उत्साहप्रद थी। यहएक रोशनी—लैम्पकी रोशनी थी, जो शनैः-शनैः अधिक स्पष्ट होती जाती थी, वह बँगलेकी एक खिड़की द्वारा आ रही थी। पहिले-पहिल जब मैंने देखा, तो मुझे इतनी खुशी हुई, कि मैंने चाहा, कि बूढ़े भगेलूको आवाज दूँ। किन्तु इस डरसे कि इस हल्लासे बेचारेको नाहक कष्ट होगा, मैं अपने इरादेसे बाज आया। इसके बाद फिर एक बार भय मेरे चारों ओर जमा होने लगा। यद्यपि यह बेवकूफी थी, यह मैं जानता हूँ किन्तु हुआ ऐसा ही।

फिर कोई बात बड़े जोरसे मेरे सामने आई।

समुद्र अब घोर अंधकारमें था, किन्तु उसमें दूर तक 'पुष्पक' श्वेत ढाँचा-सा मालूम होता था। वह वहाँ उसी तरह था, जैसा कि मैंने उसे पहिले नीरव, मृत और महान् देखा था। मैंने थोड़ी देर ठहरकर देखना चाहा, किन्तु वहाँ कोई वस्तु स्पष्ट न थी। इसके बाद मेरी नजर घाटपर पड़ी, जहाँ छोटी डोंगी सदा खड़ी रहती थी। वह अब भी बड़ी मजबूतीके साथ बँधी, सुरक्षित थी, जैसा कि भगेलू दोनों बोटोंके बह जानेके बाद सावधानीसे किया करता था। मैं उसके ढाँचे मात्रको देख सकता था।... मैं थोड़ा और ठहरा, उत्सुकतापूर्ण दृष्टिसे अन्धकारको चीरकर उसे फिर एक बार देखना चाहा। वह ढाँचा डोंगीका न था। निस्सन्देह, वह नाव जिसे मैं अस्पष्ट देख सकता था, डोंगीसे अधिक बड़ी थी।

यह बहुत अच्छा हुआ, कि मैं वहाँ देखनेके लिये खड़ा हो गया। मैंने दो-तीन लम्बी साँस लेकर स्वाँस गतिको साधारण कर दिया। उधर बालूमें चलनेसे आती हुई आवाज भी बन्द हो गई। इस सन्नाटे-में बँगलेकी ओरसे कुछ आवाज आती जान पड़ी।

उन शब्दोंके साथ मुझे धक्का-सा मालूम हुआ। यह आवाज भगेलूके रामायण पढ़नेकी नहीं थी, यह दो प्रकारकी आवाज थी।

उतनी दूरसे यद्यपि मैं यह निश्चय न कर सकता था, कि वह किनकी है। किन्तु एक बात निश्चय हो गई। मैं अब खबरदार हो गया। अब मुझे वहाँ भय और सन्देह अनुभव होने लगा। अब वह उत्सुकता और प्रसन्नता मुझसे दूर भाग गई थी। मैं इसी अवस्थामें दबे पाँव आगे बढ़ा।

अब मैं बँगलेसे पचास गजकी दूरीपर उससे कुछ नीचेकी ओर था। जब मैंने एक क्षण उधर ध्यान लगाकर सुना, तो मेरी अकल ठीक हो गई थी, और वहांसे हटकर मैं एक सुरक्षित जगहमें चला आया। अब मैं तटसे समथर भूमिकी ओर घूम गया। यहाँसे मैं बगलमें, तथा पीछेसे भी होकर स्वेच्छानुसार बँगलाके पास जा सकता था। अब मैंने अपने जूतोंको खोलकर अलग कर दिया।

इस समय मेरे बढ़ते हुए आतंकने बड़ा अच्छा किया। अब मेरी घबराहट दूर हो गई थी, और मेरे दिलमें हिम्मत आ गई थी, जो कि दस मिनट पहले मुश्किल थी। उस पैशाचिक द्वीपके अन्धकार और नीरवतामें भयकी अपेक्षा, जीवित शत्रु विशेष जानने योग्य वस्तु है। मैंने निश्चय कर लिया कि चाहे कुछ भी हो, देर किये बिना वास्तविक खतरेका पता लगाना आवश्यक है।

बँगलेकी पीछेकी ओर कोई खिड़की न थी, अतः उधरसे कुछ पता लगाना असम्भव था। मैंने देखा था, कि प्रकाश उस कमरेसे आ रहा था, जिसमें अपने मालिकके नमूनोंकी खबरदारी करते हुए भगेलू सोता था। मैं बिल्लीकी भाँति दबे पाँव बँगलेके कोनेपर पहुँच गया, थोड़ी देर मैं वहाँ खड़ा होकर सुनता रहा, सचमुच वहाँ दो धीमी-धीमी आवाज खण्डित वार्तालापकी थी। मुझे यह जाननेमें देरी न लगी, कि भाषा अँग्रेजी थी। बँगलेका दर्वाजा खुला हुआ था, और उसी प्रकार उस कमरेका भी दर्वाजा था, जिससे आवाज आ रही थी।

धीरे-धीरे सरकते हुए, मैं दर्वाजेके पास पहुँच गया, और झाँक-कर भीतर देखा। यद्यपि द्वार आधा खुला था, किन्तु मैंने कुछ न देख

पाया। कुछ भी देख पानेके लिये मुझे खिड़कीका सहारा लेना होगा। मैं अब खिसकते-खिसकते बँगलेके पास जा पहुँचा। अपने आपको प्रथम आड़में छिपाकर फिर जरा पीछे हटकर, मैंने अपने शिरको जरा आगे बढ़ाया, और अन्दर झाँका।

कमरेकी छोटी मेज खिड़कीके पास रखी हुई थी। इसी जगह महाराज अपने प्रति दिनके नमूनोंको रखकर उनका पृथक्करण और सूचीकरण करते थे। भगेलूके सोनेकी चारपाई हमेशा कमरेके बीचमें रहा करती थी। किन्तु उस समय स्थानमें कुछ परिवर्त्तन दिखाई पड़ा। मैं चारपाईको बिल्कुल न देख सका, अतः अनुमान हुआ कि शायद खींचकर खिड़कीकी आड़में कर दी गई हो। मेजके पास दो आदमी बैठे हुए थे, जिनके शब्द अब भी मैं सुन रहा था। भगेलूकी लालटेन मेजपर उनके बीचमें खूब बल रही थी। उनके सामने एक बोतल शराब, कुछ प्याले तथा और खानेके बर्तन थे। वह खाना खा रहे होंगे, किन्तु वह समाप्त हो गया था, और अब शराबके साथ-साथ बात कर रहे थे।

इतना सब जाननेसे पूर्व ही मैंने उन आदमियोंको पहिचान लिया। किन्तु अब उनके शिर नंगे थे, मैंने इस तरह उन्हें न देखा था। दाहिनी ओरके आदमीके बाल बहुत छोटे और प्रायः श्वेत थे, और दूसरेके लम्बे काले-काले गर्दनपर पड़े हुए थे। एकका चेहरा स्थिर भूरा और पतला था, और दूसरेका भारी, गम्भीर शान्तिद्योतक, जिसमें मोटे लेन्सके चश्मोंके बीचमें गहरी आँखें थीं। एक आदमी कदका छोटा और फुर्तीला था, और दूसरा लम्बा, मजबूत और भारी था। पहिली ही बार देखनेके बाद मैंने उन्हें अच्छी तरह पहिचान लिया। एक मौडमूलरका कप्तान स्टुअर्ट जेक्सन था, और दूसरा उसका साथी चुप्पा भूगर्भशास्त्रका प्रोफेसर।

मुझे आश्चर्य होता है, जब मैं ख्याल करता हूँ, कि इतना पहिचाननेके बाद क्यों नहीं मैं आनन्दके मारे चिल्ला उठा, तथा उनके

स्वागतके लिये दौड़ गया। यह स्वाभाविक भी होता क्योंकि, हमलोग उनके आनेकी प्रतीक्षामें थे। किसने मुझे रोक दिया—बचा लिया, यह और कुछ नहीं एक लड़कपन एक बदमाशी थी। मैंने आनन्द-ध्वनि नहीं की, न दौड़कर घरमें घुस गया। पता लगनेके पहिले धक्के-के बाद मैं चुपचाप यह जाननेके लिये खड़ा हो गया, कि क्या खबर है? और उसका हम सबसे क्या ताल्लुक है? तब मैं धीरेसे दर्वाजेके पास गया। मेरे दिलमें यह इच्छा न थी, कि मैं एकदम उनके पास चला जाऊँ, मैं खड़ा-खड़ा सुनना चाहता था, कि वह क्या बात कर रहे हैं, और इसीमें जब कोई अनुकूल प्रकरण आयेगा, तो उसी समय मेरा नाटकीय प्रवेश होगा।

मेरे विचारको कार्य-रूपमें परिणत करनेका अच्छा मौका था। बाहरी द्वार खुला था, और अन्दरका अधखुला। मुझे सिर्फ बराण्डेमें खड़े होकर अपने अवसरकी प्रतीक्षा करनी होगी। मैंने यह सब काम बारीकीसे, बिना किसी प्रकारकी आहट दिये किया। मैं दबे पाँव बराण्डेमें कमरेके द्वारसे दो हाथके फासिलेपर चला गया। यहाँसे उनकी बातचीत मैं स्पष्ट सुन सकता था। उनके द्वारसे लैम्प बराण्डेमें प्रकाश फेंक रही थी, जो मेरे पैरोंसे एक गजकी दूरीपर पड़ता था। उतने प्रकाशके अतिरिक्त बड़े द्वार तक सारा बराण्डा अन्धकारमें था।

पहिलेसे मैं पकड़ न सका, कि वह क्या बात कर रहे हैं, क्योंकि मेरा ध्यान एक दूसरी चीजकी ओर था। इसी बराण्डेमें, जहाँ प्रकाश पड़ता था। उससे जरा आगे अँधेरेमें, ढेर-सी ढीली बँधी हुई कोई चीज थी। उस रोशनीको लाँघकर उसके पास जाकर मैं न देख सकता था, क्योंकि इससे मैं दिखाई पड़ जाता। मालूम होता था, कोई लम्बा चोगा या ओवरकोट है; जिसे मैंने समझा कि नवागतोंमेंसे किसीने शायद असावधानीसे वहाँ फेंक दिया हो। इससे आगे मैं कुछ न सोच सका और मैंने इस ख्यालको छोड़ दिया। लेकिन धीरे-धीरे अँधेरेमें मेरी आँखें अभ्यस्त होती जा रही थीं। उस ढेरके करीब ही

कोई चीज थी जो अन्धकारसे पृथक् कुछ सफेदी लिये हुए थी। यह सफेद चीज थी, जान पड़ता था कि आदमीका हाथ जोरसे बँधा हुआ है·······और उसके नीचेकी ओरका काला दाग, यह क्या था ? क्या पानी था ?

मैंने साँस थाम ली। मेरे दिलमें भय होना शुरू हुआ। मैं सोचने-में असमर्थ था—मुझे जान पड़ता था, कि क्या सोचूँ। एक मिनटमें इस अवस्थामें रहनेके बाद दूसरा स्पष्ट विचार आया आदमीका हाथ ! अगर यह सचमुच हाथ है, तो यह ढेर कोट ओवरकोट नहीं हो सकता ···। यह अवश्य आदमी होगा···

अब भयानक आतंक मेरे ऊपर—सारे शरीर और मनपर छाने लगा। आदमी ! कोई आदमी ऐसी जगहपर सोना न स्वीकार करेगा··· और तिसपर उस ढेरमें स्वाँस और हर्कतका पता न था। यदि यह आदमी ही है, तो अवश्य एक मृत मनुष्य हो सकता है। और वह दाग—जिसपर हाथ पड़ा है ! पानी ?

इसके बाद सन्नाटा मेरे आतंकका सन्नाटा। मैंने कमरेके भीतरसे शब्द सुना। यह पहिला स्पष्ट शब्द कप्तान जेक्सनके स्वरोंमें था—

"किन्तु मैं खून नहीं पसन्द करता !"

मालूम हुआ, जैसे यह मेरे प्रश्नका उत्तर है। यद्यपि यह भयंकर था, किन्तु मेरे लिये लाभदायक हुआ। मैंने छायामें पड़े उस ढेरकी ओर ख्यालको हटाया। मेरी दशा उस समय ऐसी हो गई, जैसे किसी बेहोश होकर गिरते हुए आदमीपर ठंडा पानी पड़ जाय। मैंने आत्मस्थ होनेका प्रयत्न किया, और सावधान तथा चिन्ताशील हो गया। मालूम हुआ, बराण्डेके रहस्यकी कुंजी कमरेके अन्दर है, और मैं इसे चाहता भी था।

कप्तानके शब्दोंके जवाबमें एक हँसी सुनाई पड़ी। इस उत्तरने उस दुबले आदमीके दिलमें बेचैनी पैदा कर दी, और उसने अबकी और स्पष्ट करके कहा। मैं जरा और आगेको खिसका, कि जरा झुककर

वक्ताओंको देखूँ। कप्तानकी पीठ मेरी ओर थी, और प्रोफेसर बगलमें, अपने साथीकी ओर न देखते, अपने पासके फर्शकी ओर देखते हुए बैठा था।

कप्तान—"नहीं, मैं खून नहीं पसन्द करता। और मेरी समझमें महाशय! आपको इससे बचना चाहता था। इसकी यथार्थमें कोई आवश्यकता न थी।"

प्रोफेसर अब भी ऊपरकी ओर ताक रहा था, उसने अबकी शब्दोंमें उत्तर दिया—"मत वेसमझ बनो। यह आदमी नहीं था, यह था केवल भूत—छाया। मैंने उसे सिर्फ कैदसे मुक्त कर दिया है। इसके अतिरिक्त, मैं क्या कर सकता? जब तक वह जीता हम इस निधिको हाथ न लगा सकते थे। तुम्हें मालूम है, उसके पास एक पिस्तौल थी। वह जो कुछ भी जानता था, बस यही जानता था, कि वह यहाँका चौकीदार है। किन्तु उसे वह नहीं मालूम था।"

सन्तुष्ट करनेके लिये यह स्पष्ट गम्भीर तर्क था। इसका एक-एक वाक्य हथौड़ेकी चोट थी। कप्तान जेक्सनने थोड़ी देर कुछ न उत्तर दिया, और जब दिया, तो वह स्थान-भ्रष्ट हो चुके थे। कप्तान—"जो कुछ भी हो, यह खेदजनक है। यदि और किसीने जान लिया, तो मामला भयानक हो जायगा।"

प्रोफेसर—"हाँ, सचमुच यह खेदजनक है। किन्तु हम दोनोंके अतिरिक्त कोई नहीं जान सकता।"

मालूम हुआ, इन निठुर दलीलोंसे कप्तानको सन्तोष हो गया। उसने गिलास मुँहमें लगाया, जिस समय वह इस प्रकार शराब पी रहा था, मैंने देखा उसका रिवाल्वर उसके हाथके नीचे मेजपर लैम्पके नीचे रक्खा है। इसी समय मुझे स्मरण हो आया, कि मैं अपने रिवाल्वरको छोड़ आया। ओह! मैं कैसा बेवकूफ गदहा था! एक घूँट लेकर उसने पैंतड़ा बदल दिया—

"मैं स्वीकार करता हूँ, प्रोफेसर ! कि तुम्हारे पास उत्तरकी दरिद्रता नहीं है, और जो कुछ तुम कहते हो, वह एक प्रबल तर्कपर अवलंबित होता है।...किन्तु संयोगका भी ख्याल करना चाहिये...क्योंकि संयोग मिल सकता है।"

प्रोफेसर—"किन्तु इस काममें नहीं। यहाँ सब चीज पक्की है।"

कप्तान—"हाँ, ठीक जहाँ तक किया जा सकता है। मैं यह कहनेके लिये बिल्कुल तय्यार हूँ कि आप इसमें उस्ताद हैं। किन्तु यहाँ एक और मार्ग है, उस गुफावाला। मैं उसे बिल्कुल नहीं पसन्द करता। किन्तु कुछ भी हो, वह एक ऐसी चीज है, जिससे संयोग भिड़ सकता है।"

तब प्रोफेसरने अपने शिरको ऊपर उठाया, और मोटे-मोटे चश्मोंके भीतरसे अपने साथीपर उसने एक गम्भीर नजर डाली। उसने कहा—

"उस गुफाको मैं आपपर छोड़ता हूँ। यह आपका काम है। किन्तु मुझे उसका डर नहीं है। हमलोग कुशलपूर्वक जहाजपर पहुँच सकते हैं।"

थोड़ी देरके सन्नाटेके बाद कप्तानने धीमे स्वरमें कहा—"और तब ?"

प्रोफेसर—"उसके बाद घर, अपनी निधिकी परीक्षामें, जैसा कि मैंने कहा। तब जैक्सन ! तुम्हारे लिये एक अच्छा इनाम; जो तुम्हें जिन्दगी भरके लिये मालामाल कर देगा—यदि हमारी निधि निराशाजनक न हुई।"

कप्तान जैक्सन फिर चुप हो गया, किन्तु एक ही मिनटके लिये। अब मुझे उसके ढंगसे मालूम होने लगा, कि उसपर शराबका असर हो आया है।

कप्तान—"और यदि यह निराशाजनक नहीं हुई तो प्रोफेसर ! यह कहाँ जायगा ? क्या उसके पास जिसके राज्यमें यह चट्टानें हैं या उस

बेचारेके उत्तराधिकारियोंके पास जिसने पहिले-पहिल इस गुप्तकोषको ढूँढ़ निकाला ? या उनके लिये कुछ भाग ? क्या ऐसे प्रश्नोंकी भी कोई आवश्यकता है ।''

एक बार हँसते हुए प्रोफेसरने अपनी तीखी नजरको अपने साथीके चेहरेपर गड़ाकर कहा—''नहीं, जैक्सन ! इसके पूछनेकी कोई आवश्यकता नहीं ।''

कप्तान—''यह ठीक है । मुझे दो टूक बात अच्छी मालूम होती है । तो आप इसकी सूचना न ब्राजीलवालोंको देने जा रहे हैं, और न संयुक्त-राष्ट्र अमेरिकावालोंको ।''

प्रोफेसर—''हाँ ! कप्तान, इसके बारेमें मैं समझता हूँ आपको रोड़ा न अटकाना होगा, आप अपना हिस्सा लीजिये, और अल्ला-अल्ला-खैर-सल्ला ।''

अब कप्तान कुछ होशमें आते हुए—''हाँ, प्रोफेसर, मैं आपका अपमान करनेके ख्यालसे नहीं पूछ रहा था, अच्छा जाने दीजिये । लेकिन क्या हमलोग रातभर उस भूतको बरायडामें रखे इस घरमें सोयेंगे या उसे किसी ठौर ठिकाने लगाना होगा ।''

प्रोफेसर—''क्यों ? मुझे इसमें कोई हर्ज नहीं है, किन्तु यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो इसे पानीमें फेंक आओ ।''

कप्तान—''नहीं, जनाब, मैं नहीं । मैंने कह दिया, कि मुझे खून पसन्द नहीं है । मैं बड़ा कृतज्ञ हूँगा, यदि आप स्वयं इसे करेंगे ।''

मैंने प्रोफेसरकी ओरसे स्वीकार होनेका-सा संकेत पाया । उसी समय मैं दबे पाँव वहाँसे बाहर निकल गया । कुछ ही देरमें मैं एक चट्टानकी आड़में चला गया, जो बँगलेके दर्वाजेसे दस हाथपर अँधेरेमें थी । वहाँसे एक मिनटके बाद मैंने देखा एक आदमीके हाथमें एक लम्बी गठरी-सी है । वह आगे बढ़ा और थोड़ी देरमें मैंने पानीमें किसी चीजके गिरनेकी-सी आवाज सुनी । तब वह आदमी बँगलेकी ओर लौटकर उसमें घुस गया, और उसने द्वार बन्द कर लिया ।

Shataan Ki Ankh —
Rahul Sankratyayan

पञ्चदश अध्याय

पुष्पकका अन्त

हरि और मोहन मेरे लिये अब कुछ उत्सुक होने लगे थे। मुझे गये दो घंटे हो गये थे। यद्यपि हमने अन्दाज किया था कि इसके आधे ही समयमें बँगलेपर जा और नाव द्वारा लौट भी आऊँगा। नाव द्वारा लौटनेके ख्यालसे उनका ध्यान बराबर समुद्रकी ओर था। बहुत देरकी प्रतीक्षाके बाद उन्हें जान पड़ा कि दूर पानीके छींटा उठनेकी-सी आवाज आई। निस्सन्देह उन्होंने इसे सुना होगा, किन्तु यह वही भगेलूकी अन्त्येष्टि थी।

इसके बाद वह लोग विश्वास और उत्सुकता भरे हृदयसे प्रतीक्षा करने लगे। उन्होंने निश्चय कर लिया कि, मैं चला आ रहा हूँ, और यह ठीक भी था, किन्तु उस मार्गसे नहीं। कोई एक घंटा बीत गया, हारा थका, पसीने-पसीने भय और घबराहटसे आधा पागल-सा मैं उनके पास पहुँचा। आप अनुमान कर सकते हैं, कि मेरी भीषण कथा सुनकर उनके हृदयपर कैसा प्रभाव पड़ा होगा।

"बँगला—डाकू हत्यारे! उन्होंने गरीब भगेलूको मार डाला—और समुद्रमें फेंक दिया। पहिले-पहिल मैं बहुत घबराया हुआ था। मेरे मुँहसे बात तक न निकलती थी, क्योंकि मैंने अपनी आँखोंसे उस भयानक अभिनयका उपसंहार देखा था। मैंने समझ लिया, कि कथा-को अच्छी तरह सुनानेके लिए स्वस्थ होनेकी आवश्यकता है। फिर वहीं बैठकर साँस लेने लगा। मोहनने एक गिलास शर्बत देकर और अच्छा किया। फिर कम्बलपर झुके हुए मैंने एक-एक करके सारी बात कह सुनाई।

एक वार सबके चेहरेपर सन्नाटा छा गया। उनके ढंगसे मुझे मालूम हुआ, कि इसका असर उनपर भी मुझसे कम नहीं हुआ है। जब मैं कथा कह रहा था, तो मेरे ऊपर प्रश्नोंकी बौछार पड़ने लगी। यथाशक्ति मैंने उत्तर देनेका प्रयत्न किया। फिर उन्होंने इसे असन्दिग्ध यथार्थ स्वीकार कर लिया। हरिके हृदयमें बूढ़े भगेलूके दुर्भाग्य हीपर सन्ताप नहीं था, किन्तु जान पड़ता था उनका ध्यान किसी और चीजकी ओर भी गया। उन्होंने बदला लेनेका प्रस्ताव ही नहीं उठाया। उन्होंने दृढ़तासे कहा—

"चढ़ाई करनेका ख्याल ही फजूल है। पहिली बात तो यह कि इन पैरोंसे मैं वहाँ पहुँच ही नहीं सकता, और दूसरे इससे कोई लाभ नहीं।"

मैंने विरोध किया—"हमारे पास दो रिवाल्वर हैं।"

हरि—"और उतने ही उनके पास भी हैं माधव। अधिक नहीं हों तो भी वह उनके प्रयोगको तुमसे अच्छा जानते हैं। वह हैं भी सुरक्षित स्थानमें। यदि तुम वहाँ गये, तो वह खिड़कीसे ही तुमपर फैर करेंगे।"

मैं—"तो फिर बेचारा भगेलू?"

हरि—"हाँ, ठीक, यह बड़ी ही गर्हित हत्या है, और इसका बदला अवश्य मिलना चाहिये। किन्तु उसके खूनके बदले हमें नाहक और खून न करने चाहिये। हमें भी एक बड़ी चाल चलनी होगी, जानते हो न, वह बड़े ही चालबाज हैं?"

मोहन बोल उठा—"खास करके प्रोफेसर।"

हरिने शिर हिलाकर स्वीकार किया। तब मैंने अपनी बात छोड़ दी। हम लोगोंके सामने एक बड़ा काम है, यह हमारे नेताके चेहरेसे मालूम होता था।

मैंने, कुछ न सोच सकते हुए कहा—"हमें क्या करना चाहिये?"

हरि—"पहिले तो हमें तटसे हट जाना चाहिये, नहीं तो सबेरे शायद वह रोशनी या उजालेमें देख लेंगे। और यदि एक बार भी उन्होंने हमें देख लिया, तो वे हमारा सर्वनाशकिये बिना न छोड़ेंगे।.... एक खून दूसरे खूनके लिये मजबूर कर देता है, समझे?....पीछेकी चट्टानोंमें हमें रात भर शरण लेनी चाहिये। फिर सवेरा होनेपर देखा जायगा, कि हमें क्या करना चाहिये।"

यह स्पष्ट और पक्की सलाह थी। इसमें जोशीलापन और उभाड़नेकी बात न थी। जोशीली और सीधी सादी होनेपर भी यह एक युद्ध-घोषणा थी, जो एक ऐसे आदमीकी ओरसे हुई थी, जो कि बहुत ही विचारशील और हृदयका अत्यन्त दृढ़ था। जिसको अपने मन्सूबेसे डिगाना टेढ़ी खीर थी। जब मैंने यह देखा, तो मैं अपने ख्यालको छोड़ दिलसे उसका अनुयायी बना। मेरा स्वभाव है, चतुर और शान्त मस्तिष्कका अनुसरण करना। मैंने अपने हृदयमें दृढ़ संकल्प कर लिया कि चाहे कुछ भी हो इस युद्धमें उस दिमागके पीछे-पीछे मैं अन्तिम समय तक लड़ूगा। चाहे जहाँ भी वह भेजेगा, मैं जानेके लिये तय्यार रहूँगा।

अब हम अपने मुकामको वहाँसे तोड़कर, थोड़ी दूर पीछे हट दो चट्टानोंके दर्मियानमें रक्खा। यद्यपि मार्ग वही था जिससे हम आये थे, और मारे भयके मोमबत्ती भी हम जला न सकते थे, किन्तु सौभाग्यसे हमें वहाँ जानेमें कोई चोट-फोट न आई। यह नई जगह सुरक्षित थी। यहाँपर कम्बल बिछानेके लिये भी हमें स्थान मिल गया। हरिके पैरमें दर्द था, और उसका जल्दी अच्छा हो जाना भी हमको अभीष्ट था, अतः अब उसकी चिकित्सा शुरू हुई। मैंने थोड़ी स्टोव जलानेकी स्प्रिट निकाली और उसीसे पैरको पहिले धीरे-धीरे फिर अच्छी तरह मलना शुरू किया। घण्टोंकी मालिशके बाद जब उसमें छूनेसे दर्द न जान पड़ता था, तब हरिके मोजेके साथ अपने भी दोनों मोजोंको पहिनाकर कपड़ेसे उसे कसकर बाँध दिया।

हरिने दूसरे दिन कहा, कि यदि यह चिकित्सा न हुई होती, तो वह दूसरे ही दिन टहलने लायक न हो गये होते।

कुछ देर तक तो इसी काममें रहे, उसके बाद भी नींदका आना कठिन हो गया। हम धीरे-धीरे बातचीत करने लगे। हरिने बताया, कि उनके दिलमें क्या-क्या ख्याल आ रहा है।

हरि—"वह सवेरे यहाँसे चले जायँगे। बहुत सम्भव है, यह ज्वारकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह किसी तरह भी गुफाके अन्धकारकी ओर कदम न रक्खेंगे। जिस बोटको तुमने माधव! वहाँ खड़ा देखा था, निस्सन्देह वह उनका छोटा अगिनबोट था। तुमको याद होगा, उनके जहाजपर एक ऐसी नाव थी।"

मैं—"हाँ, मैंने देखा था।"

हरि—"और जब वह चले जायँ, तो हम खुशीसे बँगलेपर चल सकते हैं। अब इसकी सम्भावना नहीं है, कि वह फिर लौटकर आयेंगे। उनका मनोरथ पूर्ण हो गया, अब वह किसी प्रकार निकल भागना ही पसन्द करेंगे।"

मैंने उत्सुकतासे कहा—"लेकिन क्या था, जिसे वह चाहते थे? और वह निधि क्या थी, जिसकी बात डेलिंग करता था?"

हरि थोड़ी देर चुप रहे फिर बोले—"अच्छा, मेरे दिलमें एक ख्याल आ रहा है, किन्तु जब तक कुछ और न मालूम हो जाय, मैं उसे कहना नहीं चाहता। वह स्वयं भी उस विषयमें निश्चित न थे। तुमने उन्हें हताश होनेकी आशंका करते हुए भी सुना था? किन्तु यदि एक बार मैं बँगलाको अच्छी प्रकार देख सका, तो इसके बारेमें दृढ़ता-पूर्वक कह सकूँगा।"

मेरे दिमागमें भी एक कल्पना थी, जो शायद कल्पना नहीं किन्तु उससे कुछ अधिक—कुछ निश्चय-सा था, किन्तु जब मैंने देखा, कि उन्होंने बात इस तरह टाल दी, तो मैंने भी अपने ख्यालको दिल ही-में रख छोड़ा। मोहन एक कदम आगे बढ़ा और बोला—

"उनके ख्यालमें वह कोई अच्छी चीज थी, अन्यथा वह हत्या करनेपर उतारू न होते।"

हरि—"हाँ, किन्तु यह भी तुम्हें याद रखना चाहिये, कि डेलिंग जैसा आदमी एक मनुष्यके प्राणको वैसा ही नहीं समझता, जैसा कि हम समझते हैं। क्योंकि वह वैज्ञानिक है, और वैज्ञानिकोंके कितने अपने सिद्धान्त हैं, जिन्हें सुनकर साधारण आदमी घबरा उठेंगे। दूसरे वह स्वार्थी था, जानते हो न 'अर्थी दोषं न पश्यति'।"

मैं—"किन्तु बूढ़े भगेलूको मारकर तो उसने आफत मोल ले ली, यदि इसका पता लगा, तो अवश्य गिरफ्तार होकर दण्डित होना होगा?"

हरि—"हाँ, तब भी उसे अपनी करनीपर असन्तोष नहीं हुआ। इसका एकमात्र साक्षी कप्तान है, दूसरे किसीकी उपस्थितिका उसे गुमान तक नहीं है। और कप्तानके लिये तुम्हें निश्चय है, कि उसे शपथ उठाते देरी न लगेगी। वह यह भी कह सकते हैं, कि धोखेसे हो गया। या इससे भी एक कदम आगे—उन्होंने आत्मरक्षाके लिये गोली चलाई। तुम जानते हो, भगेलूके पास एक रिवाल्वर था, और वह अवश्य अपने स्वामीकी सम्पत्तिके लिये जान तक दे दिये होता। निस्सन्देह उस सच्चे आदमीने इसी स्वामि-भक्तिमें अपने प्राण अर्पण किये। गिरफ्तारीके लिये तुम्हारी बात तक भी माधव! अच्छी तरह नहीं सुनी जा सकती है। समझे?"

अब मैंने देखा और अनुभव किया, कि बात उतनी आसान न थी, जैसी कि मैंने ख्याल की थी। अब मैंने उनकी बातचीतका एक दूसरा अंश लिया—

"उसका इससे क्या अभिप्राय था, जब कि वह कह रहा था, यदि एक सप्ताह और चला जाता, तो फिर बात असम्भव हो जाती; फिर अवसर सदाके लिये हाथसे निकल जाता।"

हरि—"इसके विषयमें मैं कुछ नहीं कह सकता। मैं इसपर विचार कर रहा था, किन्तु मुझे कुछ भी नहीं समझ पड़ता। शायद इसका पता आगे चलकर लगे।"

इस तरह हम इस विषयपर उलट-पलटकर कई तरहसे वार्तालाप करते रहे। आखिरकार प्रकृतिने मजबूर किया। निद्रा भगवतीकी पधरावनी हुई। मोहन सबसे पहिले चरणोंमें झुका। जब मैंने उसकी ओर देखा, तो उसका शिर कम्बलपर पड़ा हुआ था। हमने निद्राभंग होनेके भयसे अब बात करनी छोड़ दी। हरिका पैर अब अच्छा था। जरा ही देरमें उन्होंने भी आत्म-समर्पण किया। पहिले मैंने अपने इरादोंको दृढ़ रखा, मैं नहीं झुकना चाहता था। किन्तु अन्तमें मुझे भी परास्त होना पड़ा। यह खयाल था कि सबेरे इनसे पूर्व ही मैं जाग उठूँगा।

धीरे-धीरे निद्राकी मोहनी गोदका प्रभाव मेरे ऊपर पड़ने लगा। पहिले पलकोंने अपना काम बन्द किया, फिर आँखोंके भीतरकी ओर पर्दा पड़ने लगा, अभी यह गाढ़ा न हो पाया था, कि मुझे स्मरण है, मैंने कुछ सुना। क्या सुना यह अस्पष्ट था। किन्तु सबेरे उठनेके बाद भी मुझे इसका स्मरण बना रहा। यह कोई आवाज थी, जो गुप्तसमुद्र-की ओरसे आई। किनारेपर कुछ ऊँचे पानीकी थपथपाहट-सी जान पड़ी, किन्तु इससे मेरी निद्रामें विघ्न नहीं हुआ। मैंने भी, हाँ मैंने एक लम्बी ध्वनि सुनी थी। इसके बाद मैं गाढ़ निद्रामें पड़ गया।

जब मेरी नींद टूटी, तो मैंने अनुभव किया, कोई चीज मेरे शरीरमें लग गई है, यह चीज हरिका हाथ था। हरिने कहा कि मुझे तुम्हें जगानेमें कुछ दिक्कत पड़ी है, तुम खूब सो गये थे। किन्तु मुझे मालूम हुआ, कि मैं पहिली ही बारके हाथ लगानेमें जग गया हूँ। अब दिनका उजाला खूब फैल गया था। हरि पेटके बल पड़े चट्टानोंके बीचसे दूसरी ओर कुछ देख रहे थे।

हरि—"हल्ला मत करो, और अँगुली भी देखो न दीख पड़ने पावे। बिना अपने आपको दिखाये, देखना हो तो देखो।"

मैं अब बिल्कुल चुस्त हो गया था। मोहन अब भी खर्राटे भर रहा था। एक बार उसकी ओर देखकर मुझे मुस्कुराहट आ गई। फिर मैं सरककर चट्टानके दूसरे सिरेकी आड़में चला गया। यहाँसे मुझे देखनेका अच्छा अवसर था। मेरे सन्मुख सारा गुप्तसमुद्र और बड़ी गुफावाला उसका मुहाना अच्छी तरह दिखाई पड़ रहा था।

उस नीरवतामें मेरी आँखोंके सामने सभी चीजें जीवित मालूम होती थीं। मैंने पहिले बँगलेकी ओर देखा। थोड़ी देरमें उसमेंसे घना धुआँ निकलता दिखाई पड़ा। फिर घाटसे एक नाव खुली, और उसका मुँह सीधा मुहानेकी ओर था। उसपर दो आदमी बैठे थे। एक छोटा और दुबला, दूसरा मोटा-ताजा। नावमें दाँड़-पतवार कुछ नहीं था। समुद्रमें और कितनी चीजें जगह-जगह तैर रही थीं, परन्तु मालूम होता था, वह उनका कुछ ध्यान न करते थे। उन्होंने सीधा मुहानेका रास्ता लिया जो अब ज्वारसे भर गया था। उन्होंने एक बार भी फिरकर पीछेकी ओर नहीं देखा।

अब वहाँ फैलते हुए धुएँके नीचे वह बँगला था और वही नीला गुप्तसमुद्र जिसपर कुछ चीजें तैर रही थीं।

तब मैंने देखा, दृश्यमें कुछ नवीनता है, कुछ भारी आशंका है। मैं फिर खयाल करके देखने लगा। कोई चीज जैसे गुम हो गई है। क्या नहीं है? और तब एक बड़े धक्केकी सूरतमें बड़ी घबराहटमें सत्य दिखलाई पड़ा। इसके दो ही सेकण्ड बाद हरिने उद्विग्न स्वरमें कहा—

"पुष्पक खतम!"

हाँ, यही चीज थी, जिससे दृश्यमें भयानक दिखाई पड़ती थी। सुन्दर जहाज लुप्त हो गया। पहिले यह बात अविश्वासास्पद जान पड़ी, किन्तु थोड़ी देर बाद हम आँखोंको धोखा दे न सकते थे। अब

'पुष्पक' वहाँ लंगर डाले हुए न दिखाई पड़ता था। वह सर्वदाके लिये विलीन हो गया।

"उसे भी वह साथ लेते गये।" मैंने घबराहटके साथ चिल्लाकर कहा। इस चिल्लाहटपर मोहनकी भी नींद टूट गयी और वह उठा बैठा, किन्तु हमने इसका खयाल नहीं किया था। इसी समय हरिका पीला और उद्विग्नतापूर्ण मुँह मेरी ओर घूमा।

हरि—"यह असम्भव है। उसको उन्होंने डुबा दिया।"

मोहन भी अब मेरी बगलमें आ गया। हरिने और स्पष्ट करते हुए कहा—"वह वहाँ रात था, हम सभोंने उसे देखा था; किन्तु उसके बाहर जानेको हमने बिल्कुल नहीं देखा। कप्तान खूब जानता है, कि कैसे उसके साथ चाल चली जा सकती है, धीरे-धीरे उसमें फिर पानी भरने लगा होगा, और रातमें किसी वक्त आखिरको वह डूब गया।"

मैं चिल्ला उठा—"हाँ, मैंने रातको कोई आवाज सुनी थी। पहिले एक चमकनेकी आवाज सुनाई दी, फिर बड़ी-बड़ी लहरोंकी किनारेपर थपथपाहट। किन्तु उस समय मेरे मस्तिष्कपर निद्राका आधा अधिकार जम चुका था।"

हरि—"वह आवाज पुष्पकके डूबनेकी थी। आः राक्षसो!"

मोहन और मैं एक दूसरेकी ओर घबराहटसे ताकने लगे। अवस्था भयानक थी। यकायक हरि चिल्ला उठे—

"हाय! उन्होंने बँगलेमें भी आग लगा दी।"

मुझे इसको मालूम करते जरा भी देर न लगी। उतना घना धुआँ भगेलूके चूल्हेका नहीं हो सकता था। और यह चिम्नीसे भी तो नहीं निकल रहा था। वास्तवमें यह उस छोटे घरकी एक खिड़कीसे निकल रहा था। हरिने एक ठंडी साँस ली फिर कहा—

"लेकिन मैं दौड़नेमें असमर्थ हूँ। देखो भाइयो! तुम्हीं जाकर इसे करो। यह रिवाल्वर उठा लो, और चल दो। यदि वह नरपिशाच लौटकर आवें, देखते मात्र शूट कर देना। कैसे भी बँगला बचाओ।

यदि अब भी अन्दर जाया जा सकता हो, तो लकड़ी-पत्थर जो हाथ आवे, पहिले उससे आगको ढाँक दो। तेलके कनस्तरोंको जहाँ तक जल्दी हो सके, दूर रख आना। जितनी भी रसद बचाते बने बचाना और उसे अलग करके रख-रख आना। वह हमारे लिये जीवनाधार है। उनके बिना हम मरे दाखिल हैं। सावधानीके साथ जल्दी जाओ जल्दी दौड़ो। मैं भी जितना जल्दी हो सकता है आ रहा हूँ।

हमें अब दूसरी बार कहनेकी आवश्यकता न थी। हम साँस लेनेके लिये भी भूल गये। जब वहाँ से हम दौड़ने लगे तो हमने उन्हें, कड़-खती आवाजमें कहते सुना—

"हाँ, राक्षसो, नरपिशाचो!"

जो पर पीर न जानि है
कह रहीम यह देह

षोडश अध्याय

हमारा घनिष्ठ संघ

हम वहाँसे जान छोड़कर दौड़े। रास्तेमें हम साँस भी लेना भूल गये। जल्दी पहुँचने और आगे भयंकर दृश्यके खयालने हमें उस समय हमारेमें पागलोंकी-सी ताकत भर दी थी। कदम-कदमपर, उत्सुकताके साथ हमारे दौड़नेकी गति भी बढ़ती जाती थी। हमनें समझ लिया था, कि यही जल्दीका अन्तिम अवसर है। मेरे साथ-साथ बेचारा मोहन भी जी तोड़कर दौड़ा चला आ रहा था। वह मुझसे आगे चला जाता, किन्तु नौ दिनके फलाहारने उसकी ताकत आधी कर दी थी। जिस समय हम वहाँ पहुँच गये, तो उस समय हमारे सामने काम था, और कुछ नहीं।

हमने वहाँ पहुँचकर देखा कि अभी बँगला लपटमें नहीं है। खिड़कीसे धुआँ अधिक परिमाणमें निकल रहा था। आग हमें दिखलाई नहीं देती थी, किन्तु दिखालई देता था कि अधिक धुआँ उसी कमरेसे निकल रहा है, जिसमें रात दोनों शराब पीते थे। थोड़ा-थोड़ा धुआँ दूसरे कमरेकी खिड़की और बड़े द्वारसे भी निकल रहा था। जब मैं बाहरकी ओर देख रहा था, मोहन बराण्डेमें घुस आया। वहाँ उस धुएँका इतना अँधेरा था, कि किसी चीजका देखना असम्भव था। ढूँढ़ते हुए यकायक दोनोंने एक साथ ही अँधेरेमें हिलती, जगती और धीमी हो जाती एक छोटी-सी लौ देखी। फर्शपर पड़े हुए किसी प्रकारके ढेरसे यह निकलनेकी कोशिश कर रही थी। हमने समझ लिया, कि यहाँ असली खतरा है। पीछे हमने देखा वहाँ टुकड़े किये हुए कागजों, पुस्तकों, और बिछौनेके कपड़ोंको जमा करके उनपर मिट्टीका तेल छिड़का हुआ है।

हमने अपना काम बाकायदा करना आरम्भ किया। पहिले दूसरे कमरेसे बहुत-सा कपड़ा ढो-ढोकर हमने उस ढेरको चारों ओरसे खूब मूँद दिया, जिसमें ताजी हवा इस छोटेसे भयंकर शत्रुसे न मिलने पावे। फिर कागजोंको अलग किया, तेलमें भीगे हुए कपड़ोंको दूर किया, एवं क्रमशः स्थानको धूएँसे खाली कर दिया। तब हमने दम लिया।

मोहन—"जो दश ही मिनट और देर हो जाती, तो काम हाथसे बेहाथ था। अभी ही आग बढ़ने लगी थी। उन लोगोंने बहुत-सा कागज डालकर आग लगानेमें भूल की थी।"

मैं—"उनको यह क्या मालूम था कि यहाँ हमलोग आ रहे हैं। जो आकर हमने अलग-अलग न किया होता तो फिर यह आग बड़े जोरकी हो जाती।"......"ओ हो! यह देखो।"

यहाँ कोई चीज थी जिसे हम दोनोंमेंसे किसीने नहीं देखा था। यह छोटे मेजके बिल्कुल नीचे था। यह विचित्र वस्तु बहुत ही साफ, वर्गाकार छिद्र था, जो दो तख्तोंमें कटा हुआ और कम्बलसे ढाँका हुआ था।

मोहनने गम्भीरतापूर्वक कहा—"यह एक छिद्र-सा है। हाँ, सचमुच छिद्र। वह देखो काठका टुकड़ा, मालूम होता है, इसका ढक्कन है। यह उसपर ठीक आ जाता है।"

तख्ता अब कमरेमें दीवारके सहारे खड़ा था। मैंने आगे बढ़कर मेजको घुमा दिया, कि नीचे देखूँ। वहाँ कोई भय करनेकी चीज न थी, वह एक खाली छिद्र था।

मैं—"बूढ़े भगेलूकी चारपाई यहाँ खड़ी रहती थी, और कम्बल भी था। मैं समझता हूँ, चारपाई जान-बूझकर यहाँ रक्खी रहती थी। मुझे इसका बड़ा ख्याल होता था, कि क्यों यहाँ बीचोबीचमें चारपाई बिछी है।"

मोहन—"हूँ, यही सन्देह डाकुओंके दिलमें भी आया होगा। फिर उन्होंने खोजना आरम्भ किया, किन्तु बूढ़ा भगेलू उनके रास्तेका काँटा था, और मारा गया। लेकिन क्या चीज थी वह यहाँ गड़ी हुई ?"

सचमुच। किन्तु मैं नहीं बता सकता था। और अपने कच्चे विचारको अभी सामने रखनेमें मैं हिचकता था, कि शायद वह मूर्खता-पूर्ण हो।

मैं—"अच्छा है, चलो अब हरिके पास चलें। उन्हें हमारी सहायता अपेक्षित होगी। और जब वह यहाँ आकर सब चीज देखेंगे, तो मोहन सबकी कुँजीका मिलना दो मिनटका काम होगा।"

अब हम हरिकी ओर चले, जो किनारे-किनारे आ रहे थे और अभी आधी मील दूर थे। जब सब कथा कहते-कहते समाप्त हुई तो हम बँगलेपर पहुँच गये थे। अन्दर आनेपर वह एक कुर्सीपर बैठ गये और एक बार नजर दौड़ाकर उन्होंने सभी चीज देखीं।

हरि—"ओफ! उन्होंने सचमुच सभी चीजें बर्बाद करनी चाही थीं। उन्होंने बूढ़ेको मार डाला, जहाजको डुबा दिया और मकानके जलानेके साथ सारे कागज-पत्रको भी नष्ट कर देना चाहा था। एक-एक-को खोज-खोजकर चौपट करनेका उनका इरादा था।

हरि इस समय अपनी प्रकृतिके विरुद्ध बड़े कड़वे हो गये थे। उनकी इस सारी बातमें उस कड़वाहटकी मात्रा पूरी दीख पड़ रही थी। जैसे ही उन्होंने अपनी बात समाप्त की; मैंने उनकी दृष्टिको देखा वह ताखा था। उससे अब असहायपन, घबराहट, क्रोध एक साथ मि झलक रहे थे।"

मोहन—"यह सब समाप्त हो चुका होता, जो आपने हमें जल्दी न भेजा होता, किन्तु हमने सब ठीक कर लिया।"

हरिके होठोंपर एक टेढ़ी-सी मुस्कुराहट थी—"जो कुछ भी हुआ सो हुआ, अब हमें देखना है, कि उन्होंने क्या हमारे वास्ते छोड़ा है। उन्होंने इन सारी ही पुस्तकोंको जलाकर खाककर देनेकी कोशिश की

थी। मैं समझता हूँ, तब तक मैं इनको ठीकसे लगाता हूँ, जब तक कि माधव ! तुम जलपान तय्यार करते हो। क्यों ?"

मैंने और मोहनने एक साथ हाँ कहा। तब मैं मोहनको रसोई घर-की ओर ले गया, कि कुछ गर्म-गर्म नाश्ता तय्यार किया जाय। पन्ने-पन्ने जोड़नेसे मुझे यह अच्छा भी मालूम हुआ। हमारा मन उनमें लगा था। यद्यपि बीच-बीचमें उन नृशंसोंके लौट आनेका ख्याल आ जाता था हमें तब तक हरिका स्मरण न आया, जब तक कि खाना तय्यार हो जानेपर उनके बुलानेकी जरूरत न हुई। मैं पुकारनेके बदले उन्हें लिवाने वहाँ चला गया, जहाँकि मैं उन्हें कुर्सीपर छोड़ आया था देखा, उनके सामने छोटी मेजपर किसी हस्त-लिखित पुस्तकके अलग-अलग किये पन्ने रखे हुए हैं। अपना काम समाप्तकर अब वह जँगले की ओर देख रहे थे।

मैं—"जलपान परोसा तैय्यार है, भाई साहेब !"

हरि—"धन्यवाद, बड़ी खुशखबरी।"

वह मेरे साथ वहाँसे रसोई-घरमें आये।

मोहन—"मैंने जब पहिले इस घरको देखा तो, मुझे मालूम हुआ मैं जैसे दार्जिलिंगमें मामाके घरमें हूँ। आह ! कैसा सुन्दर ख्याल। धन्य जन्मभूमि !"

जन्मभूमिके नामने ही मेरे हृदयमें आनन्दकी धारा प्रवाहित कर दी, किन्तु उसी समय मेरे चित्तमें एक बातका ध्यान आया और मैंने घाटकी ओर देखकर कहा—

"और डोंगी कहाँ गयी ?"

हरि इसपर पहिले ही विचार कर चुके थे—"वह भी समाप्त, सम्भवतः डुबा दी गई ?"

मैं—"डुबा दी गई ! तब तो उसके बिना हमलोग सर्वथा निस्सहाय हैं। अब इस जेलसे निकलना असम्भव है।"

हरि (शान्तिपूर्वक)—"हाँ, इस समय।"

यह निराशाकी शान्ति न थी यद्यपि पहिले-पहल यह वैसी ही जान पड़ी।

हरि—"इस उपायसे नहीं, हम किसी दूसरे उपायके लिये सलाह करेंगे······जरासी और भाजी मोहन! इस समय हमारे सामने यह काम है। इसे समाप्तकर फिर तब दूसरेपर पैर रक्खा जायगा।"

इस प्रकार और वेदनाओंकी भाँति यह भी चली गई। हमलोगोंने नाश्तेकी मौजमें सबको बहा दिया। फिर मुझे ख्याल आया। और ख्यालोंकी भाँति हरिको भगेलूके नाश्ता बनानेकी विधिका भी खयाल बिना आये हुए नहीं होगा। खासकर जब कि जहाजकी रसदकी भी अब आशा नहीं है। शायद उन्हें इसका भी विचार आया होगा, कि अब हमारे पास कितने दिनोंके लिये रसद है।

"भोजन समाप्तिके बाद एक बार उन्होंने भोजन भण्डार तथा और सभी चीजोंको देखभाल की। फिर बड़ी शान्तिपूर्वक कामकी बात-के तरह सीधे-साधे-तौरपर कहा—

'हमारी अवस्था यह है। हमारे पास कुछ सप्ताहोंके लिये रसद रह गई है, सो भी सावधानीपूर्वक खर्चनेपर। उसके बाद यदि हम यहाँ ठहरे तो हमारे लिये हैं उपवास और मृत्यु। पहिले हमें 'मौडमूलर'की आशा भी थी, किन्तु अब वह भी समूल उच्छिन्न है। गुप्तसमुद्र और उसके रहस्यको पा लेनेके बाद अब वह लुटेरे बहुत जल्द यहाँसे चले जायँगे। अब उधरकी प्रत्याशाकी डोर ही कट गई।

"और रहा रहस्यके विषयमें, सो वह यहाँ था, सब चोरी हो गया। निस्सन्देह इस भयानक पहाड़ीमें किसी प्रकारका खजाना था, जिसे महाराज जगदीशपुरने बीस वर्ष पहिले पता लगाकर पा भी लिया था। उसे उन्होंने फर्शके उस छिद्रमें छिपा दिया और फिर उन्होंने अपने प्राण गँवाये। किस तरह, यह तुम्हें मालूम है। पीछे दूसरा भूगर्भशास्त्री आया और वह भी उसी परिणामपर पहुँचा। उसके लिये महाराजकी

भारी सावधानता, और बूढ़े भगेलूकी जाँनिसारी बच्चोंके खयाल थे। कप्तान अर्जुन सिंहकी लॉगबुकके पढ़नेके बाद उसने सम्भवतः ताड़ लिया, कि उसे किसकी खोज जरूरी है, और उसे उसने फर्शके छेदमें पा लिया। इसी छेदमें उसे महाराजका प्राइवेट लेख मिला, जिसे मैं अभी पढ़ रहा था। असली चीजके पा जानेपर उसने लेखको अपने खयालमें नष्ट कर दिया। यदि उसे हमारी विद्यमानताका पता भी होता तो भी वह इससे अधिक चतुराई नहीं कर सकता था।"

मैंने और मोहनने हैरान हो एक-दूसरेके मुँहकी ओर ताका। फिर मैंने पूछा—

"किन्तु क्या था वह खजाना, और क्या था उसका मूल्य ?"

हरि (धीरे से)—"वह क्या वस्तु थी, यह स्पष्ट किसी जगह भी नहीं लिखा मिला। वस्तुका नाम यहाँ नहीं लिखा है। किन्तु यह पता लगा है, कि महाराजकी दृष्टिमें वह मूल्यवान् थी। उनका विश्वास था, कि उन्हें एक खजाना मिला है, जिसका मूल्य कमसे कम दो अरब रुपया है।"

यहाँ अब सारे चुप थे।

मोहन—"ओ हो! ऐसा !!"

हरि—"और यह उस बातको भी स्पष्ट कर देता है, जिसे माधवने रात सुनी। मुझे मालूम है डेलिंग इस खजानेके पीछे पड़ा था। उसने किसी तरह खजानोंके टापूके विषयमें एक पुरानी कथा सुन पाई। वह उसके अन्वेषणके लिये तैयार हो गया। उसके लिये एक आदमीके जीवनके कुछ वर्ष कुछ महत्त्व न रखते थे।"

दो अरब रुपया !

मैं—"किन्तु वह सम्पत्ति भारतवर्ष की थी, क्योंकि एक भारतीयने उसे पहिले पाया।"

हरि—"मुझे इसमें सन्देह है। यह पहाड़ियाँ ब्राजीलकी हैं, यद्यपि

उसने इनसे कभी कोई काम न लिया। यदि तुम दोनों मिनट दो मिनट ठहरो, तो मैं सुनाता हूँ, कि स्वयं महाराजकी इस विषयमें क्या राय थी।"

उन्होंने हमें मेजके पास छोड़ दिया, और थोड़ी देर बाद कुछ कागजोंको लिये हुए आये—

"यह आश्चर्य है कि, वह महाराजके कागजोंको अच्छी तरह नष्ट न कर सके, इसका कारण भी था। उन्हें विश्वास न था कोई दूसरा भी यहाँ आग बुझानेवाला पहुँच जायगा। दियासलाईकी एक तीली ही, इनको सर्वदाके लिये अपठनीय बनानेमें समर्थ थी। किन्तु कितनी ही बार बृहस्पतिके कान काटनेवाले भी धोखा खा जाते हैं। जैसे भी हो, यह देखो वह हमारे लिये मौजूद है। यह एक प्रकारसे महाराजका वसीयतनामा है। इससे यह भी पता लगता है, कि वह केवल एक सज्जन भारतीय ही न थे, बल्कि उनकी दृष्टि और हृदय बहुत ऊँचे थे। वस्तुतः जगदीशपुरके लिये यह स्वाभाविक था।"

लेख-पत्र चार टुकड़ोंमें फाड़ा हुआ था, हरिने उन्हें ठीकसे मिलाकर रख दिया। फिर इस भूमिकाके साथ—"महाराजने इसे एक सांकेतिक लिपिमें लिखा था, जिसका अभिप्राय यही हो सकता है, कि कोई दूसरा पोतारोही न पढ़ ले। किन्तु इसकी भाषा शुद्ध सुन्दर हिन्दी है। मुझे महाराजके नाम और दो और नामोंको पता लगाते ही इस सांकेतिक लिपिका जानना भी आसान हो गया। अच्छा सुनो—

इस राशिका मूल्य जो मेरी समझमें जँचता है, सम्भव है, उसे कोई मुबालिगा समझे हो, किन्तु मैं ऐसा नहीं समझता। मुझे भूगर्भ-शास्त्रका पर्याप्त ज्ञान है। उसपर भी मुझे इस विषयका पूरा अनुभव भी है। मनुष्य निश्चय नहीं कह सकता, कि भविष्यके गर्भमें क्या है। अतः मैं यहाँपर अपने उत्तराधिकारियोंके लिये, जिनके हाथमें कि यह राशि पहुँचेगी, अपनी आकांक्षायें लिखता हूँ।

यह द्वीप ब्राजील प्रजातंत्रके अधिकारमें है, अतः इस प्रकारकी निधिपर उसका दावा अयुक्त नहीं कहा जा सकता। कितना हिस्सा किसका होता है, इसपर मैं बहस करना नहीं चाहता, किन्तु यह निश्चय है, कि पता लगानेवालेको इसका एक भारी हिस्सा मिलेगा। और मैं इसे खूब साफ-साफ लिखना चाहता हूँ, कि इससे मेरे वंशको कुछ भी लाभ न उठाना चाहिये। हमारी आवश्यकताओंके लिये पर्याप्त धन-सम्पत्ति हमारे पास मौजूद है। इसलिये मैं अपने उत्तराधिकारियोंसे चाहता हूँ, कि इसका विनियोग सार्वजनिक हित तथा विद्याप्रचारके कामोंमें होना चाहिये।

आजसे सात सौ वर्ष पूर्व तक नालन्दाका विद्यालय अपने अस्तित्वको कायम रक्खे हुए था, उसमें बहुत दूर-दूरके विद्यार्थी पढ़नेके लिये आते थे। हजारों वर्ष तक अनवरत विद्यादान करके, अन्तमें मानवी क्रूर हाथों तथा हमारी उपेक्षासे वह विद्यापीठ नष्ट हो गया। बालपनमें जब मैंने चीनी भिक्षु ह्यूनसंगकी भारत-यात्रा पढ़ी थी। जब मैंने उनके मुँहसे नालन्दाके वैभव और यशकी भूरि-भूरि स्तुति होते देखी थी, तभीसे मेरे चित्तमें यह बात बड़े वेगसे उठने लगी—क्या भारतवर्षके गौरव, बिहारके मुकुटमणि और आत्मस्वरूप उस नालन्दा विद्यालयका पुनरुद्धार करना हमारे प्रधान कर्त्तव्योंमें नहीं है! विद्या समाप्तिके बाद मैं कुछ राज्यके कार्य और कुछ अपने प्रिय विषय भूगर्भशास्त्रके अध्ययनमें निरत रहने लगा, किन्तु तो भी वह बचपनके हार्दिक भाव विस्मृत न हुए थे। मेरे दिलमें पक्का इरादा हो गया था, कि अपनी रियासतसे कुछ सम्पत्ति विद्यालयके लिये अलग कर दूँ। मैं यह जानता था, कि मेरे उत्तराधिकारियोंमेंसे किसीको यह रुचिकर न होती। खैर, मेरे संकल्पका एक दूसरी ही रीतिसे पूरा होना था। अस्तु, संक्षिप्तमें मेरी यह आकांक्षा है, कि वह सम्पूर्ण निधि जो मेरे हिस्सेमें आवे, वह नालन्दाको मिलनी चाहिये।

हरि—"यह थे, महाराज जगदीशपुर, जिसे बूढ़ा भगेलू इष्टदेव-

की तरह पूजता था, और अन्तमें उन्हींकी सेवामें अपने आपको न्योछावर कर गया। तुम उसे कैसा समझते थे ?"

मैं—"भगेलू बहुत अच्छा था। आः, बेचारा भगेलू !"

हरिने उन टुकड़ोंको इकट्ठा करके खूब सावधानीसे मोड़कर रख लिया और कहा—

"यह पवित्र वसीयत है मेरे भाइयो! और यह मेरे लिये भी पवित्र है। हम अब इस कारागारसे मुक्त होने जा रहे हैं अथवा, इसी प्रयत्नमें मरने। यदि बचकर निकल सके, तो मैं सारी शक्ति लगाकर उन लुटेरोंसे उस निधिको फेर लेने और दुष्टोंको उनके अपराधका दण्ड दिलानेमें लगाऊँगा।"

मैं—"और हम आपके साथ हैं, क्यों मोहन ?"

मोहन—"हाँ, चाहे आग हो चाहे पानी।" हमने एक दूसरेके हाथ पकड़े। मानो हम आपसमें प्रतिज्ञाबद्ध हुए; यद्यपि हममेंसे किसी-ने शब्दसे इस बातको न प्रकट किया।

हरि उठ खड़े हुए और बोले—

"अबसे एक घंटा पूर्व मुझे अवस्था शोचनीय मालूम होती थी, किन्तु अब मुझे अच्छा उपाय सूझा है, आओ।"

हमलोग बड़ी उत्सुकतासे उनके पीछे बँगलेसे बाहर और फिर उसके पीछेकी ओर गये। वहाँ टीनके नीचे एक लम्बा-चौड़ा लकड़ियों-का टाल लगा हुआ था। मोहनने आश्चर्यसे कहा—"क्यों, यहाँ तो बहुत लकड़ी है।"

हरिने उत्तर दिया—"हाँ, यह उन लकड़ियोंमेंसे बची हैं, जिन्हें महाराज 'मौन्तेवायदो'से इस घरके बनानेके लिये बीस वर्ष पूर्व लाये थे। सुरक्षित दशामें रहनेसे यह अब भी वैसी ही दृढ़ और कार्योपयोगी है जैसी कि उस समय थीं, बल्कि उससे भी अच्छी हैं। अब हमें इनसे काम लेना है।"

मैं बोल उठा—"नाव बनाना ?"

हरि—"नहीं, उसके लिये हफ्तोंकी आवश्यकता है, किन्तु हमारे पास उतना समय नहीं है।"

मोहन—"तो बेड़ा।"

हरि—"हाँ, इसीकी जरूरत है, और उसका नाम क्या होगा, जानते हो ? 'शुभाशा'।"

सप्तदश अध्याय

शुभाशाका निर्माण

आशा—हाँ, यह आशा है, जो महान् परिवर्त्तन कर देती है। उस दिन उसने हमारे भीतर कैसा परिवर्त्तन उत्पन्न कर दिया था। हम उन भयानक घटनाओं, उन लोमहर्षण यातनाओंको नहीं भूल सकते, जिन्हें अब तक हम अनुभव कर चुके थे। उसके आगे भी, हमारे नवीन प्रोग्रामके रास्तेमें कितनी विघ्न-बाधाएँ थीं, कितने भयानक सन्देह थे। क्या अनन्त जलराशिसे परिपूर्ण, असंख्य विराट तरंग-मालाओंसे उद्वेलित, अतल, विस्तृत, सागर, इन मनहूस चट्टानोंसे कम है? किन्तु उन सबकी कुछ पर्वा नकर हम अपने काममें भिड़ गये। हमारे सामने जलधिपार, हिमालय और विन्ध्याचलके मध्यकी सस्य-श्यामल भूमि थी। हमारे सामने जान्हवी और स्वर्णभद्राका मञ्जु मनोहर कल-कलनाद था। हमारे सन्मुख स्नेह सौहार्दपूर्ण स्वजन बन्धुओंके मुख थे। यह इतना परिवर्त्तन किसने उपस्थित किया क्या? आशाने।

हमने हरिकी सभी बातें सुन ली थीं। अब मोहनको तुरन्त, कार्या-रम्भसे रोक रखना कठिन था। यही स्थान था जहाँ मोहनका 'शोभा'-का अनुभव और ज्ञान बड़े कामका था।

उसने उत्सुकतासे कहा—"सब चीज ठीक है। बेड़ा बनानेका मेरा कुछ अपना भी ख्याल है। मैंने नाव बनानेके विषयमें बहुत-सा सीखा है। किन्तु यहाँ कोई बहुत मजबूत और भारी कड़ी नहीं है, जिसे बीच और अगल-बगलमें आधारके तौरपर लगाया जा सके। अच्छा कोई हर्ज नहीं दो-तीन तख्तोंको नीचे ऊपर रखकर काँटी मार देनेसे काम चल जायगा। फिर हमें एक मस्तूल, पतवार पाल, और बेड़ेके चारों ओर एक कटहरेकी आवश्यकता होगी।"

अभी घरमें कुछ काम करना था। इसलिये मैं तो उधर चला गया। और मोहन लकड़ियोंकी तजबीजमें लगा। उसने कहा भी—

"एक आदमी था, उसने एक बालूके टापूमें अकेले ही एक नाव बनाई...(क्रूसो तो नहीं !)। वह नाव बड़ी थी, और जब सब काम समाप्त हो गया, तो वह इतनी भारी थी, कि वह वहाँसे ढकेलकर पानी तक नहीं ले जा सकता था। किन्तु हम अपने बेड़ेको घाटपर बनावेंगे, और केवल आधारभर पानीसे बाहर बनावेंगे, आधारके तय्यार होते ही उसे पानीमें डाल देंगे, और बाकी काम वहीं होगा।"

यह बड़ा अच्छा खयाल था, सबने ही इसे एक रायसे पसन्द किया। इसके बाद मोहन एक कागज-पेन्सिल लेकर बैठ गया। उसने उसका एक नकशा बना डाला। उसे दिखाते हुए उसने कहा—

"हमें एक ऐसे बेड़ेकी आवश्यकता है, कि जो कुछ खेया भी जा सके। हमारे पास हथियार, लकड़ी और समय मौजूद है। आप थोड़ा इन्तिजार कीजिये, और देखिये।"

हरिने केवल मुस्कुरा दिया। तब आरम्भिक काममें मैं और मोहन दोनों साथ ही लगे। हमने भगेलूके सुरक्षित रखे हुए हथियारों और लकड़ीको घाटपर पहुँचाया। मोहनने इसे हलका और पतला कहा था, इसलिये हमने बरामडेमें बाहर लगी हुई शहतीरोंको निकाला, जो कि मोटी और लम्बी-चौड़ी थीं। अब खूब गर्मागर्मीसे काम शुरू हुआ। तुरन्त ही वह जगह हथौड़ों और आरोंकी आवाजसे गूँजने लगी। उस दिनका काम देखनेसे भी हमें मालूम होने लगा, कि काम जल्दी और खूबीके साथ पार लग जायगा।

मुझे अक्सर ख्याल होता रहा, कि इस विषयपर पद्य लिखूँ; किन्तु उससे गद्य ही लिखना अच्छा मालूम हुआ। इसमें वर्ण मात्राका बन्धन न होनेसे बात पूरी बिना संकोचके लिखी जा सकती थी। कथामें गीत-की भी आवश्यकता है, क्योंकि उसमें जगह-जगह आरों, हथौड़ोंके संगीतके

साथ मेरे मित्रका मृदुहास मिश्रित था। वह कविता वैसी ही ओजस्विनी होती, जैसा कि किसी वीरवाहिनीका रणक्षेत्रमें प्रयाण। यद्यपि मैं उसे नहीं लिख सका, किन्तु वह पद्य, उसका वह मधुर संगीत अब भी मेरे कानोंमें गूँज रहा है। जब कभी मैं उस व्यस्त पूर्वाह्नको देखता हूँ, तो अब भी हथौड़ों और आरोंको सुनता हूँ, साथ ही अपने मित्रकी आवाज भी। और वह सब संगीतसे पूर्ण। यह वह संगीत है, जिसे शब्दोंमें प्रकट नहीं किया जा सकता। और सभीके साथ हरि शान्त और दृढ़ उसी प्रकार चिन्ताशील और प्रसन्न थे। सचमुच हरिका वह नेतृत्व हमारे लिये उन दिनोंमें बड़े ही अहोभाग्यकी वस्तु थी।

मैं न प्रकृत कप्तान था और न प्रकृत बढ़ई। मुझे वहाँ आज्ञाके अनुसार काम करना था; जिसमें घरका काम-काज, रसोई-पानी आदि सभी था; इसलिये समय-समयपर मुझे हथियार रखकर चुपकेसे वहाँसे खिसक जाना पड़ता था। मोहनको इसका तब तक पता न लगता, जब तक कि वह अपनी एक-दो बातका उत्तर न पाता। उस समय वह रुक जाता था और देखने लगता था।

मोहनकी तजवीजने हरिके कुछ संशोधनोंके बाद एक ऐसे बेड़ेका रूप धारण किया जो देखनेमें दो बड़ी कड़ियोंपर एक लम्बा चौड़ा तख्तपोश-सा जान पड़ता था। कड़ियाँ आगेकी ओर कुछ नोकदार और दस हाथ लम्बी थीं। दो तख्तोंको मिलाकर फिर उसने एक पत-वार बनाया और कड़ियोंके किनारोंपर भालेके नोककी आकृतिमें दो तख्ते जोड़कर लगा दिये, जिसमें कि पानी काटनेमें सुभीता हो। वास्तवमें इतनी तय्यारीके बिना हमारा दो सौ मीलका सफर, किसी भी समुद्रमें करना असम्भव था।

मेरा काम यह था कि जहाँ-जहाँ पानी आनेका रास्ता हो, वहाँ-वहाँ तेल और पेन्टको मिलाकर खूब गाढ़ा लगाता जाऊँ। आधार ऊपर तख्तोंका पहिला फर्श था। तब फिर कड़ी देकर दूसरा फर्श तय्यार किया गया था और फिर तीसरा। इस प्रकार हमारे बेड़ेका

ऊपरी फर्श पानीसे काफी ऊपर था। वहाँ पानीका छींटा नहीं पहुँच सकता था। यद्यपि हमारा बेड़ा मजबूत था, किंतु बहुतसे उपयोगी हथियारोंके न होनेसे वह व्यर्थका ओझल और भद्दा हो गया था। राम-राम करके किसी तरह दूसरी रातको वह पानीपर तैरा दिया गया।

मोहनने साँस लेते हुए कहा—"आखिरकार, यह बहुत खराब नहीं है। बस एक दिनमें अब यह बिल्कुल तय्यार हो जायगा। किन्तु अब सब काम इसके ऊपर ही करना होगा।"

हरिने कहा—"हाँ, और बाकी काम अब हल्का भी है। तुमने बहुत जल्दी की। सचमुच, मोहन! मैं नहीं जानता तुम्हारे बिना हमारी क्या दशा होती!"

प्रशंसासूचक बातोंसे प्रसन्न होते हुए मेरे दोस्तने कहा—"हाँ, सचमुच हमारा बहुत-सा काम अब पूरा हो चुका। अच्छा कप्तान! हमलोग इस तरह कब प्रस्थान करने योग्य हो जायँगे?"

हरिने शांति और दृढ़तापूर्वक कहा—"जितना जल्दी हो सके उतना।"

मैंने हरिके चेहरेसे चिन्ताकी झलक आते देखकर पूछा—"आप शायद रसदका ख्याल करते होंगे?"

हरि—"हाँ, थोड़ा-सा। और भी बातें हैं जो शायद हमारे कामकी जल्दी समाप्ति चाहती हैं। आओ आज रातभर काममें लगा रहा जाय। काम पूरा होनेपर तब हम बात करेंगे। इस समय बातका अवसर नहीं है।"

जब हरिकी बात इस प्रकारकी गम्भीरता लिये हुए होती हो, तो उस समय हमारे लिये बस एक ही काम रह जाता था, कि बिना पूछे उनकी इच्छानुसार काम करें। यद्यपि हमलोग बिल्कुल थक गये थे, किन्तु फिर काममें जुट गये। हमारे पास अब भी मोमबत्तियोंका ढेर था। तो भी उनकी रोशनीमें काम करनेमें अड़चन जरूर मालूम होती थी। मैं उस समय सारी उन आवश्यक चीजोंको एकत्रित करने और बाँधने-छाँदनेका काम करता रहा, जिन्हें कि हमें साथ ले चलना

था। कुछ कम्बलोंको खूब अच्छी प्रकार सीकर मैंने एक पाल भी तय्यार किया।

दस बजे रातका समय था। अँधेरा अपने यौवनपर हो चला था। दिनमें सूर्यका प्रकाश एक दम न होनेसे समय कुछ रूखा-सा मालूम होता था। जब मैं अपने बाँधने-बूँधनेके काममें लगा हुआ था, उसी समय हरिने मुझे पुकारा। मैं दौड़ा किनारेपर गया। मैं सारे वक्त बँगलामें काम कर रहा था, इसलिये बाहरकी बात मुझे न मालूम होती थी। मैंने अब देखा कि परिस्थितिमें भारी परिवर्त्तन आ गया है। आकाशमें धुँध-सी छाई हुई है! गुप्तसमुद्रका तल एक पीली रोशनी-से भयंकर चमकके साथ चमक रहा है। पीछेके पहाड़ी शिखर भी उसी प्रकाशसे चमक रहे हैं। इस प्रकाशमें मेरे मित्रोंके चेहरोंकी रग-रग दिखलाई देती है, जिसमें एक प्रकारका आतंक और घबड़ाहट अंकित-सी जान पड़ती है।

मोहनने धीमे स्वरमें कहा—"देखो।"

मैंने दृष्टि उधर फेरी, जिधर मोहन देखनेको कह रहा था। पहाड़ी दीवारके ऊपर आकाश लाल था। कोई चीज वहाँसे कभी लहकती और कभी धीमी-सी होती दीख पड़ती थी; जैसे दूरका कोई जलता भट्ठा हो।

मोहन—"टापूके उस तरफ किसी जहाजमें आग लगी-सी मालूम होती है। देखो वह आगकी लौ दिखलाई दे रही है। शायद वह "मौडमूलर" है, ओह!!"

थोड़ी देरके लिये मैंने भी इसे ठीक समझा। किन्तु झट ही, हरि-की ओर बिना देखे ही सत्यता प्रकट होती-सी जान पड़ी। हरिने उसे शब्दोंमें प्रकाशित किया—

"नहीं, मोहन! यह जहाजकी आग नहीं है। यदि यह आग है, तो ज्वालामुखीकी आग है। वहाँपर, टापूकी दीवारमें ज्वालामुखीने नया मुँह खोला है, और यह उसके भीतरसे निकलती लौ है।"

मोहन—"हाः क्या आप सचमुच समझ रहे हैं ?"

हरि—"सचमुच, इसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं जान पड़ता।"

मैंने उत्सुकतासे कहा—"आपने क्या कुछ सुना या कुछ देखा ?"

हरि—"हाँ, अभी मैं सुन रहा था। मुझे कोई आवाज तोपके गोलेकीसी सुनाई दी। वह देर तक होती रही, किन्तु जान पड़ा बहुत दूर। और उसी समय पृथ्वी कम्पित हुई। इसीने मुझे चारों ओर देखनेके लिये मजबूर किया फिर मैंने प्रकाश देखा। यह यकबयक हुआ। शायद इसे दस मिनट न हुए होंगे।"

मुझे उस दिन सबेरेकी घटना याद आई; जब कि मैं गुफाके मुँह-पर सोया था। मुझे उस समय भूकम्प-सा प्रतीत हुआ था; जिसने कि अटलांटिकके थपेड़ोंको पहाड़ीपर और जोरसे डालना आरम्भ किया था। क्या उसका भी यही कारण तो नहीं था ?

हरिने फिर कहा—"और यही इस बातको भी स्पष्ट कर देता है, कि क्यों तुमने गुप्तसमुद्रका पानी गर्म और बुलबुला उठते देखा था। ओफ, कितनी भूल ! शायद पृथ्वीके उदरमें फिर अब गड़बड़ी मची है, अब उसकी खट्टी डकारें और उसकी गन्ध, पुराने क्रेटरोंसे आनी शुरू हो गई। और एक नया मुख-विवर कहीं और खुल गया। अब हमें डेलिंगकी उस बातका भी अर्थ लग गया, जो उसने कहा था—एक और सप्ताह बीतनेके बाद काम हाथसे बेहाथ हो जाता। उसे मालूम हो गया था कि यह आ रहा है।"

मैं चिल्ला उठा—"क्या, अब हमारे पास निकलनेका समय नहीं रहा ?

हरि—"इसके विषयमें निश्चित कौन कह सकता है ? यह भी सम्भव है कि इतना होनेके बाद भी कुछ न हो। किन्तु यह अच्छा है, कि प्रोफेसरके कहनेके मुताबिक, जितना जल्दी हो सके हमें यहाँसे रवाना हो जाना चाहिये। हमें अब अच्छी तरह भोजन करके एक घंटा आराम करना चाहिये फिर काम शुरू करेंगे।"

थोड़ी देरके बाद भी हमने देखा, कि अवस्था और भयंकर ही होती जा रही है, उसमें कमी होनेकी सम्भावना नहीं मालूम होती। दूर रेतीली खाड़ीकी ओर लपट और जोरसे उठती-सी मालूम होती है। अब हवा भी कुछ उठती-सी मालूम हुई। हमारी मोमबत्तियाँ एक झोंकेमें खतम हो गईं। और वास्तवमें उनकी रोशनी इस तीक्ष्ण प्रकाशमें भी पराभूत थी।

जिस समय हमलोग खाकर बेड़ेपर लौटे, तो मैंने देखा वहाँ कोई सफेद चद्दर-सी पड़ी है। उसपर कुछ काले-काले धब्बे भी हैं। मैंने उङ्गली लगाई, तो कुछ आटा-सा मालूम हुआ।

मैं—"मोहन! देखो, यह क्या है?"

मोहन—"क्यों, मालूम नहीं है?"

अब उसने अँगुलीसे उसीपर मोटे अक्षरोंमें लिख दिया—

"भागनेकी सूचना।"

मोहन—"यही वह राख है, जिसने 'पाम्पे' और 'हुकुंलेनियम'को दबा दिया।"

हमने रातभर बिना विश्रामके काम किया। कभी हमें अपनी मोमबत्तीका सहारा लेना होता था और कभी उस भीषण प्रकाशका। इस प्रकार हमें तीसरे दिन काम करनेकी आवश्यकता न पड़ी। सबेरा होते-होते 'शुभाशा' बिल्कुल तय्यार हो गई।

अष्टादश अध्याय

यात्रारम्भ

हमने सब काम इतनी जल्दी-जल्दी कर लिया, कि दोपहर पहिले ही बँगला हमारे पीछे था, और हम मुहानेकी ओर मुँह किये थे। अब दूसरे एक भयंकर गड़गड़ाहट सुनाई पड़ी, जिसके साथ ही पृथ्वी डगमगाने लगी। गुप्तसमुद्रका पानी हाथों ऊँचा हो गया और उसमें लाल, पीला, हरा, तरह-तरहका रंग दिखलाई पड़ने लगा। जब तब कोई बुलबुला नीचेसे जलतलपर उतरा आता था, और धीरेसे फूटकर वैसी ही दुर्गन्ध फैला देता था, जैसा कि मैंने पहिले देखा था। हमारे बेड़ेपर सभी चीजें लाद ली गई थीं, अब वह बिल्कुल यात्राके लिये प्रस्तुत था। कीलोंसे जड़ा हुआ मस्तूल उसके बीचमें खड़ा था।

मोहन—"भिनसहरेके समय हमने एक इंच मोटी राख गिरी देखी, यदि शाम तक और रह जाते तो निश्चय ही हम उसके अन्दर दब जाते।"

हरि—"बिल्कुल ठीक। किन्तु जो हवा इस राखको ला रही है, वही हमारी यात्रा—यहाँसे गुफा और फिर आगे समुद्र तक—के लिये भी बहुत उपयोगी है। अच्छा अब पालको तान दो।"

पाल पतली-पतली रस्सियोंके सहारे मस्तूलेपर चढ़ा दिया गया। हवाने हमारी मदद की, और अब "शुभाशा" शीघ्रतासे मुहानेकी ओर बढ़ने लगी। उसके नोकीले मुँहने उसकी गतिमें और वृद्धि कर दी; और वह गुप्तसमुद्रके बुलबुलोंको चीरता आगे-आगे बढ़ रही थी। इसी वक्त शुभाशाका मुँह दूसरे किनारेकी ओर होते देखकर, मोहन डाँड़ लिये माँगेपर जा बैठा, और मैं पूँछपर पतवार लिये जा धमका। जरासे इशारेपर शुभाशा फिर अपने सीधे रास्तेपर थी।

मोहन बोल उठा—"बोतलका मुँह बड़ा कुलकुला रहा है।" इसी समय मैंने भी जान लिया कि, हवा और बाढ़ अब मुहानेकी ओर बड़े जोरसे लौट रही है। इसीसे गुफाके मुँहसे बड़ी गर्जन सुनाई दे रही है। अब हमारा जहाज भी दौड़ने लगा था। वह एक तेज धारमें पड़ गया था, जिससे हिलाना-डुलाना अब हमारे काबूसे बाहरकी बात थी। मैंने अब पालका कोना खोल दिया, और वह झण्डेकी तरह उड़ने लगा।"

"वाह"—हरिने कहा, और अब हमलोग गुफाके अँधेरेमें थे। इस समय हमारे ज्ञानतन्तु बेकार और कलेजा मुँहको आया था। हमने कहा—अब क्या? जाने दो चाहे बेड़ा दीवारसे टकराये या बचे। 'कश्ती खुदापर छोड़ दो, लंगरको तोड़ दो।' हमने सुतलीकी उन चारों चक्कियों (बीड़ों)से कुछ भी काम लेना न चाहा, जो हमें समुद्रमें तैरती हुई मिली थीं, और जिन्हें कड़ी चीजके साथ धक्का लगनेसे रोकनेके लिये हमने "शुभाशा"में लटका रक्खा था।

अवस्थाकी भयंकरताने फिर हमें दौड़-धूपके लिये बाध्य किया। कभी मैं माँगाकी ओर दौड़ता था और कभी हरि पूँछकी ओर। शुभाशाको ठीक रास्तेपर रखनेके लिये हम खूब परिश्रम कर रहे थे। हरिके ललाटसे कितनी ही बार पसीनेकी बूँद टपकी तो भी हमारा सारा प्रयत्न उस वेगके सामने किसी गिनतीमें न था। यह शुभाशा हीकी भलमंसी थी, जो अगल-बगलकी धाराओंके बहकावेमें न पड़कर वह सीधे रास्तेसे दौड़ रही थी। मेरी समझमें तो यह हमारा बड़ा सौभाग्य था, जिसने महागर्त और महागुफासे हमें बचाया। नहीं तो जरा-सी चूकमें "शुभाशा" चूरचूर और हम सब अगाध जलधि तलमें होते।

उस पानीका घर्घर और अन्धकारमें हमलोग बहुत देर नहीं रहने पाये थे, कि अब हमें दूर एक अंडाकार सूराख दिखाई पड़ने लगा। हम जितना ही आगे बढ़ते थे उतनी ही आवाज और भी तेज होती जाती थी। उस समय हम स्तब्ध, निस्संज्ञ-से हो गये थे। जरा देर और,

और अब हम सुरंगसे बाहर प्रकाशमें थे, यहाँ वह भयंकर धार नील तरंगोंसे पर्यावृत अटलांटिकसे एक बड़ी गर्जन और सफेद गाजके साथ भिड़ रही थी। अब हमारे सामने प्रकाश, ऊपर नीला आकाश और चारों ओर ऊपर नीचे हिलती हुई सजीव नीली चादर थी।

"वाह, वाह"—यकबयक हम चिल्ला उठे। अब हमारे हृदयमें एक अद्भुत उत्साह और आनन्द मालूम होता था। हमको यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि, इतनी भयंकर तरंगमें भी हमारे पोत तलपर एक भी छिटकी नहीं आई है। "शुभाशा" अपनी प्रथम किन्तु अत्यन्त कठिन परीक्षामें उत्तीर्ण हो गई।

हरि—"पालको खड़ाकर दो माधव! अब उससे हमें बड़ी मदद मिलेगी।"

मैंने डाँड़को रख दिया—अब उसकी आवश्यकता भी न थी—और पालके निचले अंचलवाले बाँसको पकड़ लिया। फिर उसे मस्तूलमें कसकर बाँध दिया, और बगलकी रस्सी अपने हाथमें पकड़ ली। वायव्य कोणकी हवा जो अब भी चल रही थी, पालमें जुट पड़ी, और हमारी शुभाशा फिर अटलाण्टिकके विस्तृत नील गात्रपर दोड़ने लगी।

हरि मुँहपर दोनों हाथ फेरते हुए बोले—"धन्य भाग्य। क्यों भाई! हमारे लिये कैसा यह सुन्दर समय है?"

मैं—"हाँ, सचमुच। और मैं तुम कारीगरोंको क्या इनाम दूँ। तुम्हारा जहाज, वाकई गजबका निकला।"

मोहनने खुशीसे टोपी उतारकर नीचे रखते हुए—"तुम मुझे तारीफ करके फुलाना चाहते हो। लेकिन एक बात। जब यह बात इतनी आसान थी, तो एक बड़ी नावके सहारे भी वह दोनों आदमी बीस वर्ष पहिले क्यों नहीं बाहर निकल सके?"

मैं—"संयोग। वह धारमें पड़कर दीवारसे टकरा गये।"

हरि—"अरे, किस्मत समझो, जिसने हमें सुरक्षित बाहर निकाला।"

मोहन—"यह बेड़ा भी उस नावसे, बहुत भारी है, इसलिये यह आसानीसे मामूली धारके फन्देमें पड़ भी नहीं सकता। तिसपर हम बीचकी धारमें पड़ गये, जो बराबर हमारी मार्गवाहक रही।···किन्तु अब जरा टापूको तो देखो।"

अब हम समुद्रमें अपने कारास्थानसे धीरे-धीरे दूर होते जा रहे थे। गुफाका महान् प्रवेश-द्वार, अब बड़ी-बड़ी पहाड़ियोंकी आड़में हमारी आँखोंसे ओझल हो गया था। सारे द्वीपपर धुयें और भापका बादल छाया हुआ था, जो कि बाहरकी ओर श्वेत और हल्का किन्तु भीतर धीरे-धीरे काला होता गया था। यही वह पर्दा था, जिसने हमारे पिछले दिनोंको अशान्त-चिन्तापूर्ण बना दिया था। मालूम होता था, कि वह क्षण-क्षण बढ़ता ही जा रहा है। यद्यपि दीवारकी बाहरी ओर इसका आकार धीरे-धीरे विलीन होता-सा मालूम होता था, किन्तु भीतरसे उसके आनेकी गति धीरे-धीरे बढ़ती ही जा रही थी। 'रेतीली खाड़ी'के पारकी दीवारोंमें, जहाँ ज्वालामुखीने अपना नया मुँह खोला था, से वाष्प और गैसें बराबर निकलती ही आ रही थीं। यह धुंध इतनी भारी थी, कि यद्यपि हवा अच्छी तरह चल रही थी, तो भी वह उसको सिवाय सारे टापूपर फैला देनेके, उड़ा नहीं ले जा सकती थी।

हरि—" 'नाविक'ने लिखा है—'इस टापूपर सदा बादल और कुहरा छाया रहता है', और अब हम जानते हैं, कि यह बादल क्या है। यह निस्सन्देह क्रेटरसे निकले भाप और गैसोंका समूह है; और इन गैसोंमेंसे कुछ जहरीली भी हैं, इसीसे इस द्वीपमें कोई जीवित प्राणी नहीं रहता, और न हरी घास ही उगती है।"

मोहन—"मेरी समझमें ज्वालामुखी किसी भयंकर षड्यन्त्रकी तय्यारीमें है। मैं बड़ा आनन्दित हूँ, कि हमलोग जल्दी उसके चुंगलसे बाहर आ गये; नहीं तो यदि एक ही बार गुफाकी छत बैठ जाती, और गुफाका रास्ता बन्द हो जाता, तो हम फिर क्या करते?"

मैं—"करना आसान था, हम वहीं घुटकर मर जाते और क्या। यदि इस वायुने हमारा साथ दिया, तो हमलोग दक्षिण ओर जायँगे, किन्तु हमारे लिये तो उत्तर ओर हीका जाना अच्छा था, उधर किसी जहाजसे भेंट होनेकी सम्भावना थी।"

हरि—"हाँ, एक तरहसे। किन्तु इधर भी कोई हर्ज नहीं, हम धीरे-धीरे "कैप"—और "मौन्ते-वायदो"के रास्तेपर पहुँच जायँगे। उस रास्तेसे बहुतसा रोजगार चलता है। कुछ भी हो, इससे दूसरा हमारे अख्तियार हीमें क्या है।"

मैं—"हमारी चाल क्या होगी?"

हरि—"प्रायः चार कोस घंटा, और यह बहुत है।"

इसके बाद हमने कुछ न बातचीत की। मैंने देखा, दोनोंकी आँखें भारी हैं। उन्होंने रातभर जागते हुए बड़ी मशक्कतका काम किया था। मैंने कहा—

"मैं देख रहा हूँ, कि तुम दोनों नींदसे मतवाले हो गये हो। तुमने बड़ा परिश्रम किया है। और इस वक्त कोई आवश्यकता भी नहीं है, इसलिये झटपट सो जाओ। मैं बैठा देख रहा हूँ। बस सिर्फ पालको ठीक रखनेका काम है। पीछे न जाने कैसा काम पड़े।"

उन्होंने जरा आनाकानी की, किन्तु अन्तमें मेरी राय बहाल रही, और दोनों आदमी कम्बलोंपर पड़ रहे। थोड़ी ही देरमें वह खूब खर्राटे लेने लगे। मैं भी एक गद्दा खींचकर उसपर आरामसे बैठ गया। मुझे करना कुछ नहीं था, सिर्फ जब-तब पालको ठीक कर देना होता था। वास्तवमें इससे अधिक काम था भी नहीं क्योंकि हवा चल रही थी। यदि कहीं हवा बन्द हुई, तो शायद हम तीनों ही साथ सो सकेंगे।

मैंने पीछेकी ओर देखा। हम द्वीपसे पाँच मील दूर थे। धुआँ जल्दी-जल्दी बढ़ता जाता था। ईशान कोणमें एक जगहसे बराबर भाप उठ रही थी। यह लगातार उठकर रुक-रुककर फक-फक करती थी। यह

फक-फकाहट हर वक्त जल्द-जल्द होती जा रही थी। हर एक फकमें एक पिंडीभूत वाष्पराशि की उस फैले हुए बादलमें वृद्धि हो रही थी। ऊपर उठनेकी अपेक्षा उस बादलने सारे मधुच्छत्रको एक जालेकी चादरकी भाँति ढाँक लिया था। वह बादलकी चादर हवाके कारण सब जगह एक-सी न थी।

तब मैंने आगेकी ओर दृष्टि की। 'शुभाशा' पानीको चीरती आगे बढ़ रही थी। हवा तेज थी। यदि ऐसी ही रही तो तीन या चार दिनमें हमलोग जहाजोंके रास्तेपर पहुँच जायँगे। यह दो-तीन दिन हमारे लिये दो-तीन हफ्तेसे कम नहीं थे, क्योंकि हमारी रसद अत्यन्त परिमित थी। किन्तु यह प्रश्न मेरे विचारसे बाहरका था, इसलिये मैंने इसे छोड़ दिया। फिर मैंने अपने पिछले आश्चर्यमय जीवनपर एक दृष्टि डाली, जब कि मैं प्रथम-प्रथम मधुच्छत्रमें आया और जब मुझे बँगला दिखाई पड़ा।

मेरा ख्याल दौड़ने लगा। क्या वह दुष्ट अपने कियेकी सजा पायेंगे। क्या हम तीनों—दो लड़के और जरा सयाना—उन चाल-बाजोंको पकड़कर महाराजके खजानेको लौटा सकेंगे ! और क्या सचमुच जीते जी हम इस जलराशिसे पार हो सकेंगे ! अच्छा !

ऊनविंश अध्याय

जल भित्तिका

सूर्यास्तसे जरा ही देर पहिले हवा बन्द हो गई। जब मधुच्छत्र उत्तर ओर धुन्धमें मिल गया था। हम अब चारों ओर अनन्त जल-राशिसे घिरे हुए थे। समुद्र बड़ा शान्त था। वहाँ वीचियोंका स्पन्दन बिल्कुल मालूम न होता था। जान पड़ता था, जैसे गुप्तसमुद्र ही अपनी दीवारोंको फाँदकर चला आया है।

हरि—"यह ऐसी चीज है, कि जिसे मैं पसन्द नहीं करता। इस प्रकारकी पराकाष्ठाकी शान्तिके बाद एक भयंकर तूफान अवश्यंभावी है। चाहे तूफान न भी आ रहा हो, तो भी हमें जागरूक रहना चाहिये।"

मैं—"हाँ।"

अगले दिन भी हमें कोई काम करनेकी आवश्यकता न पड़ी। बेड़ेपरका वह दिन सचमुच, एक आलसी आदमीके लिये बड़े सौभाग्यका होता। हमलोग कम्बल ओढ़े चुपचाप लेटे थे। कभी थोड़ा सो लेते थे, कभी थोड़ी बात कर लेते थे और कभी कुछ सोचते थे। यद्यपि अब सूर्य अस्त हो गया, किन्तु सर्दी नहीं मालूम पड़ती थी। हवा निश्चल और गंभीर थी, किन्तु नभोमंडल बिल्कुल स्वच्छ था।

मोहनने एक बार चारों ओर देखा, और लम्बी साँस ली। वहाँ कुछ भी करनेको न था। तब उसने कम्बल अपने ऊपर ले लिया और सो गया। मैं हरिका अनुकरण करते हुए, रसदके एक बक्ससे लगकर आरामसे बैठा था। हम दोनों जब-तब क्षितिजोंको निहारते थे। कभी स्वच्छ आकाशमें जगमगाते हुए, तारोंको गिनने लगते थे। अब शशि-ने भी सिन्धुकी गोदसे धीरे-धीरे अपने प्रकाशमान मुखको बाहर किया।

धीरे-धीरे नीला आकाश और कृष्णाड दधि उसके मृदुहाससे परिपूर्ण हो गया। उसकी आभाके सन्मुख नक्षत्र पीले पड़ गये, किन्तु सम्पूर्ण जल-जगत दुगुनी चमकसे जगमगाने लगा। 'शुभाशा' बड़ी मन्दगति-से सुनहले सागरपर विचर रही थीं। हम उस दिगन्त व्यापी सौन्दर्य साम्राज्यको देखकर चकित थे। किन्तु, इसी समय हमारे ऊपर असा-रताका ध्यान प्रभाव जमाने लगा। यद्यपि हम इस शोभा-साम्राज्यमें थे, किन्तु इसके विलीन होते कितनी देर लगती है। थोड़ी देरके बाद वह शोभा साम्राज्य हमारे लिये असह्य हो उठा, उसमें हमें भय और वैषम्यकी गन्ध आने लगी। अपनी मानसिक अवस्थामें इस क्रान्तिको देखकर, हम अधिक देर तक चुप रहकर उस निर्दय प्रकृतिका एकान्त सेवन न कर सके। हमने मन्दस्वरमें बात करना आरम्भ किया।

मैं—"यह बहुत सुन्दर है, किन्तु तो भी इसमें वीभत्सता प्रतीत होती है। बेचारे भगेलू और उसके भीषण अवसानपर जरा ध्यान दीजिये तो।"

हरि थोड़ी देर चुप रहे, फिर बोले—"बार-बार मेरे दिलमें उसका ख्याल आता रहा है। शायद यही कारण है, कि वह मेरे स्वप्नमें आया। मैंने उसके विषयमें स्वप्न देखा—बड़ा विचित्र स्वप्न।"

मैं—"सुनूँ तो।"

हरि—"सचमुच वह बड़ा अच्छा स्वप्न है। मैं स्वयं उसे कहना चाहता हूँ। उसने मेरे ऊपर बड़ा प्रभाव डाला है, उसने मेरे विचार-में परिवर्त्तन पैदा कर दिया है। मैंने प्रथम निर्दयता और नृशंसता देखी थी, इसलिये मेरे हृदयमें जम गया था, कि मैं उन्हें दण्ड दिलानेके लिये प्रयत्न करूँ। स्वप्नमें बूढ़ा भगेलू मेरे पास आया—मैं समझता हूँ, यहीं इसी बेड़ेपर। जानते हो माधव! उसका मुख-मंडल आनन्दसे पूर्ण था, वह प्रफुल्लित था। उसने इस प्रकारकी प्रसन्नताके साथ बात की, कि मेरे लिये वह दिव्यदर्शन-सा मालूम हुआ। जानते हो, उसने क्या कहा?—"मेरे चित्तमें उनके लिये कुछ भी द्वेष और घृणा नहीं

है बाबू । उनका भला हो, उनने तो मेरे साथ बड़ा उपकार किया । उन्होंने मुझे कारागारसे मुक्त कर दिया, कि मालिकको पाऊँ । मैं उन्हें बड़े आनन्दसे मिला । पुष्पकारोही सारे मालिककी संगतिका आनन्द लूट रहे थे, एक मैं ही वंचित था । नहीं, मैं उनके प्रति किंचिन्मात्र भी द्वेष नहीं रखता, रत्ती भर भी नहीं । मैं उनका ऋणी हूँ ।

मैं—"क्या बस इतना ही था ?"

हरि—"हाँ, मैं इतने हीमें जाग उठा ।"

थोड़ी देर हम चुप रहे । फिर मैंने कहा—

"किन्तु वह अब भी वैसे ही अपराधी हैं ।"

हरि—"मैं मानता हूँ । और यह एक स्वप्नमात्र था, तो भी यह तस्वीरका दूसरा पहलू दिखालाता है ।"

"हाँ, सचमुच । मैं इसपर विचार करने लगा । सचमुच वृद्ध भगेलूकी एक बड़ी कैदसे रिहाई हुई । चाहे वह कैसे ही भयानक तौरसे हुई, किन्तु हुई रिहाई अवश्य । वह अब मनुष्य-समाजके योग्य न था । उसका मस्तिष्क और बातोंके लिये जवाब दे चुका था । उसे केवल अपने मालिक और उसकी सम्पत्तिका ख्याल था । ऐसे भी वह उसकी रक्षाके लिये जान देता, और वैसे भी उसीकी रक्षामें दिया । जो कुछ भी हो, उसकी मृत्यु उसके लिये बड़ी हितकर हुई ।"

नीरवता फिर छा गई । हरि ऊँघने लगे । थोड़ी देरमें उनका शिर उनके हाथोंपर गिर गया और वह निद्रामग्न हो गये । अब वह दोनों सो गये, मैं अकेला बैठा रह गया ।

हरिके सोते ही मैंने भगेलूका ख्याल भुला दिया । अब मैं दूसरी-दूसरी बातोंपर विचार करने लगा । इसी बीचमें मुझे अपने जेबमें किसी बोझका ख्याल आया । मेरे चित्तमें उसे देखनेकी इच्छा हुई । मैंने ऊपरकी जेबसे रूमालमें बँधी एक छोटी पोटली निकाली । मैंने धीरे-धीरे गाँठ खोली, और एक क्षणके बाद 'शैतानकी आँख' मेरी हथेलीपर विराजमान थी ।

उस दिन पाकेटमें रखनेके बाद, हम इतने कार्यासक्त थे, कि मुझे इसके निरीक्षणका याद ही न रहा। अब मुझे यह झूठ-मूठका बोझा बहुत बुरा-सा मालूम होने लगा। और यदि हरिने यत्नसे रखनेके लिये न कहा होता, तो मैं उसे निकालकर फेंक दिये होता। मैंने उसकी ओर आश्चर्यसे देखा। मुझे उसके साथ घृणा होने लगी। मेरे दिलमें ख्याल आया, यह वही चीज है जिसपर अनेक वीरपुरुषोंका रक्त लगा हुआ है। जब मैंने उसे उल्टा, तो यकायक उसका चिकना भाग ऊपर आ गया। चन्द्रकिरणके उसपर पड़ते ही, फिर वही हृदयवेधक चमक निकलने लगी, जिसे कि मैंने मुर्दोंकी गुफामें, उस कंकालगर्तमें देखी थी।

मैं स्तब्ध हो गया। एक ही क्षणमें मारे आतंकके मेरा हृदय शून्य हो गया। मेरे लिये आसानीसे स्वाँस लेना कठिन हो गया। फिर वह सारा ही गुफाका अतीत दृश्य एक-एक करके बड़े स्पष्ट रूपमें मेरे सन्मुख आना शुरू हुआ। अब यह अभागा काँच मेरे लिये असह्य हो चला। भयकी झोंकमें मेरा हाथ उठा, और शायद दूसरे क्षण वह समुद्रके अन्धकारपूर्ण गर्भमें सदाके लिये चला जाता, और वहाँ फिर उसे कोई आँखों देख न पाता, किन्तु उसी समय मोहनने करवट ली और कुछ बरबराया। अब मेरी अकल कुछ ठिकाने-सी हुई। मेरा भय चला गया। मैंने झट उसे फिर रूमालमें बाँध पाकेटमें रख लिया। किन्तु यह निश्चय कर लिया कि हरिके जागते ही, इसे उन्हें दे दूँगा। इस अभागे काँचके टुकड़ेको मैं कदापि न रक्खूँगा। हरि समझते हैं, इसका कुछ मूल्य है, यह साक्षीका काम देगा; किन्तु मेरे लिये तो इसकी साक्षी अवांछनीय, असह्य और भयंकर है।

यह मोहनका बरबराना था, जिसने उस काँचके टुकड़ेको बचा लिया, और साथ ही हम लोगोंको भी। क्योंकि उसी समय स्मरण आया कि मैं देख-भालके लिये बैठा हूँ। मैं एकाग्रचित्त हुआ, और उसी समय मैंने कुछ सुना। जिसके सुनते ही मैं झटपट उठ खड़ा हुआ। क्या यह कोई जहाज तो नहीं है?

चन्द्रिका इस समय अपने यौवनपर थी। शशि इस समय हमारे शिरपर थे। मैंने प्रकाशमार्गके साथ उत्तरकी ओर नजर डाली। निस्सन्देह मैं कुछ देख रहा था। क्या यह कोई श्वेतपाल उस सुनहले प्रकाशमें तो नहीं दिखलाई दे रहा है? मैंने अपने हाथोंसे अपनी आँखोंको मला, फिर देखा। फिर मैं अपने समीप वाले मस्तूलको पकड़कर खड़ा हो गया, और ध्यानसे देखने लगा। पाल? नहीं यह पाल नहीं हो सकता। यह चाँदनीमें सफेद कानविसकी चमक नहीं है। यह चमकीले फौलादपर किरणोंका प्रतिफलित होना ही हो सकता है। किरणें हिल रही थीं। हाँ, इधर ही आ रही थीं और जल्दी-जल्दी। इसका जो भाग किरणोंके सन्मुख पड़ता था वहाँसे चमक उठती थी। किन्तु अगल-बगलमें कुछ काली छाया-सी मालूम होती थी। इस अद्भुत और भयंकर वस्तुका मुँह हमारी ओर था। यह चुपचाप किन्तु शीघ्रतासे हमारी ओर आ रही थी।

मैं जल्दीसे बोल उठा—"मोहन! हरि! साथ ही मैंने अपने पैरसे हिलाया भी। मैं उस चीजकी ओरसे अपनी दृष्टिको हटाना नहीं चाहता था। हरिने उठकर जम्हाई ली। मोहनने नींदमें उँह-उँह किया।"

मैं—"खड़े हो जाओ, जल्दी!"

हरि झट खड़ा हो फुसफुसाये—"क्या है?"

मैं—"नहीं जानता देखो।"

कितनी जल्दी वह आई। अब वह सर्वव्यापक शान्ति एक भयंकर गम्भीर शब्दमें परिवर्तित हो गयी। दूरसे बहुत-सा जल आनेकी आवाज मालूम हुई। अब मैंने जाना—वह चन्द्रमाकी चमक थी, जो कि एक विशाल जलभित्ति—समुद्रीय महान् लहर—पर प्रतिफलित हो रही थी, उसकी गति बड़ी तेज थी। मैं चिल्ला उठा।

"लहर है लहर! पकड़ो जोरसे।"

मोहन उठकर झट मस्तूलको पकड़ लेट रहा। मैंने और हरिने दूसरे मस्तूलको जोरसे पकड़ लिया। इसी समय लहरने झटका दिया और बेड़ा उसपर टँग गया। यह बड़ा अच्छा था, जो हमने सभी चीजोंको बेड़ेके साथ खूब जकड़-बन्द कर दिया था। रसदके बक्स भी काँटी ठोंककर अचल कर दिया गया था।

मैं—"ठीक है न, मोहन।"

मोहन—"बिल्कुल ठीक, अपनेको ठीक रक्खो।"

हरिने चिल्लाकर कहा—"पकड़ो जोरसे अपने आपको।"

उसी वक्त बेड़ा काँपने लगा। हमलोग ऊपर-ऊपर चढ़ते गये। वहाँसे बेड़ा इतना सीधा हो गया था, कि हमारे कम्बलका कोना पानी-में गिरकर भीग गया, बेड़ेको मानो किसीने पहाड़पर चढ़ाकर पटक दिया। थोड़ी देर तक तो हमलोग निराश हो गये थे। बेड़ेकी टँगानेके साथ हमारे प्राण भी टँग गये थे। थोड़ी देर बाद अब लहरोंके ऊपर हमारा बेड़ा गेंदकी भाँति फेंका जाने लगा। पानी हमारे ऊपर थप्पड़ मारने लगा। अब बेड़ा कुछ सुरक्षित-सा मालूम होने लगा; यद्यपि समुद्रकी हलचल बन्द न हुई थी। अब मैं बैठकर एक लम्बी काली रेखाको निहारने लगा, जो कि दक्षिणकी ओर जा रही थी।

भयंकर आपत्ति आई, किन्तु उसने हमें छोड़ दिया। हम किस्मतके मारे हुओंपर उसने भी दया दर्शायी। मरेको मारना उसे भी कायरता मालूम हुई। थोड़ी देर तक तो मैं बौखला-सा गया, फिर घबराहटके साथ बोला—

"यह बड़ी भयंकर लहर थी, किन्तु वह चली गई, और हम अब भी यहाँ हैं।"

मोहन—"धन्य भाग! यह कहाँसे आई! यह इधर साधारण बात है क्या!"

हरि ही एकमात्र इसका उत्तर दे सकते थे। उन्होंने कहा—"नहीं यह साधारण बात नहीं है। ज्ञात होता है, यह किसी जलमग्न भूकम्पसे

उत्पन्न हुई थी, अथवा उसी टापूमें कोई बात हुई है। हाँ, सच यही बात है। मधुच्छत्रमें एक भूडोल आया, और सभी चीजें उसकी समुद्रके गर्भमें चली गई। खुद वह स्थान भी अब अगाध जल-राशिका स्थान हो गया। ऐसी बातें पहिले भी भूमंडलके अनेक भागोंमें हुई हैं।"

अब हम अच्छी तरह जानते हैं, कि उनका अनुमान ठीक था। उसी रातको जीर्ण ज्वालामुखीने अन्तिम जीवनके लक्षण प्रदर्शित किये, और अन्तमें वह सदाके लिये समुद्रतलमें विलीन हो गया। अब भी तुमको नक्शेमें 'मधुच्छत्र मग्न'के नामसे उस स्थानाका निशान मिलेगा। *

मोहन अब होशमें आने लगा था। उसने कहा—"अच्छा, यदि फिर इस आस-पासमें ऐसा हुआ। मुझे आशा है, हमारे रहते-रहते न होगा, और यदि हुआ भी तो लहरें न उठेंगी। मुझे समुद्रका रहना पसन्द है, किन्तु समुद्रके ऊपर रहना, समुद्रके नीचे नहीं, करोड़ों मन पानीके अन्दर नहीं।"

अब प्रकृतिमें परिवर्त्तन आ गया। अब वायुमंडलमें कुछ गति थी। सभी चीजें सजीव मालूम होती थी। चन्द्रमा फिर सुन्दर मालूम होने लगा। यहाँ तक कि 'शुभाशा'ने भी जलतरंगोंपर जाना आरंभ किया। अब हमें भी कुछ काम करनेका अवसर मिला। हरिने कहा—

"यह शायद अग्निकोण होगा, किन्तु पूर्वकी ओर कुछ अधिक झुका हुआ है, यद्यपि यह वह रुख नहीं है, जो हमें अभीष्ट है, किन्तु जोई हो सोई। अब पालको एकदम तान दो।"

पाँच मिनट भी नहीं होने पाया, कि बेड़ा फिर ठीक हो गया। उसने पानी काटते हुए आगे बढ़ना शुरू किया। अफ्रीकाके किनारेका उसने रास्ता लिया। यदि सौभाग्य हुआ तो, हम एक मास या कुछ अधिकमें वहाँ पहुँच सकेंगे। अब सब चीजोंको फिर कायदेसे जहाजके ढंगपर सजा दिया। हरिने बागडोर हाथमें ली। उन्होंने कहा—

"माधव! अब तुम्हारी बारी है, सो जाओ। हम और मोहन अब

ड्यूटीपर हैं। यदि फिर कोई बात हुई, तो हम तुम्हारी ही तरह तय्यार रहेंगे। अच्छा आराम करो।"

मैं इतनी गाढ़ निद्रामें और इतनी अच्छी तरह सोया, कि मुझको स्वप्न भी न आया। चन्द्रमा पश्चिममें समुद्रमें डूब गया। उषाके आगमनसे तारे पीले हो गये। उसी समय एक परिचित आवाज सुनाई दी—

"माधव! जाग जाओ, उठो, यह देखो।"

मुझे पहिले एक विचित्र छोटी-सी छाया पानीमें दिखाई पड़ी। फिर किसी चीजपर लहरोंको खेलते देखा। उसके चिकने पृष्ठपर चढ़ती है और फिर दूसरी ओर कूद जाती है। हरिने इसे एक मृत ह्वेल मत्स्य समझा था, किन्तु मेरे जगानेसे पूर्व उनके विचार परिवर्तित हो गये थे। वह वस्तु किसी समुद्री प्राणीसे कई गुना भारी थी। वह स्वयं न चलती थी, और हमसे तीन सौ गजकी दूरीपर पड़ी थी। हमारा हल्का बेड़ा नजदीक जा रहा था। अब प्रकाश भी अधिक हो चला था। हमने नजदीकसे आता और भी उसकी आकृतिको देखा।

मैं—"यह तो जहाज है।"

हरि—"हाँ, स्टीमर, और 'मौडमूलर'के आकारका। शायद हमने द्वीपको उनसे पहिले छोड़ा। उनको भाप तय्यार करना तथा और तय्यारी भी करना था, अथवा डेलिंगने अटकल लगानेमें गलती खाई, अथवा कप्तानने उसकी राय स्वीकार करनेमें गफलत की। अर्थात् वह द्वीप हीमें थे, जब कि अन्तिम घड़ी आ पहुँची। उस भयंकर लहरने स्टीमरको लौकेकी भाँति उठाकर उलट दिया, फिर उसे यहाँ तैरते छोड़ दिया। माधव! यह टूटा-फूटा नहीं है; यह लोहेकी कब्र है।"

तीन दिन तक हम इसी तरह चलते गये। चौथे दिन सवेरे हमारे दुःखका अन्त हुआ, जब कि 'पर्नम्बकू' हमें उठाकर रायो-दि-जेनेरोकी ओर चला।

विंश अध्याय

आँखका जानकार

"पर्नम्बकू"के पोतारोहियों और कप्तानने हमलोगोंके साथ बहुत ही सहानुभूति दिखाई। उस समय मेरी तबियत खराब थी, किन्तु, उन ब्राजीली बन्धुओंने सब तरहका प्रबन्ध स्वजन बान्धवोंकी भाँति किया। मैं पोर्तुगीजी नहीं जानता था, किन्तु अंग्रेजी द्वारा हमारा काम बखूबी चल जाता था। जब हम "रायोदि-जेनेरो", ब्राजीलकी राजधानीमें पहुँचे, तो "पर्नम्बकू"के कप्तानने हमारे सारे वृत्तान्तके साथ एक परिचय-पत्र दिया।

यद्यपि अस्वस्थ होनेसे मैं जहाजपर कुछकर न सका था, किन्तु मुझे प्रसन्नता हुई, जब मालूम हुआ, कि मेरे मित्रोंने बहुत-सी उपयोगी सूचनायें वहाँ संग्रह कर ली थीं। वहीं पता लग गया था कि, 'रायोंमें बौद्ध प्रचारक-संघका केन्द्रीय कार्यालय है। प्रधानभिक्षु भद्रघोष यहीं पर रहे हैं। 'रायों'में गर्मी अधिक थी, इसलिये, हम दो-एक दिन आश्रमपर ही रहे। पीछे प्रधानजी तथा एक दूसरे भद्रपुरुषकी भी राय हुई कि कुछ सप्ताह हमारा पेत्रोपोलिसमें रहना अच्छा होगा, यही वहाँ-का शिमला है। स्वामीजीने पेत्रोपोलिस के कार्यकर्त्ता श्रीधर्मरत्नजीको पत्र भी लिख दिया। हमलोग वहाँसे पेत्रोपोलिस गये। धर्मरत्नजी और उनकी धर्मपत्नी सुमित्रादेवी दोनों ही बड़े सज्जन हैं। उन्होंने हमारे साथ सौहार्द और सहानुभूति करनेमें हद कर दी।

तीन दिनके बाद मेरी तबियत बहुत कुछ अच्छी हो गई, और छठे दिनके बाद, तो यदि कोई बीमार कहता तो मुझे क्रोध हो आता। मैं अपना बहुत समय आश्रमके बागमें बिताता था। हरि और मोहन

दोनों रोज 'रायो' जाया करते थे, जिसमें हरि तो कामसे जाते थे, किन्तु मोहनका काम मेरे लिये सिर्फ तरह-तरहकी खबरें संग्रह करना था। मुझे मालूम हुआ, कि हरि हमलोगोंके घरकी यात्राके प्रबन्धमें हैं।

पेत्रोपोलिस आनेके सातवें दिन फिर घटनायें घटित होनी आरम्भ हुईं। उस दिन हरि, मोहनके साथ लौटकर न आये। और मोहन भी देरसे करीब तीसरे पहर आया था। उसके देखने मात्रसे मालूम हुआ कि आज कोई विशेष समाचार है। वह आकर मेरे पासकी कुर्सीपर बैठ गया। मैंने उत्सुकताके साथ पूछा—

"कोई खास बात है, क्या ?"

मोहन—"क्या खास बातकी बड़ी ख्वाहिश है ?"

मैं—"क्यों नहीं, तुम्हारी खबरोंमेंसे, दोस्त।"

मोहन—"तुम निस्सन्देह अब बहुत अच्छे हो किन्तु उस्ताद जरा भी कृतज्ञ नहीं होते।"

मैं—"कृतज्ञताके लिये भी तुम्हें अलग टिकट कटाना होगा, जानते हो भारत बहुत दूर है। अच्छा, जाने दो, सुनाओ क्या बात है ?"

अब मोहन बातें स्मरण करने लगा। फिर बोला—

"हरि दूसरी ट्रेनसे आ रहे हैं। वह किसीकी प्रतीक्षामें रुक गये हैं। उसे वह तुम्हें देखनेके लिये ला रहे हैं। मैं भी साथ ही आने वाला था, किन्तु फिर उन्होंने क्या सोचकर पहले भेज दिया। चलो तुम्हें खबर पहलेसे तो मिल गई।"

मैं—"मेरी तबियत तो इस देखा-देखीमें और खराब होती जा रही है। यह नहीं बताओगे कि कब चलना होगा ?"

मोहन—"जब तुम्हें जरा सभ्यता आ जाय। तुम्हें इसीसमय बीमार होनेको किसने कहा था ? अच्छा जो उत्सुक हो तो सुनो। हमारी यात्राका

प्रबन्ध हो गया है। ठीक आजसे छै दिन बाद डाकके जहाज 'दामिनी'-से हम रवाना होंगे; किन्तु यदि सर्कार अपने आपको तय्यार कर सकें तब ?"

मैं – "अच्छा, इसपर विचार किया जायगा। लेकिन यात्राके व्ययके लिये हमें जहाजपर काम करना होगा न ?"

मोहन—"जरूर, तिसमें आप तो पूर्णाहुति कर देंगे। नहीं बच्चू ! हम लोग मुसाफिरके तौरपर चलेंगे और फर्स्टक्लासके कमरेमें। सुना ?"

मैंने मेजपरसे एक अच्छा अंगूर चुना और उसे मोहनके कपारपर फेंक मारा। उसने कहा—"हाँ, यह पारितोषिक ? किन्तु हँसी नहीं बात बिल्कुल ठीक है। भारतीय राजदूतसे हरिने परिचय प्राप्त किया। फिर उनके द्वारा महारानी जगदीशपुरसे फोन द्वारा वार्तालाप हुआ। महारानीने पाँच हजार रुपयेका तारमनीआर्डर भेजा है। और हमलोग अब अमीरोंकी भाँति यहाँसे प्रस्थान कर रहे हैं।"

मैं—"उन्हें कथा सुनानेके लिये, क्यों ?"

मोहन—"इतना ही नहीं, वहाँ दूतागारमें लोग 'मौडमूलर'के नष्ट होनेकी बात कर रहे थे।

मैं—"वाह।"

मोहन—"इतना ही नहीं। भूकम्प तूफानका पता लगते ही, सैनिक जहाजोंने भूकम्पके प्रदेशकी पड़ताल आरम्भ की, कि देखें कोई यात्री जहाज खतरेमें तो नहीं। किन्तु सौभाग्यसे मधुच्छत्र प्रधान-प्रधान सामुद्रिक मार्गोंसे दूर है, इसलिये मार्गके जहाजोंको कोई हानि न हुई। उन्हीं जहाजोंमेंसे एकने 'मौडमूलर'के शवको पाया और टकरानेके खतरेसे बचनेके लिये तोप दागकर उसे डुबा दिया।"

मैं—"और उसको भी, जो कुछ कि उसमें था ?"

मोहन—"निस्सन्देह। उसे डेलिंगके रहस्यका पता न था। वहीं

मधुच्छत्रका रहस्य भी उसकी ही भाँति समुद्रतलमें विलीन हो गया और महाराजकी निधि भी।"

मैंने इसपर लम्बी साँस ली। किन्तु मेरे लिये वह निधि एक काल्पनिक निधि थी। मैंने कभी उसके विषयमें विशेष ध्यान न दिया था। महाराजकी दो अरबवाली बात मेरी समझसे बाहरकी बात थी। हाँ, बूढ़े भगेलूकी हत्या मेरे लिये दिल खौला देनेवाली बात थी। खैर, आखिरकार उन नरपिशाचोंको उनके योग्य ही दण्ड मिला।

इसके बाद मेरा दिमाग घर और कमलाकी ओर गया। मैंने तुरन्त पूछा—"मैं समझता हूँ, हरिने देशपर तार दे दिया होगा ?"

मोहन—"भारतीय राजदूतने हमारे आनेके बाद तुरन्त ही दे दिया। तुम्हें डरनेकी जरूरत नहीं। वह लोग जान गये हैं, कि तुम अब सुरक्षित हो।"

मोहनने ऐसा कहा, और उसे ऐसा ही विश्वास था किन्तु पीछे हमें मालूम हुआ, कि राजदूतके समझनेमें गलती हुई। उनका संक्षिप्त तार था—

"'शोभाके' यात्रियोंमेंसे तीन आदमियोंको एक बेड़ेपरसे एक जहाजने उठाया है, वह दक्षिणी अमेरिकाके एक बन्दरपर उतारे गये हैं। मोहनके सम्बन्धियोंने बड़ी आशा और उत्सुकतासे इस सूचनाको पढ़ा किन्तु मेरी बहिन बिल्कुल अँधेरे हीमें रही। बादमें फिर हमने पत्र भी न लिखा क्योंकि पहिली डाकके साथ हम रवाना होनेवाले थे।"

न जानते हुए मैंने कहा—"अच्छा तो ठीक। और भी कोई खबर ?"

मोहन—"बहुत आदमियोंकी जीभ इतनी बढ़ जाती है, कि चाहे उनका पेट भरकर फटता जाता हो, लेकिन उन्हें संतोष नहीं होता। अगर दोस्त तुम! और खबर चाहते हो, तो दूतागारमें उसकी कमी नहीं है, और तुम्हारा स्वागत भी वहाँ तुम्हारे योग्य ही होगा।"

हमारी बात अभी चल ही रही थी, कि हरि आ गये। बागमें न आ वह सीधे घरमें चले गये। वह अपने साथ एक लम्बे-चौड़े मध्य वयस्क भारतीय भद्र पुरुषको भी लाये थे।

मोहन—"हाँ, मेरी समझमें वह इन्हीं देवताजीके लिये रुके हुए थे।"

मैं—"दूसरे डाक्टर ?"

मोहन—"मैं समझता हूँ, कोई विशेषज्ञ। तुम्हारी दशा ऐसी है, और हमें दूसरे सप्ताह प्रस्थान करना है।"

मैं—"किन्तु, मैं उनसे नहीं मिलूँगा। मैंने पिछली बार हरिसे साफ कह दिया, कि यदि अब फिर कोई डाक्टर लाये तो मैं उससे एक बात भी न करूँगा। इसलिये आप ही जाकर, अपनी नस-नाड़ी दिखलाओ।"

हरि घरसे निकलकर हमारे पास आये। यद्यपि धूपसे आये थे, किन्तु उनका चेहरा वैसा ही शान्त और शीतल था। मुस्कुराते हुए उन्होंने पूछा—"कहो माधव! कैसा है ? मोहनने खबर सुनाई न ?"

मैं—"मैंने थोड़ी ही झपट पाई है। लेकिन तय्यारी जल्दी होनी चाहिये।"

हरि—"तय्यारी सब ठीक है। किन्तु महाराजके सम्बन्धकी बातके लिये कुछ परीक्षा और प्रतीक्षाकी आवश्यकता थी। वह भी ठीक हो गया। अब सिर्फ एक बात है, यदि तुम्हारी मर्जी हो, तो वह भी एक घंटेमें तै हो जाती है।"

मैंने लम्बी साँस ली और कहा—"मैंने आपसे कह दिया था, कि मैं अब किसी डाक्टरकी सूरत देखना नहीं चाहता। मैं अब भला चंगा हूँ। और वह मुझे फिर बीमार करेंगे। किन्तु जब तुम उसे लिवा ही लाये तो अब क्या करना है। किस बातका विशेषज्ञ है वह ? नाड़ी, दाँत, आँख या किसका ?"

अब आप पेज १८३ पर पढ़िये

कुछ सोचनेके बाद हरिने कहा—"आपकी आँख, महाशय! उसीकी परीक्षा की जायगी।"

मैं—"क्यों उसमें क्या है? जरा-सी उठ आई है। और यह तो मामूली बात है, सभीकी कभी-कभी उठ आती है।"

आखिर मैंने समझ लिया कि जान नहीं बचेगी। मैं वहाँसे उठा, और दोनों आदमी मुझे घरमें ले चले। नवागत सज्जन हमारे बैठकेमें कुर्सीपर बैठे थे। हरिने मुझे एक कुर्सी दी और आगत महाशयका 'महाशय विजयशंकर'के नामसे परिचय कराया। फिर हम दोनोंका 'वन्देमातरम्' हुआ।

हरि—"यही महाशय माधवस्वरूप हैं, महाशय विजयशंकर! आँखवाले। (फिर मुझसे) महाशय विजयशंकर एक मनोरंजक बात कहनेवाले हैं, क्या वह आरम्भ करें।"

मेरी तबियत इन सभी उपचारोंसे और बिगड़ती जा रही थी। मैंने अनमना-सा ही हूँ, कर दिया। अब महाशय विजयशंकरने आरम्भ किया—

"मैं आपसे मिलकर, महाशय माधवस्वरूप! बहुत प्रसन्न हुआ हूँ, और आपके उस भयानक जगहसे बचनेके लिये अनेक धन्यवाद, साधुवाद या बधाई। यह बड़ी विचित्र कथा है, किन्तु आज मुझे आपको कारबारके विषयमें एक सूचना देनी है। मैंने सचमुच आँखकी परीक्षा की है। ऐसी और भी कितनों की है। और अब मेरा सौभाग्य है, जो मैं अपनी परीक्षाका परिणाम आपसे कहने जा रहा हूँ।"

मैं हैरान रह गया। क्या सचमुच यह ऐसा विशेषज्ञ है, जो तीन गज दूरसे सिर्फ दो मिनटमें मेरी आँखोंकी परीक्षा कर डाले, और फिर उसका परिणाम बतावे? क्या बात है? जिस समय मैं इन्हीं आश्चर्यमें डालनेवाले विचारोंमें गोते खा रहा था, उसी समय मैंने अपने पीछे कुछ आवाज सुनी। मुझे मोहनके खाँसनेकी-सी आवाज सुनाई दी।

मैंने समझा आज कोई भारी मजाक होने जा रहा है। मैं अब सजग रहनेकी कोशिश करने लगा।

अब मैं स्थिर होकर प्रतीक्षा करने लगा। महाशय विजयशंकरको इस मजाकका कोई पता नहीं था। वह विचारे अपने काममें लगे थे। उन्होंने अपने पाकेटसे चमड़ेसे मढ़ा एक छोटा-सा डिब्बा निकाला, और उसे मेजपर रख दिया।

विजयशंकर—"शायद अपनी मेहनतका परिणाम दिखाना ही पहिले अच्छा होगा। मेरी समझमें बादमें बात करना आसान हो जायगा।"

उन्होंने डब्बेको स्प्रिंग दबाकर खोला। अब ढक्कन पीछे गिर गया। और वहाँ मखमलके ऊपर कोई चीज रक्खी जान पड़ी। कुछ चीज? अस्तु। यह और कुछ नहीं था, एक बड़ा हीरा था, मुर्गीके अंडे-से बड़ा और अत्यन्त ही सुन्दर। पहले-पहल देखनेमें कुछ न मालूम हुआ। मालूम हुआ कोई स्फटिकका काटा हुआ टुकड़ा है। किन्तु घरमें खिड़कीसे पूरा प्रकाश आ रहा था। जब मैंने उसकी ओर देखा तो मालूम हुआ, वह सारी किरणोंको जमाकर फिर उसे हजार गुना करके आश्चर्यमय नाना वर्णोंकी किरणोंके रूपमें देना चाहता है। अब मुझे मालूम हुआ, कि जैसे वह चीज जीवित हो गई। प्रकाश और किरणोंको बढ़ाते-बढ़ाते अन्तमें जान पड़ा जैसे बल उठी। कुछ ही क्षणमें मालूम होने लगा, कि कमरेके सभी प्रकाशोंकी वह नाभि है। महाशय विजयशंकरने उसे उठाकर जब हाथमें उलटा-पलटा, तो जान पड़ा प्रकाशकी झड़ी-सी लगी हुई है!

मैंने आश्चर्यके साथ कहा—"हीरा।"

फिर हरिने स्पष्ट करते हुए कहा—

"वही मुर्दोंकी गुफावाली तुम्हारी शैतानकी आँख है। सिर्फ कटाई

की गई है, और कुछ नहीं। महाशय विजयशंकर इसके विशेषज्ञ हैं। वह इसीके बारेमें तुमसे बातचीत करने आये हैं।

तब मुझे बातकी तह मालूम होने लगी। यह वही काँचका टुकड़ा है, जिसे कंकालगर्तसे ले आया था, और जिसे मैं समुद्रमें फेंक चुका था, यदि जरा ही देर और मोहन करवट न लेता! मुझे इसकी बात भूल ही गई थी।

विजयशंकर मुस्कुराकर बोले—"यह हमारे जैसे लोगोंके लिये बड़ी लालसाका काम है, यद्यपि इसमें जोखिम भी था। हमारी कोठ.के लोग इस गौरवके लिये अभिमान करते हैं, कि उन्हें इस महान् रत्नकी परीक्षा और काटनेका काम सौंपा गया। पहिली ही नजरमें हमलोगोंने मालूम कर लिया, कि यह एक हीरा है, शुद्ध और बड़े मूल्यका। हमारी सारी ही परीक्षाओंमें यह पक्का निकला। इतना ही नहीं इसमें कुछ और भी बातें हैं, जो इसे और हीरोंसे ऊँचा दर्जा देती है। देखिये मैं दिखाता हूँ।"

उन्होंने पत्थरको हाथमें लेकर मेरी ओर घुमाया। और एकदम उसी एक पहलसे एक लाल चमकीली रोशनी निकलने लगी, जो मानों उसके हृदयमें वर्त्तमान प्रचण्ड अग्निकी किरण थी। थोड़ी देर इसने मुझे चकित कर रक्खा, फिर मुझे कंकालगर्तका वह भीषण कांड, चन्द्रिकामें उसका प्रकाश, सभी बातें याद आने लगीं!

म० विजय—"आपने देखा, इस रत्नमें कुछ विशेषता है, जो इसके सौन्दर्य और मनोहारिताको बढ़ा देती है। हम बहुतसे प्रसिद्ध हीरोंको जानते हैं, किन्तु इस प्रकारका हीरा हमें कहीं न देखनेको मिला। यह संसारका एक बड़ा हीरा, एक सर्वोत्कृष्ट वज्रमणि आपके सन्मुख है। ब्राजीलकी हीरेकी खानें मशहूर हैं, किन्तु वहाँ भी ऐसा हीरा कभी नहीं मिला। इसका वजन करनेपर तीन सौ करेट है, अर्थात् 'कोहनूर' (१०३ करेट) और 'मुगल आजम' (२०० करेट) से भी अधिक।

यह शोभामें ब्राजीलसे निकले 'दक्षिणी तारा'से भी बढ़कर है। चूँकि हम इस रत्नकी महत्ताको समझते हैं, इसलिये दक्षिणी तारासे दूना दाम, अर्थात् पन्द्रह लाख रुपया इसके लिये आपको देनेको तय्यार हैं हमें आशा है कि आप महाशय माधवस्वरूप! इसे स्वीकार करेंगे। हम यह नहीं कहते, कि आपको इससे और अधिक कीमत न मिलेगी। किन्तु आपको हमारे जैसा ही ग्राहक खोजना होगा। आप जानते हैं, यह वह रत्न नहीं जो गलीके कोनेमें बेंचा जा सके।"

मैं[illegible] देर तक सोचना शुरू किया। फिर हरिसे पूछा—

मैं—"क्या कहते हो हरि?"

हरि—"यह तुम्हारे हाथकी बात है, मैं इसके विषयमें क्या कहूँ? किन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा, कि महाशय विजयशंकरने गैरवाजिब नहीं कहा है। यह श्री विजयशंकर कृष्णाप्रकाश कोठीके भागीदार हैं। ब्राजीलमें भी यह सबसे प्रसिद्ध जौहरी हैं।"